॥ श्रीः ॥

पूर्वमध्यमा प्रथम-खण्ड

सफलता-सोपान

वैकल्पिक विषय ('ख' वर्ग) हिन्दी

(पञ्चम प्रश्न-पत्र)

गद्यसंकलन

काव्यसंकलन

आधुनिक हिन्दी कहानियाँ

रस, छन्द एवं अलंकार

उत्तरप्रदेश संस्कृत शिक्षा परिषद द्वारा स्वीकृत पाठ्यक्रमानुसार

लघु एवं अतिलघु प्रश्नोत्तरसहित

लेखक

डॉ. शिवप्रसाद द्विवेदी

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

वाराणसी

परीक्षापयोगी प्रश्नोत्तरात्मक पुस्तकें
(संस्कृत भाषा में)

अभिधावृत्तिमातृका-सोपानम् । डॉ. शिवप्रसाद द्विवेदी
अलङ्कारशास्त्रस्येतिहासः । परमेश्वरदीन पाण्डेय
उत्तररामचरितादर्श । डॉ. रमाशंकर मिश्र
कर्पूरमंजरी-दीपिका । गौरीनाथ मिश्र 'भास्कर'
कादम्बरी-कला-प्रकाशः । डॉ. नरेश झा
कादम्बरी-सोपानम् । शिवप्रसाद द्विवेदी
काव्यप्रकाश-रहस्यम् । श्रीरामजीलाल शर्मा
काव्यमीमांसा-दीपिका । वेदव्यास शुक्ल (१-५ अध्याय)
काव्यशास्त्रस्येतिहास-सोपानम् । डॉ. शिवप्रसाद द्विवेदी
काव्यालङ्कारसूत्रवृत्तेः-आलोकः । (तृतीयाधिकरण प्रश्नोत्तरी) । डॉ. नरेश झा
किरातार्जुनीय-रहस्यम् । डॉ. कृष्णदेव प्रसाद । १-२ सर्ग, ३-६ सर्ग
कुमारसम्भवम्-रहस्यम् । श्री रामप्रसाद त्रिपाठी । १-२ सर्ग
कुवलयानन्दालोकः । डॉ. नरेश झा
चन्द्रकलानाटिका-रहस्यम् । परमेश्वरदीन पाण्डेय
चन्द्रालोक-रहस्यम् । मानवल्ली तथा बेताल
चम्पूरामायण सोपानम् । डॉ शिवप्रसाद द्विवेदी
तर्कभाषा-सोपानम् । डॉ. शिवप्रसाद द्विवेदी
तर्कसंग्रह-रहस्यम् । श्रीकीर्त्यानन्द झा
दशकुमारचरित-सोपानम् । डॉ. शिवप्रसाद द्विवेदी
ध्वन्यालोक-प्रकाशिका । श्री राजेन्द्रप्रसाद कोठ्यारी
नलचम्पू-रहस्यम् । पं. परमेश्वरदीन पाण्डेय
नाट्यशास्त्र-प्रश्नोत्तरी । १-७ अध्याय; १७-२० अध्याय
नैषधीयचरित-प्रश्नोत्तरी । मिश्र एवं द्विवेदी । १-५ सर्ग; १०-१३ सर्ग
परमलघुमञ्जूषा-सोपानम् । डॉ. शिवप्रसाद द्विवेदी
परिभाषेन्दुशेखर-सोपानम् । डॉ. शिवप्रसाद द्विवेदी
पाणिनीयशिक्षा-सोपानम् । डॉ. बालगोविन्द झा
प्रतिमानाटक-रहस्यम् । डॉ. रमाशंकर त्रिपाठी
प्रबन्धसङ्ग्रहः (व्याकरणाचार्य निबन्ध) । डॉ. ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
भट्टिकाव्य-दर्पणः । स्वामी प्रज्ञान भिक्षु । १-४ सर्ग, ५-८ सर्ग
भट्टिकाव्यालोकः । डॉ. रमाशङ्कर मिश्र । १४-१७ सर्ग; १८-२२ सर्ग
भारतीयसंस्कृति-सोपानम् । आचार्य शिवप्रसाद द्विवेदी
मध्यसिद्धान्तकौमुदी-चन्द्रिका । आचार्य विजयमित्रशास्त्री (१-४ खण्ड) सम्पूर्ण

जयं श्री राम

[illegible]

॥ श्रीः ॥

पूर्वमध्यमा प्रथम-खण्ड

सफलता-सोपान

वैकल्पिक विषय ('ख' वर्ग) हिन्दी

(पञ्चम प्रश्न-पत्र)

गद्यसंकलन
काव्यसंकलन
आधुनिक हिन्दी कहानियाँ
रस, छन्द एवं अलंकार

उत्तरप्रदेश संस्कृत शिक्षा परिषद द्वारा स्वीकृत पाठ्यक्रमानुसार
लघु एवं अतिलघु प्रश्नोत्तरसहित

लेखक
डॉ. शिवप्रसाद द्विवेदी

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

प्रकाशक

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

(भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के प्रकाशक तथा वितरक)
के. 37/117 गोपालमन्दिर लेन
पो. बा. नं. 1129, वाराणसी 221001
दूरभाष : 2335263

© सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन
नवीन संस्करण
मूल्य : 65.00

अन्य प्राप्तिस्थान

चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस

4697/2, भू-तल (ग्राउण्ड फ्लोर)
गली नं. 21-ए, अंसारी रोड
दरियागंज, नई दिल्ली 110002
दूरभाष : 32996391
ई-मेल : chaukhamba_neeraj@yahoo.com

❖

चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान

38 यू. ए. बंगलो रोड, जवाहर नगर
पो. बा. नं. 2113
दिल्ली 110007
दूरभाष : 23856391

❖

चौखम्बा विद्याभवन

चौक (बैंक ऑफ बड़ोदा भवन के पीछे)
पो. बा. नं. 1069, वाराणसी 221001
दूरभाष : 2420404

विषयसूची

काव्यसंकलन—व्याख्यात्मक भाग

१. सत् गुरु..सब अंग १
२. रामनाम के पटतरे..मन माँहि १
३. ज्ञान प्रकास्या..मिलिया जाइ २
४. माया दीपक.. उबरत २
५. गुरु गोविन्द तो एक हैं...करतार ३
६. भगति भजन हरि...सुमिरण सार ३
७. कबीर चित्त चमंकिया.. लेहु बुझाइ ४
८. अंखड़िया झाईं...पुकारि-पुकारि ४
९. सुखिया सब संसार...अरु रोवे ५
१०. जब मैं था तब हरि नहीं.. माँहि ६
११. यह तन कांचा कुंभ..आया हाथ ६
१२. ऐसी बानी बोलिए..सुख होय ६
१३. जिहिं घर साधु.. तिन माँहि ७
१४. कस्तूरी कुण्डलि...देखै नाहि ७
१५. हरि जननी मैं बालक तेरा...................................महतारी ८
१६. का माँगू कछु... जुबारी ८
१७. डगमग छाड़ि रे मन...चढ़ि ऊँचा ९
१८. चरन कमल बंदौ..तिहिं पाइ १०
१९. अविगत गति... सगुन पद गावै १०
२०. किलकत कान्ह...पियावत ११
२१. जसुदा कहाँ लौ.. काढ़त पानि १२
२२. सांवरेहि वरजति क्यों... फिरति वही १२
२३. मैं अपनी सब... प्रात जान मैं दैहौं १३
२४. मैया हौं न चरैहौं गाई.......................................ताहि रिंगाई १४

२५. स्याम कर मुरली..................................मुनि सब मोहति १४
२६. सखी री मुरली लीजै..................................राग की डोरि १५
२७. कहत कान्ह जननी..................................मोहि लगौ बजाई १६
२८. संदेशो देवकी सो..................................ह्वैहें करत संकोच १६
२९. उधौ मन न भये..................................नहीं जगदीस १७
३०. उधौ मन नहीं..................................कही करेंगी सोई १८
३१. उधौ जाहु तुमहि हम..................................नेकहुं मुसुकाने १८
३२. निरगुन कौन देस..................................मति नासी १९
३३. यह गोकुल गोपाल..................................गुनरासी १९
३४. ब्रज के विरही लोग दुखारे..................................ज्यों तारे २०
३५. उधौ मोहि ब्रज..................................जदु तात २०
३६. मुनि पद कमल बंदि..................................सकल सुदेश २०
३७. देखन नगरु भूप सुत..................................सत काम २१
३८. कहहु सखी अब को तनु..................................हरषीं सब नारि २२
३९. देखि राम छबि कोउ एक कहई..................................पुन्य पुराकृत भूरि २२
४०. बोली अपर कहे सखि नीका..................................परमानंद २३
४१. मन पछितैहें अवसर बीते..................................विषयभोग बहु धीते २४
४२. ऐसो को उदार जग मांही..................................कृपानिधि तेरो २५
४३. जाऊँ कहाँ तजि चरन तिहारे..................................अपनपौ हारे २५
४४. पुर ते निकसी रघुवीर वधू..................................चलीं जल च्वै २६
४५. जल को गये लक्खन हैं..................................वारि विलोचन बाढै २६
४६. साँवरे गोरे सलोने..................................सकुचात हियो है २७
४७. रानी मैं जानी अयानी..................................बनवास दियो है २७
४८. सीस जटा उर बाहु..................................रावरे को है २८
४९. सुनि सुन्दर बैन..................................मंजुल कंज कली २९
५०. बसो मेरे नैनन में..................................वच्छल गोपाल २९
५१. पायो जी म्हैं तो..................................हरख जग गायो २९
५२. माई री मैं तो लिया..................................पूरब जन्म को कौल ३०
५३. हरी तुम हरौ जन की भीर..................................कँवर पै सिर ३०

५४. हेरी मैं तो प्रेम दिवाणी..संवलिया होय ३१
५५. मेरो तो गिरधर गोपाल..तारो अब मोई ३१
५६. नहीं ऐसो जनम..जींवणा दिन चारि ३२
५७. सिच्छक हौं सिगरे जग को..केवल भिक्षा ३३
५८. कोदो सवाँ जुरतो भर..फूटी कठौती ३३
५९. द्वारका जाहुँ जू..चारि न चाँवरि मेरे ३४
६०. सीस पगा न झगा तन में..आपनो नाम सुदामा ३५
६१. बोल्यो द्वारपालक सुदामा नाम..दीनन सो माने को ३५
६२. ऐसो बेहाल बेवाइन सों पग..जल सों पग धोए ३६
६३. हाथ गह्यो प्रभु की कमला..होन भिखारी ३६
६४. जो रहीम उत्तम प्रकृति..भुजंग ३७
६५. टूटे सुजन सराहिए..टूटे मुक्ताहार ३७
६६. रहिमन अंसुआ..भेद कहि देइ ३७
६७. रहिमन निज मन की..कोय ३७
६८. रहिमन धागा प्रेम..गाँठ पारि जाय ३८
६९. रहिमन रहिला की भली..मैदा जरि जाय ३८
७०. तरुवर फल नहीं..सचहि सुजान ३८
७१. यों रहीम सुख होत..आँखनि को सुख होइ ३८
७२. रहिमन वे नर मर..नाँहिं ३९
७३. रहिमन ओछे नरन ते..भाँति विपरीत ३९
७४. मानुष हौं तो वही..कदम्ब की डारन ३९
७५. धूरि भरे अति सोभित..माखन रोटी ४०
७६. जा दिन तो वह नंद का..बिकाइ गयो है ४०
७७. कान्ह भये बस बाँसुरि..बाँसुरी रहिहैं ४१
७८. मोर पंखा सिर ऊपर..अधरा न धरौंगी ४१
७९. मेरी भव बाधा हरौ..दुति होय ४२
८०. सोहत ओढै पीत पट..पर्‌यो प्रभात ४२
८१. अधर धरत हरि के परत..इन्द्र धनुष रंग होति ४२
८२. या अनुरागी चित्त की..उज्जलु होइ ४२

८३. जगत् जनायो जिहिं............देखी जाहिं ४३
८४. सीस मुकुट कटि काछनी............बिहारी लाल ४३
८५. जप माला छापा तिलक............साँचे राँचे राम ४३
८६. चटक न छाड़त घटत............चोल रंग चीर ४४
८७. दुसह दुराज प्रजानु की............रवि-चंदु ४४
८८. संगति सुमति न............न होइ सुगन्ध ४४
८९. नर की अरु नल नीर............ऊँचो होय ४४
९०. जो चाहत चटक न घटै............नेह चीकने चित्त ४५
९१. कहै यहै श्रुति सुमत्यौ............राजा रोग ४५
९२. गंधी गंध गुलाब की............गाहकु कौनु ४५
९३. यह संग मैं लागियै............नहीं मानती हैं ४६
९४. पहिले बहु भाँति भरोसो............आपुहि धावति हैं ४६
९५. उधौ जु सूधो गहौ............माँग परी है ४७
९६. निज भाषा उन्नति अहै............हिय को सूल ४७
९७. इक भाषा इक जीव............सोग ४७
९८. प्रकृति यहाँ............तन मन वारति ४८
९९. सजति सजावति............बनि ठनि ४८
१००. मधुर मंजु छवि............तरुवर तृन ४८
१०१. जेठ के दारुण का घमण्ड............चलौ तो भलौ ४९
१०२. काली घटा का घमण्ड............समलंकृत कैसे भले ४९
१०३. जब हुए............गोकुल ग्राम को ४९
१०४. ककुभ सोभित गोरज............नलिनीश हैं ५०
१०५. अतसि पुष्प अलंकृत............कलकान्ति थी ५०
१०६. अति समुन्नत अंग............प्रतिबिम्बित हो रही ५०
१०७. विलसता कटि में............स्कंध था ५१
१०८. मकरकेतन के कलकेतु............अलकावली ५१
१०९. छलकती मुख की छवि............क्षणदा कर कान्ति सी ५१
११०. चारु चन्द्र की चंचल............पवन के झोंकों से ५२
१११. पञ्चवटी की छाया में............दृष्टिगत होता है ५२

११२. किस व्रत में है व्रती..जीवन है ५२
११३. मर्त्यलोक मालिन्य..माया ठहरी ५३
११४. क्या ही स्वच्छ चाँदनी............................शान्त और चुपचाप ५३
११५. है बिखेर देती वसुन्धरा..................................रूप झलकता है ५३
११६. हिमाद्रि तुंग शृंग से..................................बढ़े चलो बढ़े चलो ५४
११७. असंख्य कीर्ति रश्मियाँ..............................बढ़े चलो बढ़े चलो ५४
११८. परिश्रम करता हूँ दिन रात..वसन्त ५५
११९. मैंने झुक नीचे को देखा......................................श्रेष्ठ मानव ५५
१२०. तोड़ती पत्थर..मैं तोड़ती पत्थर ५६
१२१. हे चिर महान्..पर रागहीन ५७
१२२. नभ में गर्वित..कितने कठिन प्राण ५७
१२३. टूटी है तेरी कब समाधि......................................दुख में समान ५८
१२४. रूपसि तेरा घन केशपाश......................................घन केशपाश ५८
१२५. सौरभ झीना गीला..घन केशपाश ५९
१२६. उच्छ्वसित वक्ष पर..घन केशपाश ५९
१२७. इन स्निग्ध लटों से..घन केशपाश ५९
१२८. अरे निर्जन के..खोजते हो वन-वन ६०
१२९. विरह में अश्रु बहाकर..गति खोकर ६०
१३०. लघु लहरों से कम्पित..कातर निर्झर ६०
१३१. प्रियतम भूले मैं..क्या गाऊँ ६१
१३२. चाह नहीं मैं सुरबाला के..वीर अनेक ६१
१३३. प्राण अन्तर में लिए..उठ री जवानी ६२
१३४. श्वान के सिर हो..मस्तानी जवानी ६३
१३५. कोटि-कोटि कण्ठों से..............................हिन्दूस्तान हमारा है ६३
१३६. सतलज व्यास चिनाव..............................हिन्दूस्तान हमारा है ६४
१३७. है आसन्नभूत अति उज्ज्वल..........................हिन्दूस्तान हमारा है ६४
१३८. गरज उठे चालीस कोटि जन..........................हिन्दूस्तान हमारा है ६४

काव्यसंकलन—परिचयात्मक भाग

१. कबीरदास का संक्षिप्त जीवन-परिचय प्रस्तुत करते हुए उनकी रचनाओं पर प्रकाश डालिए । ६५

२. जायसी का संक्षिप्त जीवन-परिचय प्रस्तुत करते हुए उनकी रचनाओं पर प्रकाश डालिए ।

अथवा

ज़ायसी के जीवन, व्यक्तित्व और कृतियों पर प्रकाश डालिए । ६८

३. महात्मा सूरदास का संक्षिप्त जीवन-परिचय देते हुए उनकी रचनाओं पर प्रकाश डालिए ।

अथवा

सूरदास के व्यक्तित्व एवं कृतियों पर प्रकाश डालिए । ७०

४. तुलसीदास का संक्षिप्त जीवन-परिचय बताइये ।

अथवा

तुलसी के जीवनवृत्त पर प्रकाश डालिए । ७२

५. मीराबाई का संक्षिप्त जीवन-परिचय लिखिए । ७५

६. सुदामाचरित के प्रणेता नरोत्तमदास जी का जीवन-परिचय लिखिए । ७६

७. रहीम का जीवनवृत्त लिखिए । ७६

८. रसखान का साहित्यिक जीवन-परिचय लिखिए । ७७

९. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का जीवन-परिचय लिखिए । ७८

१०. श्रीधर पाठक का साहित्यिक जीवन-परिचय लिखिए । ७९

११. अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' का साहित्यिक जीवन-परिचय लिखिए । ७९

१२. राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त का साहित्यिक जीवन-परिचय लिखिए । ८०

१३. श्री जयशंकर 'प्रसाद' का साहित्यिक जीवन-परिचय लिखिए । ८१

१४. श्री सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' का साहित्यिक जीवन-परिचय अपने शब्दों में दीजिए । ८२

१५. श्री सुमित्रानन्दन पन्त का साहित्यिक जीवन-परिचय लिखिये । ८३

१६. सुश्री महादेवी वर्मा का साहित्यिक जीवन-परिचय लिखें । ८४

१७. श्री रामकुमार वर्मा का साहित्यिक जीवन-परिचय लिखें। ८४
१८. श्री रामनरेश त्रिपाठी जी का साहित्यिक जीवन-परिचय लिखिए। ८५
१९. माखनलाल चतुर्वेदी का साहित्यिक परिचय अपने शब्दों में लिखिये। ८६

आधुनिक हिन्दी कहानियाँ

१. बूढ़ी काकी नामक कहानी का सारांश लिखिये। ८७
२. ममता नामक कहानी का सारांश लिखिये। ८८
३. हार की जीत नामक कहानी का सारांश लिखिये। ९०
४. डॉ. शिवप्रसाद सिंह की कर्ज नामक कहानी का सारांश लिखिये। ९२
५. डॉ. श्रीप्रसाद द्वारा लिखित एक काली शाम का सारांश लिखिये। ९३
६. परदा नामक कहानी का सारांश लिखिये। ९४
७. प्रायश्चित्त नामक कहानी का सारांश लिखिये तथा उसका उद्देश्य बताइये। ९५
८. पूर्ति शीर्षक कहानी का सारांश लिखिये। ९७
९. शरणागत शीर्षक कहानी का सारांश लिखिये। ९८

रस-छन्द-अलंकार

१. रसनिष्पत्ति का प्रकार बतलाइये। ९९
२. रस कितने प्रकार के होते हैं ? १००
३. स्थायी भाव किसे कहते हैं ? १००
४. स्थायी भाव के कितने भेद होते हैं ? १००
५. विभाव किसे कहते हैं ? १००
६. अनुभाव किसे कहते हैं ? १००
७. सञ्चारी भाव किसे कहते हैं ? १००
८. शृंगार रस के लक्षण तथा भेद बतलाइये। १००
९. हास्य रस का सोदाहरण निरूपण कीजिए। १०१
१०. वीर रस का सोदाहरण निरूपण कीजिए। १०१
११. रौद्र रस का सोदाहरण निरूपण कीजिए। १०२
१२. भयानक रस का सोदाहरण निरूपण कीजिए। १०२

१३. वीभत्स रस का सोदाहरण निरूपण कीजिए । १०२
१४. करुण रस का सोदाहरण निरूपण कीजिए । १०३
१५. अद्भुत रस का सोदाहरण निरूपण कीजिए । १०३
१६. शान्त रस का सोदाहरण निरूपण कीजिए । १०३
१७. वात्सल्य रस का सोदाहरण निरूपण कीजिए । १०४
१८. छन्द को पारिभाषित कीजिए । १०४
१९. छन्द के अंग का निरूपण कीजिए । १०४
२०. छन्दःशास्त्र के आठ गणों तथा गुरु-लघु का निरूपण कीजिए । १०४
२१. छन्दों के मुख्य भेदों का निरूपण कीजिए । १०५
२२. प्रधान-मात्रिक छन्दों का निरूपण कीजिए । १०५
२३. चौपाई का निरूपण कीजिए । १०५
२४. रोला छन्द का निरूपण कीजिए । १०५
२५. हरिगीतिका छन्द का निरूपण कीजिए । १०५
२६. बरवै छन्द का सोदाहरण निरूपण कीजिए । १०६
२७. दोहा का सोदाहरण निरूपण कीजिए । १०६
२८. सोरठा का सोदाहरण निरूपण कीजिये । १०६
२९. कुण्डलिया छन्द का निरूपण कीजिए । १०६
३०. इन्द्रवज्रा छन्द का निरूपण कीजिए । १०७
३१. उपेन्द्रवज्रा छन्द के उदाहरण और लक्षण लिखिए । १०७
३२. वसन्ततिलका छन्द का सोदाहरण निरूपण कीजिए । १०७
३३. मन्दाक्रान्ता छन्द का सोदाहरण निरूपण कीजिए । १०८
३४. मत्तगयन्द सवैया का सोदाहरण निरूपण कीजिए । १०८
३५. सवैया छन्द का सोदाहरण निरूपण कीजिए । १०८
३६. कवित्त छन्द का सोदाहरण निरूपण कीजिए । १०८
३७. अलंकार का लक्षण लिखिये । १०९
३८. शब्दालंकार किसे कहते हैं ? १०९
३९. अनुप्रास अलंकार तथा उसके भेदों का निरूपण कीजिए । १०९
४०. शब्दालंकार और अर्थालंकार में भेद बतलाइये । १०९
४१. यमक अलंकार का सोदाहरण निरूपण कीजिए । ११०

४२. उपमा अलंकार के तत्त्वों की विवेचना कीजिए। ११०
४३. निम्नांकित अलंकारों का सोदाहरण निरूपणं कीजिए– ११०

१. रूपक
२. उत्प्रेक्षा
३. सन्देह
४. दृष्टान्त
५. अनन्वय
६. अतिशयोक्ति

गद्यसंकलन— व्याख्यात्मक भाग

१. सच पूछिये तो इस बात..........................बात की वड़ी बात है। ११३
२. हाँ बात की बात इतनी बड़ी है कि.........मानने पर कटिबद्ध रहते हैं। ११३
३. यहाँ तक कि प्रेमसिद्धान्ती.........................वंचित नहीं रहने देंगे। ११४
४. जब परमेश्वर तक बात का...................इत्यादि सब बात ही तो हैं। ११५
५. बात के काम भी सब इसी.................कुराही इत्यादि बन जाते हैं। ११५
६. बात का तत्त्व समझना............................की बात का असर नहीं। ११६
७. हम लोगों का जीवन सदा..................................कोई चिन्ता नहीं। ११७
८. धर्मपालन करने के मार्ग में....................................भय न रहेगा। ११७
९. बहुत से लोग नीति और..कम नहीं है। ११८
१०. संसार में बहुत से ऐसे नीच..............................कुत्सित कर्म हैं। ११९
११. इसीलिए हम सब लोगों.................................सुखी बने रहेंगे। ११९
१२. मित्रों के चुनाव की उपयुक्तता.................................चाहे देवता। १२०
१३. विश्वासपात्र मित्र से बड़ी भारी............................उत्साहित करेंगे। १२१
१४. मित्र केवल उसे नहीं कहते.......................................लाभ समझे। १२१
१५. मित्रता के लिए यह.....................................मित्रता हो सकती है। १२२
१६. मित्र का कर्त्तव्य इस प्रकार बतलाया.......................धोखा न होगा। १२२
१७. उनके लिए फूल-पत्तियों में........................साधना करना चाहिए। १२३
१८. कुसंग का ज्वर सबसे भयानक..............................उठाती जायेगी। १२४
१९. संसार में ऐसे मनुष्य भी.......................................तैयार रहते थे। १२४
२०. वही हरा-भरा मैदान था..अश्रुप्रवाह था। १२५
२१. मैं नहीं जाता, मेरी बला..कई लड़के हैं। १२६
२२. पर उसके मन की....................................विलम्ब घातक था। १२६
२३. वहाँ उनके धर्मग्रन्थों...........................एकता की झलक दिखायेंगे। १२७

२४. वहाँ की उपासना में.................................भी की जायेगी। १२८
२५. उस महान समन्वय मन्दिर.................................वही वही होगा। १२८
२६. उसका यौवन शोण के समान.................................कहाँ अन्त था। १२९
२७. तो क्या आपने.................................लेकर क्या करेंगे ? १३०
२८. हे भगवान् तब के लिए.................................अंधा बना रही है। १३०
२९. ममता तो फिर मैं.................................करना है। १३१
३०. जाओ भीतर ....छोड़ दूँ। १३१
३१. अश्वारोही ही पास आया.................................मैं जाती हूँ। १३२
३२. लिखने की एक विशेष मानसिक.................................विषय नहीं। १३३
३३. जो तरुण संसार.................................बना रहता है। १३४
३४. मनुष्य जाति के काल में.................................माना गया है। १३४
३५. हिन्दी में.................................सुहावन होते हैं। १३५
३६. यदि वे रीतिकालीन काव्यों की.................................पुलकित हुआ। १३६
३७. सायंकाल तक.................................बनी हुयी थी। १३७
३८. मैं अपने तहखाने.................................उपस्थित हो गया। १३८
३९. मनु की भाँति.................................नारायण बना। १३९
४०. यह केवल एक.................................ही हो जाता है। १४०
४१. जिन हालातों में.................................अधिक व्यापक है। १४१
४२. खेल में हम समभाव.................................होना चाहिए। १४१
४३. यहाँ के खेलों.................................सहकारिता बढ़ेगी। १४२
४४. शरीर स्वच्छ रखो, उसी प्रकार...............चिरतरुण हैं, चिरंजीव हैं। १४३
४५. गुरु नानक ने प्रेम.................................परम लक्ष्य है। १४४
४६. बाह्य आडम्बरों को.................................बन्धन के हेतु हैं। १४५
४७. भगवान् जब अनुग्रह.................................कहते हैं। १४५
४८. सोनजुही में आज.................................प्राणी की खोज। १४६
४९. अचानक एक दिन.................................अवमानित। १४७
५०. हमारे बेचारे पुरखे.................................प्रयुक्त करते हैं। १४७
५१. देश का शायद.................................ध्यान देना। १४८
५२. दृढ संकल्प से.................................पर निर्भर है। १४९

५३. आँखें चार हुईं..आकाशकुसुम था। १५०
५४. शुद्ध और रोचक..सुना देतीं। १५१
५५. वह भले ही..कर लेती थीं। १५१
५६. अध्यक्षीय भाषण किसी..सिद्ध होता था। १५२
५७. ईर्ष्या का यही..भोगनी पड़ती है। १५२
५८. ईर्ष्या के बड़ी..दिया जाऊँगा। १५३
५९. ईर्ष्या मनुष्य का..योग्य ही न हों। १५४
६०. आप कहेंगे कि..आनन्द होता है। १५४
६१. ईर्ष्या का सम्बन्ध..हरकुलिस से। १५५

गद्यसंकलन— परिचयात्मक भाग

१. प्रतापनारायण मिश्र जी का साहित्यिक जीवन-परिचय लिखिए। १५६
२. श्यामसुन्दर दास जी का साहित्यिक जीवन-परिचय लिखिए। १५७
३. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का साहित्यिक जीवन-परिचय लिखिए। १५९
४. मुंशी प्रेमचन्द जी का साहित्यिक जीवन-परिचय लिखिए। १६०
५. वियोगी हरि के साहित्यिक जीवन का संक्षिप्त परिचय दीजिए। १६१
६. हरिभाऊ उपाध्याय का साहित्यिक जीवन संक्षेप में लिखिये। १६२
७. जयशंकर प्रसाद के साहित्यिक जीवन के विषय में संक्षेप में लिखें। १६४
८. पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी के साहित्यिक जीवन के विषय में लिखें। १६५
९. श्री गुलाबराय जी के साहित्यिक जीवन का परिचय दीजिए। १६५
१०. डॉ. राजेन्द्र प्रसाद का साहित्यिक जीवन लिखिए। १६६
११. श्री विनोवा भावे के साहित्यिक जीवन के विषय में संक्षेप में लिखें। १६७
१२. हजारीप्रसाद द्विवेदी के साहित्यिक जीवन को संक्षेप में लिखें। १६८
१३. सुश्री महादेवी वर्मा का संक्षेप में साहित्यिक जीवन परिचय लिखिए। १७०
१४. श्री रामवृक्ष बेनीपुरी जी का संक्षेप में साहित्यिक जीवन-परिचय अपने शब्दों में लिखिए। १७१
१५. श्रीराम शर्मा के साहित्यिक जीवन का संक्षेप में परिचय दीजिए। १७२
१६. काका कालेलकर के साहित्यिक जीवन-परिचय का संक्षेप में अपने शब्दों में उल्लेख कीजिए। १७३

१७. विनयमोहन शर्मा के साहित्यिक जीवन के विषय में संक्षेप में लिखें। १७४
१८. रामधारी सिंह दिनकर के साहित्यिक जीवन के विषय में संक्षेप से लिखें। १७५
१९. श्री भगवतशरण उपाध्याय के साहित्यिक जीवन के विषय में संक्षेप में लिखें। १७६
२०. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय के साहित्यिक जीवन के विषय में संक्षेप में लिखें। १७७
२१. श्री धर्मवीर भारती के साहित्यिक जीवन के विषय में संक्षेप में अपने शब्दों में लिखें। १७७
२२. जयप्रकाश भारती के साहित्यिक-जीवन का संक्षेप में परिचय दीजिए। १७८
लघु एवं अतिलघु प्रश्नोत्तर १८०-१९५

***

सफलता सोपान

काव्यसंकलन-व्याख्यात्मक भाग

साखी

(१) सतगुरु--सब अंग।।

संदर्भ— यह पद्य काव्य संकलन के 'साखी' शीर्षक से अवतरित है। इस पद्य के प्रणेता कबीर दास जी हैं।

इस पद्य में इन्होंनें आचार्य की कृपा का महत्त्व बतलाया है। मानव जीवन का तब तक कल्याण संभव नहीं है जब तक उस पर आचार्य की कृपा न हो। आचार्य ही कृपा करके मानव को ज्ञान का उपदेश देते हैं, जिससे जीव संसार के बंधन से मुक्ति प्राप्त कर लेता है।

भावार्थ— श्री कबीर दास जी कहते हैं कि जब हमारे सद्गुरु हम पर प्रसन्न हुए तो हम को एक ऐसे ज्ञान का उपदेश दिए कि, हमारे जीवन में परमात्मा के प्रति प्रेम का संचार हो गया। मेरे तत्त्वज्ञान विहीन नीरस जीवन में परमात्म-प्रेम रूपी सरसता का संचार हो गया। मेरा सम्पूर्ण शरीर परमात्म-प्रेम से परिपूर्ण हो गया।

(२) रामनाम के पटतरे--मन माँहि।।

सन्दर्भ— प्रस्तुत पद्य काव्य संकलन के साखी शीर्षक से गृहीत है। इसके प्रणेता सन्त कबीरदास जी हैं।

प्रसंग— इस पद्य में कबीर दास जी ने श्रीराम नाम की महिमा को बतलाया है। तत्त्वज्ञान तो गुरु से ही संभव है गुरु की कृपा के बिना तत्त्व ज्ञान नीरस हो सकता। आचार्य ही प्रसन्न होकर राम-नाम का उपदेश देते हैं।

भावार्थ— कबीरदास जी कहते हैं कि श्रीराम-नाम का उपदेश सद्गुरु ही देतें हैं; किन्तु संसार की कोई भी ऐसी वस्तु नहीं है जिसे आचार्य द्वारा दिये गए उपदेश के बदले में दिया जा सके। गुरु तो परम् संतोषी होते हैं। वे इसके बदले में कुछ लेना भी नहीं चाहते हैं। किन्तु हमारे मन में इस प्रकार की भावना बनी

रहती है कि इस आचार्योपदेश के बदले में उन्हें मैं क्या दूँ? यों तो रामनाम ए अनमोल वस्तु है। उसका मूल्य नहीं आँका जा सकता।

विशेष— इस दोहे में सन्त कबीर ने (१) रामनाम की महिमा बतलाया है (२) सद्गुरु को परम संतोषी और शिष्य का कल्याणकारी बतलाया है। (३) इस दोहा छन्द है।

(३) ज्ञान प्रकास्या---------------------------------मिलिया जाइ।। ३

सन्दर्भ— यह पद्य काव्य-संकलन के 'साखी' शीर्षक से अवतीर्ण है। इ पद्य के रचयिता भाषा के शाहँशाह सन्त कबीर हैं।

प्रसंग— इस पद्य में वे इस बात को स्पष्ट करते हैं कि सद्गुरु की प्राप्ति मानव को अपने पुरुषार्थ से नहीं संभव है। जब परमात्मा की कृपा होती है तब सद्गुरु की उपलब्धि होती है। सद्गुरु ही अपने उपदेश के द्वारा शिष्यों के ज्ञा को प्रकाशित करने में समर्थ होते हैं।

भावार्थ— कबीरदास जी कहतें हैं कि ऐसा गुरु जो शिष्य के ज्ञान क प्रकाशित करने में समर्थ हो उसको कभी भी भूलना नहीं चाहिए। जब जीवन क परम् कल्याण होता है तब ही सद्गुरु की प्राप्ति होती है। जब परमात्मा जीव ऊपर कृपा करता है तब कहीं जाकर सद्गुरु की प्राप्ति होती है। परमात्मा क कृपा के बिना सद्गुरु नहीं मिल पाते।

विशेष— इस पद्य में, (१) सद्गुरु की प्राप्ति की परमात्मा की कृपा से संभ बतलाया गया है, (२) इसमें दोहा छन्द है तथा (३) इस दोहे की भाषा सधुक्कड़ी है

(४) माया दीपक---------------------------------उबरंत।।४।

सन्दर्भ— यह पद्य काव्य-संकलन नामक ग्रंथ के 'साखी' शीर्षक से उद्धृ है। इस पद्य के प्रणेता भाषा के शाहनशाह सन्त कबीर हैं।

प्रसंग— इस पद्य में कबीर ने एक लौकिक उदाहरण के द्वारा गुरू की महि का वर्णन किया है। लोक में देखा जाता है कि जब दीपक जलता है तो पतंगे की उड़-उड़ कर उसी पर आते हैं और जलकर मर जाते हैं। उसी तरह मानव एक पतंगें के समान है। वह माया के भोग का लालची होता है। विषयोपभोग क प्रत्याशा में बार-बार माया के जाल में फंसता है। जिस पर आचार्य कृपा करते वही जीव उस माया के आकर्षण से बच पाता है।

भावार्थ— माया एक दीपक के समान है और विषयोपभोग करने का आद मानव एक कीड़े के समान है। जिस तरह कीड़े घूम-घूम कर दीपक पर ही गिर

रहते हैं। वे यह नहीं जानते हैं कि मैं इस दीपक पर गिरने से जलकर मर जाऊंगा, उसी प्रकार मानव भी बार-बार अन्यान्य विषयों का भोग करने के लिए उसकी ओर बार-बार- प्रवृत्त होता रहता है। वह विषय के दोषों को नहीं जानने के कारण उसी में अपना जीवन विनष्ट करता रहता है। वह मानव जीवन के परम् उद्देश्य को नहीं जान पाता है। हाँ जिन जीवों को गुरु का ज्ञान प्राप्त हो जाता है ऐसे एकाध ही जीव हैं जो माया के जाल से बच पाते हैं।

विशेष— इस पद्य में (१) दोहा छन्द (२) दृष्टान्तालंकार तथा (३) आचार्य की कृपा का वर्णन है।

(५) गुरु गोविन्द तो एक हैं------------------------------करतार।।

सन्दर्भ— यह पद्य काव्य संकलन के 'साखी' शीर्षक कविता से उद्धृत है। इस पद्य के प्रणेता निर्गुणवादी सन्त कबीर दास जी हैं।

प्रसंग— इस पद्य में निर्गुवादी सन्त कबीर सद्गुरु तथा परमात्मा में अभेद का प्रतिपादन करतें हैं। श्वेताश्वरोपनिषद में भी कहा है-**'यथा देवे तथा गुरौ'** अर्थात परामात्मा तथा गुरु दोनों में एक समान भक्ति करनी चाहिए। अन्यत्र भी गुरू को ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर तथा परब्रह्म बतलाया गया है-

गुरुर्ब्रह्ममा गुरुर्विष्णुः गुरूर्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात् परं ब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः।

भावार्थ— निर्गुणवादी सन्त कबीरदास जी कहते हैं कि परमात्मा तथा सदगुरु दोनों एक ही तत्त्व हैं। दोनों में कोई तात्त्विक भेद नहीं है। इनमें यदि भेद है तो केवल आकार का है। गुरु और परमात्मा दोनों मानव के अहँकार को मिटाने का प्रयास करते। मनुष्य का जब अहंकार मिट जाता है तो वह जीवित रहकर ही इस संसार के लिए मर जाता है। उसका संसार और संसार के विषयों के प्रति आकर्षण समाप्त हो जाता है। वह सबों से अपने को हीन समझने लगता है। जो मनुष्य इस तरह का निरहँकारी हो जाता है, वही परमात्मा को प्राप्त करने का सच्चा अधिकारी होता है।

(६) भगति भजन हरि---------------------------सुमिरण सार।।

सन्दर्भ— यह पद्य काव्यसंकलन नामक ग्रन्थ के 'साखी' शीर्षक से अनुगृहीत है। इस पद्य के प्रणेता निर्गुण रामभक्त सन्त कबीर हैं।

प्रसंग— इस पद्य में कबीरदास जी संसार के सार तथा असार, सुखद एवं

दुःखद वस्तुओं का उल्लेख करते हैं। मानव जीवन का सार है परमात्मा की भक्ति उसका सतत चिन्तन। उसी से मानव जीवन का कल्याण संभव है। अन्य सारी बातें तो दुख देने वाली ही हैं।

भावार्थ— कबीरदास जी कहते हैं कि इस संसार में दो प्रकार की वस्तुएँ हैं सुखद एवं दुखद। परमात्मा की भक्ति परमात्मा का भजन तथा परमात्मा का नामस्मरण ये तीनों चीजें सुखद हैं। इनसे ही वास्तविक सुख की प्राप्ति संभव है। इन सबों से भिन्न जो रूप, रस, गन्ध, एवं स्पर्श एवं शब्द से जिस सुख की प्रतीति होती है, वह तो सुखाभास है। वस्तुतः उन सब से अनेक प्रकार के दुःख ही मिलते हैं। इसलिए कल्याण चाहने वाले मनुष्य को चाहिए कि वह मन, कर्म, और वाणी तीनों से परमात्मा की भक्ति करे, उसका भजन करे तथा उसके नाम का स्मरण करे। कबीर दास जी कहते हैं कि परमात्मा के भजन का यही सार है।

(७) कबीर चित्त चमंकिया------------------------लेहु बुझाइ।।७।।

सन्दर्भ— यह पद्य काव्य संकलन ग्रंथ के 'साखी' शीर्षक से अवतरित है। इस पद्य के रचयिता ज्ञानमार्गी सन्त कबीर दास जी हैं।

प्रसंग— इस पद्य में ज्ञानमार्गी सन्त कबीर दास जी कहते हैं कि संसार तो एक वन के सदृश है। जिस तरह से वन में दावाग्नि फैल जाया करती है, उसी तरह से इस संसार रूपी वन में तापत्रय की दावाग्नि फैली है। इस तापत्रय की दावाग्नि से छुटकारा पाने के लिए एकमात्र साधन परमात्म स्मरण है और वह सबके लिए सुलभ है। किसी के लिए वह दुर्लभ नहीं है। अतएव सबसे बड़ी बुद्धिमानी यही है परमात्म स्मरण रूपी साधन के द्वारा मनुष्य अपने चारों ओर फैली हुई तापत्रय की दावाग्नि को बुझा ले।

भावार्थ— कबीर दास जी कहतें हैं कि ज्ञान के प्रकाश के द्वारा मेरा चित्त (अन्तःकरण) प्रकाशित हो गया है और इस ज्ञान के प्रकाश में मै देख रहा हूँ कि सभी जीवों के चारों ओर दुःखों की आग लगी हुई है। उसकी चपेट में सबके सब हैं। उससे मुक्ति पाने का साधन सबके पास है। वह है परमात्मा का स्मरण। वह हाथ मे विद्यमान जल के घड़े के समान है। जिस तरह के घड़े से आग बुझाई जा सकती है। अतएव सब लोगों को शीघ्र यह काम करना चाहिए।

विशेष— इस पद्य में रूपकालंकार है।

(८) अंखड़ियाँ झाई------------------------पुकारि-पुकारि।

सन्दर्भ— यह पद्य काव्य संकलन नामक पुस्तक के 'साखी' शीर्षक कविता

से उद्धृत है। इसके प्रणेत निर्गुण प्रेमपंथ के पथिक संत कबीर है।

प्रसंग–इस पद्य में सन्त कबीर अपने अन्तः करण की भावना को व्यक्त कर रहे हैं। इनके भीतर परमात्मा की प्राप्ति के लिए एक तीव्र बेचैनी है। वे जानते हैं कि मानव जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि परमात्मा की प्राप्ति है।

भावार्थ– श्री कबीर दास जी कहते हैं कि श्रीराम मुझे मिलेंगे, यह न जाने कबसे मैं आशा लगाए बैठा हूँ। वे अवश्य एक दिन हमारे सन्निकट आयेंगें और हमें अपना लेंगे। अपना बना लेंगे। इसी आशा में मै उनके आने का रास्ता देख रहा हूँ। रास्ता देखते-देखते मेरी आँखों में झांई पड़ गयी है। वे काली हो गयी हैं। मैं रात-दिन राम-राम रट रहा हूँ। यह रट लगाते-लगाते मेंरी जीभ में छाले पड़ गये हैं किन्तु आज भी मेरे राम मुझ तक नहीं आए।

(६) सुखिया सब संसार है- - - - - - - - - - - - - - - - - - - अरु रोवे।। ६।।

सन्दर्भ– यह पद्य काव्य संकलन नामक ग्रन्थ के 'साखी' शीर्षक से उद्धृत है। इस पद्य के प्रणेता सन्त कबीर है।

प्रसंग– इस पद्य में सन्त कबीर का कहना है कि इस संसारी जीवन से मेरी स्थिति बिल्कुल विपरीत है। मुझसे संसार का स्वभाव मेल नहीं खाता। इस संसार के सभी जीव इस संसार में सुखी हैं। वे केवल भोजन करके सोना जानते हैं। मेरी स्थिति ठीक इसके विपरीत है। मुझे तो रोना ही रोना आता है।

भावार्थ– कबीर दास जी कहते हैं कि इस संसार के सभी अज्ञानी जीव संसार के विषयोपभोग को ही अपने जीवन की चरमोपलब्धि मानते हैं। वे केवल भोजन करना और सोना जानते हैं। यहाँ पर खाने का अभिप्राय विषयों के उपयोग से है। और सोने का अभिप्राय जीवन के प्रति लापरवाही से है। किन्तु मैं तो अपने जीवन के प्रति सावधान हूँ। मुझे पता है कि मैं परमात्मा से बिछड़ा हुआ हूँ। इस संसार में मैं जग रहा हूँ परमात्मा के वियोग में रो रहा हूँ।

रामचरितमानस में भी कहा गया है–

यहि जग जामिनि जागहिं जोगी।

गीत में भी कहा गया है-

या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी।
यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः।।

(१०) जब मैं था तब हरि नहीं---माँहि ।।

सन्दर्भ— यह पंक्ति काव्य संकलन नामक पुस्तक के 'साखी' शीर्षक कविता से उद्धृत है। इसके रचयिता सन्त कबीर दास जी हैं।

प्रसंग— इस पद्य में कबीर दास जी कहते हैं कि जब तक उपासक के मन में अहंकार की भावना बनी रहती है तब तक उसको परमात्मा की प्राप्ति असंभव है। परमात्मा की सच्ची भक्ति के लिए अहंकार का त्याग आवश्यक है।

भावार्थ— कबीर दास जी कहते हैं कि जब तक मेरे भीतर अहंकार की भावना थी तब तक मुझे न तो परमात्मा का ज्ञान था और न तो मुझेमें परमात्मा का निवास था। जब से मुझे परमात्मा का ज्ञान हो गया है तब से मेरा अहंकार समाप्त हो गया है। अब तो सर्वत्र मुझे परमात्मा ही दिखायी देता है। मेरा सम्पूर्ण अज्ञान रूपी अंधकार मिट गया है। ज्ञान रूपी दीपक के प्रकाश में मुझे सब कुछ राममय ही दिखायी देता है।

(११) यह तन कांचा कुंभ---आया हाथ ।।

सन्दर्भ— यह पद्य काव्य संकलन नामक पुस्तक के 'साखी' शीर्षक कविता से उद्धृत है। इसके प्रणेता सन्त कबीर दास जी हैं।

प्रसंग— इस पद्य में भाषा के तानाशाह कबीर दास जी शरीर की नश्वरता का वर्णन करते हैं। शरीर क्षण भंगुर है, कब कहां पर तथा कैसे विनष्ट हो जायगा, इस बात को कोई भी नहीं जानता है अतएव शरीर का कोई भी भरोसा नहीं है, उस पर घमंड करना मूर्खता मात्र है।

भावार्थ— कबीर दास जी कहते हैं कि यह शरीर कच्चे घड़े के समान अस्थाई एवं कमजोर पदार्थ है। किन्तु जब तक मुझे इसके स्वरूप का ज्ञान नहीं था तब तक मैं इस पर ही गुमान करता था। जिस तरह धक्का लगते ही कच्चा घड़ा टूट जाता है, उसी तरह से काल के छोटे से भी प्रहार को यह बर्दास्त नहीं कर सका और विनष्ट हो गया। उस शरीराभिमान का कोई भी मुझे अच्छा परिणाम नहीं मिला। अतएव समस्त कल्याणकामी पुरुषों को शरीराभिमान त्याग कर परमात्मा की भक्ति करनी चाहिए।

(१२) ऐसी बानी बोलिए---सुख होइ।

सन्दर्भ— यह पद्य काव्य संकलन नामक ग्रंथ के 'साखी' शीर्षक कविता से लिया गया है। इसके प्रणेता सन्त कबीर दास जी हैं।

प्रसंग— इस दोहे में सन्त कबीर कहते हैं कि मनुष्य को कोई भी ऐसी बात

नहीं करनी चाहिए जिसको सुनकर किसी के मन में उद्वेग हो।

भावार्थ— कबीर दास जी कहते हैं कि मनुष्य को कोई भी बात कहने के पहले अपने मन में रहने वाली धन, बल, विद्या आदि के अहंकार का त्याग कर देना चाहिए। अहंकार की भावना से रहित होकर कही गयी बात अन्य लोगों को तो प्रसन्न करती ही है, कहने वाले के भी मन में सन्तोष और प्रसन्नता की अनुभूति कराती है।

(१३) जिहिं घर साधु------------------------------------तिन माँहि।।

सन्दर्भ— यह पद्य काव्य संकलन नामक ग्रंथ के **'साखी'** शीर्षक कविता से अनुगृहीत है। इसके रचयिता सन्त कबीर दास जी हैं।

प्रसंग— इस पद्य में सन्त कबीर दास जी कहते हैं कि किसी भी घर की उत्तमता यही है कि उसमें भगवान की आराधना हो तो सन्तो की सेवा हो। जहां न तो सन्तों की और न तो भगवान की पूजा, वह घर तो श्मशान के समान है। उसमें रहने वाले लोग भूत के समान हैं।

भावार्थ— सन्त कबीर कहतें हैं कि जिस घर में सन्तों की न तो पूजा होती है और न तो श्री भगवान की सेवा ही की जाती है, वह घर तो एक श्मशान के समान है। जिस तरह श्मशान में भूतों का निवास होता है उसी तरह उस घर में रहने वाले भूत के समान हैं।

विशेष— इस पद्य में कबीर दास जी ने सन्तों की पूजा को ही श्री हरि की सेवा बतलाया है। जो जीव परमात्मा की व्यापकता तथा सर्वशक्तिमत्ता में विश्वास करते हैं वे ही सन्त हैं। उपनिषद् कहती है- **अस्ति ब्रह्मेतिचेद्वेद सन्तमेंनन्ततो विदुः।'** उस सन्त की पूजा ही परमात्मा की सच्ची सेवा है।

इस पद्य में उपमालंकार है।

(१४) कस्तूरी कुण्डलि------------------------------------देखै नाहि।।

सन्दर्भ— प्रस्तुत पद्य काव्य संकलन नामक ग्रन्थ के **'साखी'** शीर्षक कविता से उद्धृत है। इस पद्य के प्रणेता सन्त कबीर दास जी हैं।

प्रसंग— इस पद्य में कबीर दास जी सम्पूर्ण जगत में श्री राम की व्यापकता का प्रतिपादन करते हैं। वे इस बात को एक रूपक के मध्य से स्पष्ट करते हैं।

भावार्थ— कबीर दास जी कहते हैं कि कस्तूरी तो कस्तूरीमृग की नाभि में ही रहती है; किन्तु उसकी गन्ध से आकृष्ट होकर वह मृग उसे पाने के लिए व्याकुल घूमता रहता है और समझ नहीं पाता है कि वह कस्तूरी तो मेरे शरीर में

है। इस तरह परमात्मा राम को पाने के लिए साधक दर-दर भटकते रहते हैं। यह नहीं जान पाते हैं कि परमात्मा का निवास तो हर जीव के हृदय में है। व सबों का अन्तर्यामी है। जिस समय वह इस बात को जान लेता है, उसी समय व परमात्मा को प्राप्त कर लेता है।

इस पद्य में अर्थानान्तरन्यास नामक अलंकार है।

सबद

(१) हरि जननी मैं बालक तेरा——————————————महतारी

सन्दर्भ— यह पद काव्यसंकलन नामक ग्रंथ के 'सबद' नामक शीर्षक से उद्धृत है। इसके प्रणेता सन्त कबीर दास जी हैं।

प्रसंग— इस पद में सन्त कबीर दास जीव और परमात्मा के बीच माता-पुत्र सम्बन्ध की चर्चा करते हुए परमात्मा के वात्सल्य नामक गुण की चर्चा करते हैं।

भावार्थ— इस पद में सन्त कबीर दास जी कहते हैं कि हे हरे मैं तो आपका बालक हूँ और आप मेरी माँ। वह माँ जिसकी गोद में बालक निश्चिन्त होकर सोता है, जो कभी भी अपने दोषी बालक के दोषों की ओर अपने वात्सल्य नामक गुण से प्रेरित होकर ध्यान नहीं देती है। अतएव आप भी मेरे अपराधों पर ध्यान न देकर अपने वात्सल्य का पात्र मुझे बनायेंगे। पुत्र तो दिन भर अपराध ही करता रहता है। किन्तु माँ अपने पुत्र के अपराधों पर ध्यान ही नहीं देती है। यदि बालक माँ का बाल पकड़कर उसको मारता भी है तो भी माँ उसे अपनी गोद से नहीं उतारती है। कबीर दास जी कहते हैं कि मुझे तो यही समझ में आता है कि माँ का दुख और सुख अपने बेटे के सुख और दुख में ही रहता है। बेटे के दुखी हो जाने पर माँ भी दुखी हो जाती है। अतएव मुझको दुखी देखकर आप कैसे सुखी रह सकेंगे। कुपुत्रो जायते क्वचिदपि कुमाता न भवति।

(२) का मांगू कछु——————————————————जुबारी

सन्दर्भ— यह पद काव्य संकलन नामक ग्रन्थ के 'सबद' शीर्षक से उद्धृत है। इसके प्रणेता सन्त कबीर दास जी हैं।

प्रसंग— इस पद में कबीर दास जी संसार की अस्थिरता और नश्वरता का वर्णन करते हुए उसकी त्याज्यता का प्रतिपादन करतें हैं।

भावार्थ— इस पद में सन्त कबीर कहते हैं संसार की किसी भी वस्तु की

याचना करना व्यर्थ है। संसार की सभी वस्तुएँ नश्वर हैं अतएव उनकी प्राप्ति की कामना करना व्यर्थ है। मैं देख रहा हूँ कि मेरी आँखों के आगे से ही संसार विनष्ट होता जा रहा है। रावण के विषय में कहा जाता है कि उसके एक लाख पुत्र और सवा लाख नाती थे। उसका विशाल परिवार था, विपुल सम्पत्ति थी। एक वह भी दिन आया जबकि रावण सपरिवार मारा गया और उसके खानदान में कोई दीपक भी जलाने वाला नहीं बचा। उसकी लंका जैसी नगरी थी, उसकी रक्षा के लिए चारों ओर समुद्र जैसी खाई थी; किन्तु वह भी रावण काल के गले से नहीं बच सका। आज उसका कहीं भी अता-पता नहीं है। जीव को तो इस संसार में आना भी अकेले ही पड़ता है और जाना भी अकेले ही। बीच में थोड़े दिन के लिए वह अपने घर में हाथी ही बाँध ले तो उससे उसको कौन सा लाभ हुआ। उस पर चढ़कर इस संसार से जाते समय वह जायेगा क्या ? कबीर दास जी कहते हैं कि अन्त में तो सबको उसी तरह खाली हाथ जाना पड़ता है, जिस तरह कोई जुआरी पुरुष सब कुछ हारकर हाथ झाड़ते हुए अपने घर पछताता हुआ चला जाता है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि सम्पूर्ण लौकिकता से विमुख होकर परमात्मा का चिन्तन किया जाय।

(३) डग मग छाडि रे मन------------------------------------चढि ऊँचा।

सन्दर्भ— यह पद काव्यसंकलन नामक ग्रन्थ के 'सबद' नामक शीर्षक से उद्धृत है। इसके रचयिता सन्त कबीर दास जी हैं।

प्रसंग— इस पद में सन्त कबीर जीवात्मा और परमात्मा के बीच पति और पत्नी के संबन्ध को सूचित करते हैं।

भावार्थ— इस पद में वे अपने मन को समझाते हैं कि हे मन अब तो तुम दृढ़ संकल्प हो जाओ। सांसारिकता की आशा का त्याग करके परमात्मा की प्राप्ति के साधन के पथ पर चलते रहो। जीव तो परमात्मा की पतिव्रता पत्नी है। वह पत्नी जो एकमात्र अपने पति के लिए ही होती है। वह अपने पति के प्राणान्त हो जाने पर अपने हाथ में सिन्दूर पात्र लेकर उसी के साथ जलने के लिए चल पड़ती है। उसी में उसका नाम है कि वह उसी के साथ जल मरे। उसी तरह से तुम संसार की परवाह किए बिना मगन होकर परमात्मा के प्रेम में नृत्य करो। संसार के लोगों लोभ, मोह, तथा भ्रम का परित्याग कर दो। जो सच्चा वीर होता है वह मरने से नहीं डरता। जो सच्ची पतिव्रता होती है वह जलने से नहीं डरती है। वह अपने घर के पात्रों को सजोने की परवाह नहीं करती है। लोक और वेद में

सांसारिक नियमों की मर्यादा है वही भक्तों में गले की फाँसी है। लौकिक एवं वैदिक मर्यादाएँ तो संसारी जीवों के लिए आवश्यक हैं, मौलिक पंथ तो इन सब से निराला है। अब तो तुम भक्ति के रास्ते पर चल पड़े हो। अब यदि तुम पुनः संसार की ओर मुड़ते हो तो उससे तुम्हारी हँसी ही होगी। यह सारा संसार अपवित्र है केवल राम का नाम पवित्र है। कबीर दास जी अपने मन से कहते हैं कि तुम किसी भी हालत में परमात्मा का नाम लेना मत छोड़ो। किसी प्रकार से भी इस उन्नति के मार्ग पर चलते ही रहना है और जीवन की ऊँचाई को छूना ही है।

पद (सूरदास)

(१) चरन कमल बंदौ------------------------------------तिहिं पाइ।।

सन्दर्भ— प्रस्तुत पद काव्य संकलन नामक ग्रन्थ के 'पद' शीर्षक से उद्धृत है। इस पद के प्रणेता श्री सूरदास जी हैं।

प्रसंग— व्रजभाषा के विश्वविश्रुत गायक कवि सूरदास इस पद में श्री भगवान की वन्दना करते हुए उनकी सर्वशक्तिमत्ता का वर्णन करते हैं।

भावार्थ— श्री सूरदास जी कहते है कि श्री भंगवान ही सम्पूर्ण जगत् के स्वामी हैं। मैं उनके चरण कमलों की वन्दना करता हूँ। उनकी कृपा का ऐसा प्रभाव है कि एक लंगड़ा व्यक्ति भी पर्वत को पार कर लेता है और अन्धे को भी सब कुछ दिखायी देने लगता है। बहरा आदमी भी सुनने लगता है तथा गूँगा भी बोलने लगता है। यही नहीं उनकी कृपा के बल को पाकर एक दरिद्र भी अपने सिर पर छत्र धारण करके चलता है। वह राजा हो जाता है। श्री सूरदास जी कहते हैं कि श्री भगवान ही हमारे स्वामी हैं। वे करुणासागर है। मैं बार-बार उनके चरणों की वन्दना करता हूँ।

(२) अविगत गति------------------------------------सगुन पद गावै।।

सन्दर्भ— यह पद काव्य संकलन नामक ग्रन्थ के 'पद' शीर्षक से उद्धृत है। इसके रचयिता महाकवि सूरदास जी हैं।

प्रसंग— इस पद में सूरदास जी परमात्मा के सगुण रूप की सुलभता का वर्णन करते हैं। वे बतलाते हैं कि परमात्मा के दो रूप स्वीकार किए जाते हैं। निर्गुण एवं सगुण। निगुर्ण रूप की अपेक्षा सगुण रूप अधिक सुलभ है। अतएव परमात्मा के सगुण रूप का ही वर्णन करता हूँ।

भावार्थ— सूरदास जी कहते हैं कि परमात्मा के जिस निर्गुण रूप को जाना

जा सकता है, उसका वर्णन करना अत्यन्त कठिन है। बिना जानी हुई वस्तु का वर्णन कैसे किया जा सकता है? जैसे कोई गूंगा व्यक्ति किसी मीठे फल का स्वयं आस्वाद ले सकता है किन्तु वह उसका वर्णन नहीं कर सकता है। उस फल का अत्यन्त सुन्दर स्वाद सबको परम संतोष दे सकता है। उसी तरह से निर्गुण ब्रह्म का ज्ञान ब्रह्मज्ञ के लिए अनुभव करने की चीज है। उसका वर्णन नहीं किया जा सकता है। इसीलिए तो निर्गुणवादी ब्रह्म को अनिर्वचनीय कहा करते हैं। 'यतो वाचो निवर्तन्ते' इत्यादि श्रुतियों के अनुसार वह वाणी और मन का विषय नहीं बनता है। अर्थात् न तो उसका वर्णन किया जा सकता है और न तो मन में उसके स्वरूप को जाना जा सकता है। उसको तो वही जान सकता है; जिसको वह ब्रह्म मिल जाय। उसका न तो कोई रूप है न रेखा है। वह निर्गुण है। उसकी कोई भी जाति नहीं है। उसको किसी प्रकार के तर्क के द्वारा भी नहीं जाना जा सकता है। उसका कोई भी आधार नहीं है, वही सबों का आधार है। उपनिषद् कहती है कि वह अपनी ही महिमा में प्रतिष्ठित है। स्वे महिम्नि प्रतिष्ठितः। अतएव उसको पता कैसे लगाया जा सकता है? इस तरह से मैंने हर प्रकार से विचार करके जान लिया है कि ब्रह्म तो एक अगम अगोचर है। इसीलिए मैं (सूरदास) श्री भगवान के सगुण रूप विषयकपद का गान करता हूँ।

(३) किलकत कान्ह-----------------------------------पियावत।

सन्दर्भ— यह पद काव्य संकलन नामक ग्रन्थ के 'पद' शीर्षक से उद्धृत है। इसके रचयिता श्रीकृष्णभक्त कवि सूरदास जी हैं।

प्रसंग— इस पद में सूरदास जी भगवान की बाललीला का वर्णन करते हैं। अब भगवान के दो दाँत निकाल चुके हैं। वे बाबा नन्द के आंगन में अनेक प्रकार की बाल-क्रीडा करते हैं जैसे कोई प्राकृत बालक करता है।

भावार्थ— सूरदास जी कहते हैं कि भगवान श्रीकृष्ण अब अपने घुटनों के बल चलने लगे हैं। अपने घुटनों पर चलकर आ रहे हैं और किलकारी मार रहे हैं। बाबा नन्द का आंगन तो सुवर्ण का बना हुआ है और उसमें स्थान-स्थान पर मणियां लगी हैं। उसमें पड़ने वाली वस्तु की छाया को पकड़ने के लिए वे इधर से उधर दौड़ रहे हैं । कभी-कभी तो भगवान अपनी ही छाया को देखकर उसे अपने हाथों पकड़ना चाहते हैं; किन्तु ऐसा कर नहीं पाते हैं। अपनी ही छाया अपने हाथों तो पकड़ी नहीं जा सकती है। जब वे कभी किलकारी देकर हँसते हैं तो उनके दोनों दूध के दाँत चमकने लगते हैं। वे बार-बार अपने हाथों अपनी छाया

को पकड़ते हैं। भगवान श्रीकृष्ण के हाथ-पैर कमल के समान मनोहर हैं। वे ज
पृथ्वी पर पड़ते है तो ऐसा लगता है, जैसे प्रत्येक मणि पर कमल रखकर पृ
भगवान श्रीकृष्ण की बाल्यावस्था का अनुभव करके महारानी यशोदा उसे देख
के लिए नन्द जी को बुलाती हैं। वे भगवान श्रीकृष्ण को अपने आँचल के नी
छिपाकर उन्हें दूध पिलाती हैं।

इस पद में उपमा अलंकार है। इसमें सूरदास जी ने बाल जीवन का सजी
चित्रण किया है।

(४) जसुदा कहाँ लौ------------------------------काढत पानि

सन्दर्भ— यह पद काव्य संकलन नामक ग्रन्थ के 'पद' शीर्षक से उद्धृत है
इसके रचयिता ब्रज भाषा के विश्वविख्यात कवि सूरदास जी हैं।

प्रसंग— इस पद में भगवान् श्रीकृष्ण की बाल लीला का वर्णन किया गया है
बालक श्रीकृष्ण के बाल सुलभ उत्पातों से ऊबकर कोई गोपी माता यशोदा
श्रीकृष्ण के विषय में शिकायत कर रही है।

भावार्थ— कोई गोपी माता यशोदा से बालक श्रीकृष्ण के विषय में शिकाय
करती हुई कहती है कि हम कहाँ तक संकोच करें। प्रतिदिन दूध-दहि-की-क्षति
कैसे बर्दास्त की जा सकती है। तुम अपने उस छोटे बालक की करनी तो देखो
यह घर में प्रवेश करके स्वयं तो दूध पी लेता है, उससे जो बचता है उसे दूस
लड़कों को पिला देता है और अंत में दूध के वर्तन को फोड़कर भाग जाता है
मैंने दही मथ कर उससे माखन निकालकर अपने घर के कोने में एकान्त में र
दिया। यह जो आपका लड़का है वह मेरे घर में घुसकर उस माखन रखने क
जगह को जान लिया। यद्यपि यह जानता था कि मैं अपने घर में हूँ किन्तु य
जानकर भी वह थोड़ा सा भी नहीं डरा; घर में घुस गया और माखन निकाल
लगा। जब मैंने पूछा कि यह क्या कर रहे हो तो उसने उत्तर दिया कि माखन
चींटी पड़ गयी थी, उसे मैं निकाल रहा था। इस तरह का यह उत्पात करता रहता है।

(५) सांवरेहि वरजति क्यों----------------------फिरति वही।।५।

सन्दर्भ— यह पद काव्य संकलन नामक ग्रन्थ के 'पद' शीर्षक से उद्धृत है
इस पद के रचयिता व्रजभाषा के कवि सूरदास जी हैं।

प्रसंग— इस पद में व्रजभाषा के विश्वविख्यात महाकवि सूरदास जी श्रीकृष्ण
के बाल सुलभ औतपातिक चरित्रों का वर्णन कर रहे हैं।

भावार्थ— भगवान् श्रीकृष्ण के उत्पात से ऊबकर कोई ग्वालिन माता यशोद

के सन्निकट में आकर श्रीकृष्ण के उत्पातों के विषय में उलाहना देती हुई कहती कि आप अपने इस कृष्ण को डाँटती क्यों नही हैं? इसके प्रतिदिन का उत्पात अब असह्य हो गया है। नहीं सहा जा रहा है। यह माखन तो खा लेता है, दूध को गिरा देता है और अपनी देह में दही को लपेट लेता है। इसको इस तरह का उत्पात करते देखकर हमारे घर के भी लड़के बिगड़े जा रहे हैं। वे सब क्या करते हैं कि घर का छाँछ छिड़क डालते हैं और इसके पीछे-पीछे भाग जाते हैं। हम जो कुछ भी इससे छिपाकर ऐसी जगह रख देतें है कि इसे श्रीकृष्ण नहीं जाने, उस वस्तु को भा यह जान लेता है और वहाँ तक पहुँच जाता है।

मालकिन आप मेरी बात सुनिए। हम आपके इस लड़के से तो हार चुके हैं। यह चोरी करने के साथ-साथ बहुत अधिक चालाकी जान गया है। इसके चरित्र का वर्णन नहीं किया जा रहा है। सूरदास कह रहे हैं कि गोपियाँ कह रही हैं कि उसके बाद यह गाय के बछड़ों को खोल देता है और वे वन में भटकते-फिरते हैं।

(६) मैं अपनी सब------------------------------------प्रात जान मैं देहौं।

सन्दर्भ— यह पद काव्य संकलन नामक ग्रन्थ के 'पद' शीर्षक से उद्धृत है। इसके प्रणेता महाकवि सूरदास जी हैं।

प्रसंग— इस पद में महाकवि भगवान के बाल हठ का वर्णन कर रहे हैं। भगवान अपनी माता यशोदा से कहते हैं कि अब मैं भी अपनी सभी गायों को चराने के लिए ले जाऊँगा। सब लोग अपनी-अपनी गाय चरायें और मैं अपने घर में बैठा रहूँ, यह कभी भी नहीं हो सकता।

भावार्थ— भगवान श्रीकृष्ण अपने बाल सुलभ हठ के कारण अपनी माता यशोदा से कहते हैं कि अब मैं भी अपनी सभी गायों को चराने के लिए जाया करूँगा। सबेरा होते ही मैं बलदेव के साथ गाय चराने जाऊँगा। तुम्हारे रोकने से मैं घर में नहीं बैठा रहूँगा।

ग्वाल बालों के बीच में मुझे थोड़ा सा भी डर नहीं लगता है। बाबा नन्द की दुहाई है कि आज मैं रात को सोऊँगा ही नहीं, रात भर जागते रहूँगा। यह क्या बात है कि सभी ग्वाल बाल तो गाय चरायें और मैं घर में चुपचाप बैठा रहूँ ? मुझे गाय चराने को मिलता ही नहीं। सूरदास जी कह रहे हैं कि भगवान श्री कृष्ण की इस तरह की बातों को सुनकर माता यशोदा उनसे कहती हैं कि अब तुम सो जाओ। प्रातःकाल मैं तुमको गाय चराने जानें दूँगी, मैं तुमको जाने से नहीं रोकूँगी।

(७) मैया हौं न चरैहौं गाई----------------------ताहि रिंगाइ।।७।

सन्दर्भ— यह पद काव्य संकलन नामक ग्रन्थ के 'पद' शीर्षक से लिया ग है। इस पद के प्रणेता बाल मनोविज्ञान के सर्वश्रेष्ठ गायक ब्रजभाषा के विश्वविख्या महाकवि सूरदास जी हैं।

प्रसंग— इस पद में महाकवि बालक श्री कृष्ण की उस मनोदशा का वर्ण कर रहे हैं जब कि श्रीकृष्ण यह अनुभव कर रहे हैं कि सभी ग्वाल मुझको परेशा करते हैं। अतएव अब मैं गाय चराने जाऊँगा ही नहीं।

भावार्थ— ग्वालों के व्यवहार से तंग आकर बालक श्रीकृष्ण माता यशोदा उन सबों की शिकायत करते हुए कहते हैं कि माँ; अब मैं गायों को चराने के लि जाऊँगा ही नहीं। जितने भी ग्वाल हैं वे सब के सब अपनी-अपनी गायों के रखवाली स्वयं नहीं करते। सभी गायों को मुझको ही दौड़ाकर ही घिरवाते है। इ से मेरे पैर में दर्द होने लगता है। यदि तुम्हें मेरी बात पर विश्वास नही हो तं अपनी कसम खिलाकर बलदेव से ही पूछ लो कि यह बात सच है कि नहीं।

बालक श्रीकृष्ण की इस बात को सुनकर माता यशोदा क्रुद्ध होकर सभ ग्वालों को गाली देती हैं और कहती हैं कि मैं तो अपने बेटे को इसलिए भेजती हूँ वह भी अपना मन बहला आए। भगवान के भक्त सूरदास जी कहते हैं कि यशोद जी कहती हैं कि मेरा यह बच्चा बहुत छोटा है और ये सब ग्वाल उस को दौड़ा-दौड़ा कर मारे जा रहे हैं।

(८) स्याम कर मुरली----------------------मुनि सब मोहति।। ८।।

सन्दर्भ—-यह पद काव्य संकलन नामक ग्रन्थ के 'पद' शीर्षक कविता से अवतरित है। इसके रचयिता ब्रजभाषा के महान कवि श्री सूरदास जी हैं।

प्रसंग— इस पद में महाकवि मुरली मनोहर भगवान श्री कृष्ण के अतिलौकिक सौन्दर्य का यथार्थ चित्रण कर रहे हैं।

भावार्थ— श्री सूरदास जी कहते हैं कि श्याम सुन्दर भगवान श्रीकृष्ण के हाथों में रहने वाली मुरली बड़ी ही अच्छी लगती है। वह भगवान् के अधरों का स्पर्श करके अपनी ध्वनि के माध्यम से मानो अमृत की वर्षा करती है। वह श्रोत्रपेय मधुर-मधुर सुर में बजती रहती है। मुरली को बजाते समय चूंकि भगवान त्रिभंगी मुद्रा में खड़े होते हैं, अतएव उनका मुकुट कुछ लटक सा जाता है। उनके भौहों की सुन्दरता मटकती-सी है। उनकी आँखों के ईशारे बड़े ही सुन्दर लगते हैं। गले को झुकाकर वे अपनी आँखों को बंशी पर टिकाये रखते हैं। इसके

करोड़ों काम की सुन्दरता फीकी पड़ जाती है। उनके गालों पर चंचल कुँडल सुशोभित होते हैं। श्री भगवान के इस सौन्दर्य की उपमा कुछ इस प्रकार दी जा सकती है कि जैसे-दो मकर (घड़ियाल) अमृत के रस में क्रीडा कर रहे हों तथा परस्पर में वे एक दूसरे से अनुराग (स्नेह) करते हों।

इस प्रकार से नंदनंदन भगवान् श्रीकृष्ण श्री वृन्दावन में विहार कर रहे हैं और अपने बाल सखाओं के साथ सुशोभित होते रहते हैं। महाकवि सूरदास जी कहते हैं कि भगवान् श्रीकृष्ण की इस सुन्दरता को देखकर देवता, मनुष्य, तथा मुनि जन सब के सब उन पर मोहित हो जाते हैं।

(६) सखी री मुरली लीजै चोरि----------------राग की डोरि।। ६।।

सन्दर्भ-- यह पद काव्य संकलन नामक ग्रन्थ के 'पद' शीर्षक कविता से उद्धृत है। इसके प्रणेता महाकवि सूरदासजी हैं।

प्रसंग-- इस पद में महाकवि मुरलीधर श्याम श्रीकृष्ण के विषय में गोपियों की भावनाओं का सरस चित्रण कर रहे हैं। गोपियों का मानना है कि मुरली तो श्री कृष्ण को इतनी प्यारी हो गयी है कि इसके सामने श्रीकृष्ण किसी गोपी पर ध्यान नहीं देते हैं। वे गोपियों की ओर से उदास हो गये हैं। इनका तो सब कुछ मुरली ही हो गयी है। इसलिए यही अच्छा होगा कि इनकी इस मुरली को चुरा लिया जाय। जिससे कि इनका ध्यान हटे।

भावार्थ-- मुरली के प्रति श्रीकृष्ण का अत्यन्त आदर देखकर उनकी मुरली से ईर्ष्या करने वाली कोई गोपी दूसरी गोपी से कहती है कि सखी, यह सबसे अच्छा है कि तुम इनकी मुरली को चुरा लो। लगता है कि इसने गोपाल का सबों से प्रेम छुड़ाकर, उनको अपना वशवर्ती बना लिया है। चाहें श्रीकृष्ण घर में रहें या बाहर, दिन हो या रात्रि, ये एक क्षण के लिए भी मुरली को अपने से अलग नहीं रखते हैं। वे सदा उसे अपने साथ लिए रहते हैं। जिस तरह से कोई नायक अपनी प्राणप्रेयसी को हर क्षण अपने साथ लिए रहता है। वह अपने से उसका कभी भी विप्रयोग नहीं होंने देता है। वे कभी तो उसे अपने हाथ में लिए रहते हैं, कभी उसे अपने अधरों से लगाए रखते, हैं तो कभी अपने कमर में खोंस लेते हैं। लगता है कि इस मुरली ने श्रीकृष्ण पर किसी प्रकार की मोहिनी विद्या कर रखा है जिसके कारण भगवान् श्रीकृष्ण के समस्त अंग उससे मोहित हो गए हैं। हे सखी इसने तो अपने स्नेह के बन्धन में भगवान् श्रीकृष्ण के मन को बिलकुल बांध लिया है।

(१०) कहत कान्ह जननी--------------------मोहि लगौ बजाइ ।। १०।।

सन्दर्भ— यह पद काव्य संकलन नामक ग्रन्थ के 'पद' शीर्षक से अवतीर्ण है। इस पद के रचयिता महाकवि सूरदास जी हैं।

प्रसंग— इस पद में माता यशोदा श्रीकृष्ण को समझा रही हैं कि तुम अपने खिलौनों के प्रति असावधान रहने लगे हो। राधा अब प्रतिदिन यहाँ आने लगी है, कहीं ऐसा न हो कि वह तुम्हारा खिलौना ही चुरा ले जाय।

भावार्थ— माता यशोदा श्रीकृष्ण को समझाकर कह रही हैं कि तुम अपने खिलौनों के विषय में असावधान रहते हो। उन सबों को इधर-उधर फेंके रहते हो। ऐसा न हो कि राधा आए और तुम्हारे खिलौनों को चुरा ले जाय। राधा तो अब शाम सबेरे हमेशा इधर आने लगी है और वह हमेशा तुम्हारी मुरली को ही देखती रहती है। उसका मन तुम्हारी मुरली में ही लगा रहता है। माता यशोदा की इस बात को सुनकर भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं कि माँ इस मुरली में ही मेरा प्राण रहता है। अर्थात् यह मुरली मुझको अत्यन्त प्यारी है और तुमको यह मेरी मुरली बिल्कुल अच्छी नहीं लगती है। इसको कहीं पर छिपा कर रख दो जिससे कि इसका किसी को पता न चले। बलदेव का भी इस विषय में कोई विश्वास नहीं करना चाहिये। वे भी मेरी मुरली चुरा सकते हैं।

सूरदास जी कहते हैं कि, इस मुरली रूपी बलाय को कौन लेगा? इसकी किसी को कौन सी आवश्यकता है?

(११) संदेशो देवकी सो कहियो--------------द्वैहैं करत संकोच ।। ११।।

सन्दर्भ— यह पद काव्यसंकलन नामक पुस्तक के 'पद' शीर्षक' से अवतरित है। इसके प्रणेता महाकवि सूरदास जी हैं।

प्रसंग— भगवान श्रीकृष्ण अब मथुरा चले गये हैं और वे वहीं निवास करने लगे हैं। कंस को मारने के पश्चात् भगवान् अपनी माता देवकी के ही साथ रहने लगे है। माता यशोदा श्रीकृष्ण के विरह में व्यथित हैं। उनका वात्सल्य उन्हें रुलाता रहता है। वे पथिकों द्वारा देवकी के पास इस पद के माध्यम से संदेश भेजती हैं-

भावार्थ— माता यशोदा श्रीकृष्ण के विषय में श्री देवकी जी के पास पथिकों से संदेश भेजती हुई कहती हैं, मेरा यह संदेश देवकी से जाकर कह देना कि मैं तो आपके पुत्र श्रीकृष्ण की धाई ही हूँ, किन्तु आप मुझे भूल मत जाइयेगा, स्नेह बनाये रखियेगा। यद्यपि आप श्रीकृष्ण की टेक को जानती ही होंगी; फिर भी मैं

अपनी ओर से कह रही हूँ कि, सवेरा होते ही मेरे प्यारे बच्चे, माखन, और रोटी खाते हैं। वे तेल, उबटन और गर्म जल देखते हैं तो भाग जाते हैं। वो जो-जो मांगते हैं, मैं वही-वही वस्तु देती हूँ, वे एक के बाद दूसरे क्रम से नहाते हैं। सूरदास जी कहते हैं कि माता-यशोदा पथिकों से कहती है कि मुझे दिन-रात इस बात की सोच बनी रहती है कि श्री कृष्ण तो मेंरे अत्यन्त प्यारे थे। वे मथुरा में बहुत संकोच करते होंगे? वे स्वभाव से ही अत्यन्त संकोची हैं। आप उनकी इच्छाओं का ध्यान अवश्य रखियेगा। श्रीकृश्ण को किसी प्रकार का कष्ट न होने पाये। अपने मन की बात को वे संकोच के कारण जल्दी कह भी नहीं पाते हैं।

(१२) उधौ मंन न भये दस-बीस----------------------नही जगदीस।।

सन्दर्भ– यह पद काव्य संकलन नामक पुस्तक के 'पद' शीर्षक से लिया गया है। इसके रचयिता श्री कृष्ण भक्त महाकवि सूरदासजी हैं।

प्रसंग– इस पद में महाकवि ने उस स्थिति का वर्णन किया है, जब श्री कृष्ण मथुरा में रहने लगे थे। श्री कृष्ण के विरह में व्याकुल गोपियों के लिए सान्त्वना का संदेश लेकर श्रीकृष्ण के मित्र उद्धव गोकुल आए और उन्होंने गोपियों को बतलाया कि उन्हें निर्गुण निराकार ब्रह्म में अपने मन को लगाना चाहिए। उद्धव के उपदेश को नकारती हुई गोपियों ने कहा कि हम तो श्रीकृष्ण की हैं और रहेगें भी उनकी है। अब हममें परिवर्तन होना असंभव है।

भावार्थ– गोपियाँ उद्धव जी से कहतीं हैं कि प्रत्येक आदमी के पास मन तो एक ही होता है। हमारा मन तो पहले ही श्याम से लग चुका है और जब श्याम यहाँ से मथुरा गए तो हमारा मन भी उन्ही के साथ मथुरा चला गया। अब हमारे पास हमारा मन तो रहा नहीं। आराधना तो मन से ही की जा सकती है। जब हमारे मन हमारे पास हैं ही नहीं तो हम आपके द्वारा उपदिष्ट हंस (निर्गुण ब्रह्म) की आराधना किस साधन से करें? श्याम के अभाव में हमारी इन्द्रियाँ शिथिल हो गयी हैं। जिस तरह आत्मा के अभाव में सिर हिलता-डुलता भी नहीं है। शिथिल हो जाता है, उसी प्रकार हमारे शरीर में जो श्वांस चल रही है, वह इसी आशा से कि श्याम किसी न किसी दिन अवश्य हमें मिलेंगे। हम तो यही मानते हैं कि श्याम सुखी रहें उनकी आयु लाखों वर्ष की हो जाय। आप तो श्याम सुन्दर के मित्र हैं और समस्त प्रकार के योगों के स्वामी हैं। जानकार हैं। यहाँ पर गोपियाँ उद्धव का एक प्रकार से उपहास भी करती हैं कि एक तुम श्याम के मित्र हो कि उनको छोड़कर योग की आराधना करते हो और दूसरी तरफ हम गोपियां हैं कि हम

याम सुन्दर की हो गयीं। अब किसी दूसरे की आराधना नहीं कर सकतीं। कित घटिया किस्म की तुम्हारी मित्रता है ? सूरदास जी कहते हैं कि गोपियाँ कहती कि श्याम को छोड़कर हम किसी भी दूसरे परमात्मा को नहीं मानती हैं। हम ले उनकी ही आराधना करती रहेंगी।

(१३) उधौ मन नहिं हाथ हमारे-----------कही करेंगी सोई ।। १३।

सन्दर्भ— यह पद काव्यसंकलन नामक पुस्तक के 'पद' शीर्षक कविता उद्धृत है।

प्रसंग— इस पद में महाकवि गोपियों की विवशता का वर्णन कर रहे गोपियाँ श्रीकृष्ण की भक्ता हैं। उनका मन श्रीकृष्ण के ही साथ मथुरा चला ग अब वे निर्गुण की योगसाधना कर ही नहीं सकती हैं।

भावार्थ— भगवान श्रीकृष्ण का संदेश लेकर गोकुल आए हुए उद्धव जी गोपियाँ कहती हैं कि हे उद्धव हमारा मन हमारे हाथ में नहीं है। श्याम जब य से मथुरा जा रहे थे उसी समय वे अपने ही साथ हमारे मन को भी अपने सा रथ पर चढाकर मथुरा ले गए। यदि ऐसा नहीं होता तो हमारा मन हमारे सा रहता तो हम लोग आपके द्वारा दी गयी योग की शिक्षा को अवश्य अपना क्योंकि आपके लिए वह अत्यन्त रुचिकर है, निःस्पृहता पर बल देती है। हम श्याम सुन्दर के क्रिया कलाप को लेकर झँख रहे हैं कि उन्होंने हमारा मन तो लिया और अब उसके बदले में वे मथुरा से हम लोगों के लिए योग भेज दिए गोपियों तुम लोग अब योग करो ? योग किस साधन से हम करें? हमारा मन उन्हीं के पास है। बिना मन के योग साधना हो सकती है क्या? यदि आज भी अपना मन पा जायँ तो जो तुम कहो वही हम करने के लिए तैयार हो जायें श्याम की करोड़-करोड़ शपथ खाकर हम पूछतें हैं कि यदि हमारा मन हमारे पा हो तो हम वही करेंगे जो श्याम सखा आप कहेंगे।

(१४) उधौ जाहु तुमहि हम जानें-----------------नेकहुँ मुसकाने

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह पद काव्य संकलन के सूरदास प्रणीत 'पद' शी से अवतरित है। इसमें मथुरा से गोपियों को उपदेश देने के लिए आए हुए उ को नकारती हुई गोपियाँ कहती हैं कि लगता है कि आपको श्याम ने कहीं दू जगह भेजा था और आप रास्ता भूल कर यहाँ चले आए हैं।

भावार्थ— गोपियाँ कहती हैं कि उद्धव जी आप लौट जाइये, हमलोग स गयी हैं कि श्याम ने आपको यहाँ नहीं भेजा होगा। आप रास्ता भूलकर यहाँ

ए हैं। ब्रज की नारियों को योग का उपदेश देते समय आपको लज्जा नहीं ती है क्या? आप बड़े हो गए हैं आपको विवेक नहीं है, इतने अज्ञानी हो गए हैं प ? हम से आप ने जो कुछ, कहा हम कुछ सोच-समझ कर वर्दास्त कर लेते । कहाँ तो नारियाँ और कहां दिगम्बर (नग्न) रहने की दशा? अब भी तो आप हो जाइये। आप सत्य कहिये। आपको हमारी कसम है। हम लोग यह जानना हती हैं कि श्याम जब आपको यहाँ भेज रहे थे तो थोड़ा सा भी मुस्काये भी थे ा? वे ऐसा अवश्य कहे होंगे। आप उनके अभिप्राय को समझे नहीं। उन्होंने पसे मजाक किया होगा और आप सचमुच चले आये।

(१५) निरगुन कौन देस को बासी------------------मति नासी।।१५।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह पद काव्य संकलन ग्रन्थ के सूरदास प्रणीत 'पद' र्षक से उद्धृत है। गोपियाँ निर्गुण ब्रह्म का उपहास करती हुई कहती हैं कि आप निर्गुण का कुछ परिचय बतलाइये।

भावार्थ— गोपियाँ कहती हैं कि हे मधुकर ! भला बतलाओ तो निर्गुण कहाँ रहने वाला है ? हम तुमसे जानना चाहते हैं, हँसी नहीं कर रहे हैं ? उसके ता माता कौन हैं ? उसकी पत्नी और दासी के नाम क्या हैं? उसके रूप तथा श क्या हैं ? वह किस रस को अधिक पसंद करता है ? यदि आपने कोई छल या तो आप अपनी करनी का फल पाओगे। गोपियों की बात सुनकर उद्धव तो गल जैसे बनकर मौन ही रह गए। कोई भी उत्तर नहीं दे सके।

(१६) यह गोकुल गोपाल उपासी------------------गुनरासी।।१६।।

सन्दर्भ प्रसंग— यह पद काव्यसंकलन के सूरदास रचित 'पद' शीर्षक से द्धृत है। इस पद में गोपियाँ उद्धव जी से कहती हैं कि यहाँ आपके निर्गुण का ोई भी ग्राहक नहीं है।

भावार्थ— गोपियाँ कहती हैं कि गोकुल में तो सब लोग गोपाल की उपासना रने वाले हैं। जो लोग निर्गुण के उपासक हैं वे लोग काशी में निवास करते हैं हां नहीं। यद्यपि श्रीकृष्ण ने हमें त्याग दिया है फिर भी हम उन्हीं के चरणों के वक हैं। यदि चन्द्रमा में राहु का ग्रास लग जाता है तो उससे चन्द्रमा क्या अपनी ीतलता त्याग देता है? हमारा क्या अपराध है कि श्याम हमारे लिए योग के पदेश का सन्देश भेजते हैं और हमें अपने प्रेम और भक्ति से उदास बनाये खना चाहते हैं ? सूरदास जी कहते हैं कि गोपियाँ कहती हैं कि ऐसी कौन सी ेरहिणी होगी जो मुक्ति को लेकर गुण के सागर श्री भगवान का त्याग कर दे।

(१७) ब्रज के विरही लोग दुखारे---------------------------ज्यों तो

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत पद काव्यसंकलन के सूरदास प्रणीत 'पद' शी से उद्धृत है। इसमें महाकवि भगवान श्री कृष्ण के विरह में व्याकुल ब्रज के की दीन दशा का वर्णन किया गया है।

भावार्थ— भगवान श्रीकृष्ण के बिना ब्रज के लोग उनकी विरह-व्यथा दुखी हैं। गोपाल के अभाव में सदा किंकर्तव्यविमूढ से बने रहते हैं। उनके काले हो गए हैं। नन्द और यशोदा प्रतिदिन सांयकाल और प्रातःकाल श्री कृष्ण आने का रास्ता देखते रहते हैं। उन्हें विश्वास है कि एक दिन श्रीकृष्ण आयेंगे। वे चारों तरफ कान्हाँ-कान्हाँ कहकर श्रीकृष्ण को पुकारते हैं। आँखों से आँसुओं की धारा बहती रहती है। श्रीकृष्ण के वियोग में गोपि ग्वाले, गाय, तथा बछड़े सब के सब अत्यन्त दुखी हैं। सूरदास जी कहते हैं कि कृष्ण के बिना ये सब ऐसे दिखायी पड़तें हैं जैसे चन्द्रमा के विना तारे फीके उदास प्रतीत होते हैं।

(१८) उधौ मोहि ब्रज बिसरत नाहि-----------हित जदु तात।। १८

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह पद काव्यसंकलन के सूरदास प्रणीत 'पद' शी से उद्धृत है। इस पद में भगवान श्रीकृष्ण की उस मनोदशा का वर्णन किया है जिसके अनुसार भगवान श्रीकृष्ण भी ब्रजवासियों के वियोग में उदास रहते

भावार्थ— भगवान श्री कृष्ण अपने मित्र उद्धव से कहते हैं कि उद्धव ब्रज की याद नहीं भूलती है। वृन्दावन, गोकुल, वहाँ के वन तथा उपवन, वहाँ सघन कुंज तथा उसकी सान्द्र शीतल छाया, इन सबों की यादगारी मुझे बनी है। प्रातः काल माता यशोदा और नन्द बाबा यह सब कुछ देखकर बहुत प्र होते थे। वे दोनों हम को अपने साथ ही माखन, रोटी तथा सजाव दही खि थे। वहाँ पर जब हम थे तो गोपी तथा ग्वाल-बालों के साथ हँसते-हँसाते बीत जाता था। सूरदास जी कहते हैं कि ब्रजवासी धन्य हैं जिनके मित्र भगवान कृष्ण हैं।

जनकपुर में राम

(१) मुनि पद कमल बंदि-----------------------------सकल सुदे

सन्दर्भ प्रसंग— प्रस्तुत काव्यांश काव्य संकलन के 'जनकपुर में राम लक्ष्म

शीर्षक से अवतरित है। इस काव्य खण्ड में गोस्वामी तुलसी दास जी जनकपुर देखने के लिए जाते हुए श्रीराम और लक्ष्मण के शारीरिक दिव्य सौन्दर्य का वर्णन करते हैं।

भावार्थ— मुनि श्री विश्वामित्र के चरणों की वन्दना करके श्री राम और लक्ष्मण दोनों भाई जो सभी लोगों के नैनों का सुख देने वाले हैं, जनकपुर देखने के लिए चल पड़े। दोनों भाईयों की अत्यन्त सुन्दरता को देखकर बालकों का समूह उनके साथ चल पड़ा। सबके मन में दोनों भाईयों के रूप को देखने का लोभ था। उनका कमर में बांधने का वस्त्र पीला था पीठ पर तरकस लटक रहा था। हाथ में मनोहर धनुष बाण सुशोभित हो रहे थे। शरीर के अनुकूल वे चन्दन का तिलक लगाए हुए थे। श्रीराम लक्ष्मण की अत्यन्त मनोहर जोड़ी थी। सिंह के समान उनके कंधे थे और भुजाएं लम्बी थीं। हृदय पर नागमणि की मनोहर माला सुशोभित होती थी। उनके कान सुन्दर थे और उनके कमल के समान मनोहर नेत्र थे। उनका मुख चन्द्र दैहिक, दैविक और भौतिक इन तीनों प्रकार के तापों को विनष्ट कर देने वाला था। कानों में कर्णफूल शोभता था। वे जिस को देखते उसके मानो मन को ही चुरा लेते थे। उनकी देखने की कला बड़ी ही मनोहर थी और भौहें अत्यन्त सुन्दर थीं। उनके तिलक की रेखा ऐसी लगती थी जैसे मानों यह सौन्दर्य की सीमा बना दी गयी हो। उनके सिर पर पीली चौतनी (टोपी) थी और काले घुंघराले केश थे। वे दोनों भाई नख से लेकर शिखा पर्यन्त अत्यन्त सुन्दर थे। उनके प्रत्येक अंग बड़े ही सुन्दर थे।

(२) देखन नगरु भूप सुत-------------------------कोटि-कोटि सत काम।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत काव्यांश काव्यसंकलन के 'जनकपुर में राम लक्ष्मण' शीर्षक से उद्धृत है। इस काव्यांश में जनक पुर देखने के लिए आए श्री राम को देखने के लिए वहाँ के समस्त नरनारियों के उत्कण्ठातिशय्या तथा उनकी भावनाओं का सजीव वर्णन है।

भावार्थ— जब जनकपुर नगर के निवासियों को यह समाचार मिला कि जनक की नगरी को देखने के लिए श्री राम और लक्ष्मण आए हैं, तो वे अपने समस्त कामों तथा गृह को छोड़कर श्रीराम और लक्ष्मण को देखने के लिए उसी तरह से दौड़ पड़े; जैसे कोई दरिद्र खजाना लूटने के लिए दौड़ पड़ा हो। वे स्वाभाविक रूप से सुन्दर थे। दोनों भाईयों वे श्रीराम और लक्ष्मण को देखकर अपने नेत्र प्राप्त करने के फल को प्राप्त करके सुखी होते थे। युवतियाँ अपने गृहों

के झरोखों से श्री राम के रूप को प्रेम पूर्वक देखने लगीं और अपनी सखि प्रेम पूर्वक कहने लगीं कि इन दोनों भाईयों की सुन्दरता तो करोंड़ो कामदे सुन्दरता से भी अधिक है। किसी भीं देवता, मनुष्य, असुर, नाग अथवा मुनि इस प्रकार की सुन्दरता नहीं सुनायी पड़ती है, जैसी सुन्दरता इनकी है। सुन्दर हैं; किन्तु उनकी चार भुजाएँ हैं, ब्रम्हा के चार मुख हैं, शंकर जी के मुख हैं और उनका वेष भी भयंकर है। इन तीनों देवताओं को छोड़कर को ऐसा देवता नहीं है, जिसके सौन्दर्य की तुलना इनके सौन्दर्य के साथ की जा

इनकी किशोरावस्था है, ये सौन्दर्य के खजाना हैं। इनके प्रत्येक अंग करोंड़ो कामदेव की शोभा को न्योछावर किया जा सकता है।

विशेष– इस खण्ड में उपमा, रूपक तथा उत्प्रेक्षा ये तीनों अलंकार है

(३) कहहु सखी अस को तनु धारी------------------हरषीं सब ना

सन्दर्भ एवं प्रसंग– प्रस्तुत काव्यांश काव्य संकलन के 'जनकपुर में श्री लक्ष्मण' शीर्षक से उद्धृत है। इस काव्यांश में गोस्वामी तुलसीदास जी ने जन की नारियों द्वारा सुषमा सागर श्री राम के विषय में चर्चा का उल्लेख किया है

भावार्थ– जनकपुरी की शोभा देखने के लिए निकले हुए श्री राम लक्ष्मण को देखकर आपस में बांतें करती हुई युवतियाँ कहती हैं, सखी बतल कौन ऐसा जीव होगा जो श्री राम के इस सौन्दर्य माधुरी को देखकर मोहित न जाए। कोई युवती प्रेम पूर्वक कहने लगती है कि मैंने जो इनके विषय में सुन उसे तुम सुनो, बाल हंसों की जोड़ी के समान मनोहर इन दोनों राजकुमारों मुनि के यज्ञ की रक्षा युद्ध में राक्षसों को मार कर किया।

श्याम वर्ण के शरीर वाले तथा कमल के समान नेत्र वाले श्रीराम मारीच भुजाओं का गर्व दूर करने वाले हैं। ये कौसल्या के पुत्र तथा सुख के खान उनका नाम श्री राम है। किशोरावस्था वाले गौरवर्ण के, सुन्दर वेष वाले, हाथ धनुष, बाण लिए हुए जो श्री राम के पीछे-पीछे चल रहे हैं, वे श्री राम के भाई हैं। इनका नाम लक्ष्मण है। इनकी माता का नाम सुमित्रा है।

ये दोनों भाई मुनि विश्वामित्र का कार्य करके तथा रास्ते में गौतम मुनि पत्नी अहल्या का उद्धार करके, इस धनुर्यज्ञ को देखने के लिए आये हुए हैं। युवती की बातों को सुनकर अन्य युवतियों को बड़ी प्रसन्नता हुई।

(४) देखि राम छवि कोउ एक कहई-------------पुन्य पुराकृत भूरि॥

सन्दर्भ एवं प्रसंग– यह काव्यांश 'काव्य संकलन' के 'जनकपुर में श्री रा

लक्ष्मण' शीर्षक से अवतीर्ण है। इस काव्यांश में गोस्वामी तुलसीदासजी जनकपुर की नारियों की इस भावना का चित्रण कर रहें हैं कि श्री राम ही जानकी को वर के रूप में प्राप्त होंएँ।

भावार्थ– श्री राम के सौन्दर्य को देखकर कोई एक युवती कहने लगी कि श्री जानकी के योग्य तो यही वर है। सखि मेरा तो कहना है कि इन दोनों भाइयों को देखकर यदि महाराज अपना प्रण त्याग दें, और राम सीता का विवाह कर दें तो बड़ी ही अच्छी बात होगी। कोई युवती कहने लगी कि महाराज जनक ने इनको पहचान लिया है तथा मुनि विश्वामित्र के साथ ही इनका भी उन्होंने सम्मान किया है। दूसरी नारी कहती है कि सखि महाराज जनक अपने प्रण का परित्याग नहीं कर सकते ऐसा ही हमारा भाग्य है कि महाराज जनक अविवेक को ही अपनाये हुए हैं। किसी युवती ने कहा–कि यदि विधाता ठीक रहता है तो वह सबों को उचित फल प्रदान करता है। यदि ऐसी बात है तो जानकी को श्री राम ही पति के रूप में मिलेंगे इसमें कोई भी सन्देह नहीं है। यदि भाग्यवश ऐसा संयोग बन जाय, तो सब लोग कृतकृत्य हो जायँ। सखि! हमको तो इसी बात की चिन्ता है कि इसी बहाने श्री राम पुनः जनकपुरी में कभी आयेंगे। नहीं तो सखी इनका दर्शन पुनः प्राप्त होना असम्भव है और ऐसा तब ही संभव है, जब हम लोगों के पूर्वजन्म का अधिक पुण्य होगा।

(५) बोली अपर कहे सखि नीका———————————तँह तँह परमानंद।

सन्दर्भ एवं प्रसंग– यह अवतरण काव्य संकलन के 'जनकपुर में राम लक्ष्मण' शीर्षक से अवतरित है। इसके प्रणेता गोस्वामी तुलसीदास जी ने जनकपुरी को देखने के लिए निकले हुए श्री राम लक्ष्मण के रूप माधुरी को देखकर समस्त युवतियों के परस्पर में बातों का वर्णन इस अवतरण में किया है।

भावार्थ– दूसरी युवती कहने लगी कि सखि! तुमने बहुत अच्छा कहा है। श्री राम और जानकी का विवाह सबों के लिए परम कल्याणकारी है। किसी युवती ने कहा कि शंकर जी का धनुष अत्यन्त कठोर है, और श्याम वर्ण वाले श्री राम का शरीर कोमल है। इनकी किशोरावस्था है। इस तरह यह बड़ी असमंजस की घड़ी है कि क्या होगा? यह सुनकर किसी युवती ने कहा कि सखि! इनके विषय में कुछ लोग यह कहते हैं कि इनका प्रभाव बहुत बड़ा है। इनके चरण कमलों की धूलि के स्पर्श मात्र से महापापिनी अहल्या का भी उद्धार हो गया। इस प्रकार के श्री राम शिवजी का धनुष अवश्य तोड़ेंगे। आप यह विश्वास रखिये। जिस ब्रह्मा

ने इतनी सुन्दरी सीता का सोच-विचार कर निर्माण किया है, उसने ही उसके लि यह श्याम वर्ण का वर भी बनाया है। उस युवती की बात को सुनकर स युवतियाँ प्रसन्न हो गयीं और कहने लगीं कि ऐसा अवश्य ही होगा।

मन में प्रसन्न हो-होकर सुन्दर मुख तथा नेत्रों वाली युवतियाँ पुष्पों व वर्षा करती थीं और दोनों भाई जहाँ-जहाँ जाते थे वहाँ-वहाँ परमानन्द व अनुभव होता था।

पद

(१) मन पछितैहें अवसर बीते--------------------विषयभोग बहुधीतें

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत अवतरण काव्य संकलन के गोस्वामी तुलसीदा प्रणीत 'विनय के पद' शीर्षक से अवतीर्ण है। इस पद में गोस्वामी तुलसीदास ज अपने मन को ही समझा रहे हैं कि तुम अनादि काल से सांसारिक विषयभोग व वासना में लिप्त हो, इस बार मानव जीवन मिला है, यदि इस जीवन में तुमं श्रीराम की भक्ति कर ली तब तो इस जीवन की सफलता है, अन्यथा यह दुर्ल मानव देह विनष्ट हो जाने पर केवल पछताना ही हाथ लगेगा।

भावार्थ— गोस्वामी तुलसीदास जी कहते है कि हे मन समय बीत जाने प तो केवल तुम पछिताओगे ही, कोई मौका नहीं मिल पायेगा। यह मानव शरी दुर्लभ शरीर है। इस जीवन में मन, वचन और कर्म इन तीनों साधनों से भ भगवान के चरणों का भजन करो। इस संसार में काल सबसे बली है। वह सबवं मार देता है। इस काल ने ही सहस्रबाहु तथा रावण को भी मार डाला। अहंका की भावना से भरकर के इन दोनों ने धन और गृह को सँवारा था किन्तु अन्ति समय में कुछ भी इन लोगों के साथ नहीं गया। ये दोनों खाली हाथ ही इस संसा से चले गए। पुत्र, पत्नी, आदि तो अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए तुम्हारे स लगे हैं, इन सबों से प्रेम करना छोड़ दो।

हे मेरे मूर्ख मन! अन्त में ये सब के सब तुमको त्याग देंगे, यह निश्चित है इसलिए यही अच्छा है कि इसी समय से तुम ही इन सबों का त्याग कर दो। ज मन! अब तक तो तुम संसार की मोहिनी वासना में सोए थे, अब तो जागो ! सबं के स्वामी श्री राम से अनुराग करो। मन की दुराशाओं का त्याग करो। सांसारि कामनाओं की आग तब तक बुझ नही सकती है जब तक इसमें विषय रूपी घी व

आहूति पड़ती रहेगी। अतएव विषयों के उपभोग से विरक्त होओ। संसार की सारी कामनाओं का त्याग करो।

विशेष— इस अवतरण की अन्तिम पंक्ति में रूपक अलंकार है।

(२) ऐसो को उदार जग मांही———————————करै कृपानिधि तेरो।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत अवतरण काव्य संकलन के गोस्वामी तुलसीदास प्रणीत विनय के पद से अवतीर्ण है। इसमें गोस्वामी जी भगवान श्री राम की उदारता का सोदाहरण वर्णन करते हैं।

भावार्थ— गोस्वामी तुलसीदासजी इस विनय पत्रिका के पद के माध्यम से अपने मन को समझा रहे हैं कि संसार में इतना उदार कौन है? जो बिना किसी प्रकार की सेवा के ही दीनों पर कृपा करे ? इस प्रकार भगवान राम को छोड़कर कोई भी दूसरा नहीं है। योगीजन एवं मुनिजन योग और विराग के द्वारा जिस गति को प्राप्त करने में असमर्थ रह जाते हैं, उसी गति को गीध, जटायू तथा शबरी को प्रदान करके भगवान् श्री राम ने अपने मन में यह नहीं सोचा कि इन सबों को मैंने बहुत अधिक प्रदान कर दिया है। रावण भगवान् शंकर को अपने दसों सिरों को समर्पित करके जिस सम्पत्ति को प्राप्त किया था उसी सम्पत्ति को भगवान् श्रीराम ने विभीषणजी को अत्यन्त संकोच के साथ प्रदान किया। उनके मन में हो रहा था कि शरणागत विभीषण को मैं क्या यह छोटी सी लंका का राज्य दे रहा हूँ? गोस्वामी तुलसीदासजी अपने मन से कहते हैं कि ऐ मेरे मन ! यदि तुम इस प्रकार से सुख प्राप्त करना चाहते हो तो भगवान् श्री राम का भजन करो। वे कृपानिधि हैं, वे तुम्हारी सम्पूर्ण कामनाओं को पूर्ण कर देंगे।

(३) जाऊँ कहाँ तजि चरन तिहारे———————————अपनपौ हारे?

सन्दर्भ प्रसंग— यह अवतरण काव्य संकलन के गोस्वामी तुलसीदास प्रणीत विनय के पद शीर्षक से अवतरित है। इसमें गोस्वामीजी श्री भगवान् से प्रार्थना करते हैं कि हे भगवन्। आपको छोड़कर मेरी रक्षा करने वाला कौन है। अतएव आपके चरणों की शरण को छोड़कर मैं किसी दूसरे देवी-देवता के दरवाजे को नहीं खटखटाऊँगा।

भावार्थ— गोस्वामी तुलसीदासजी कहते हैं कि भगवन्! आपके चरणों को छोड़कर मैं कहाँ जाऊँ। मेरा दूसरा कौन रक्षक हो सकता है ? संसार में कौन ऐसा देवता है जिसको पतित पावन कहा जाता हो ? किसको दीन दुखिया जीव अत्यन्त प्रिय हों ? कौन ऐसा देवता है जो अपने सुयस की परवाह किए बिना जबर्दस्ती-अध

म जीवों का उद्धार करता हो ? कौन ऐसा देवता है जो गीध जैसे पक्षी, गजेन्द्र जैसे पशु, व्याध, अहिल्या जैसी शिला, पेड़ आदि जिस किसी भी यमलार्जुन जैसे दीन दुखिया को मुक्ति प्रदान किया हो ? आपको छोड़कर जितने भी देवता, दैत्य, मुनि नाग, तथा मनुष्य हैं, वे सब के सब माया के वशवर्ती हैं, ऐसे देवता किसी का माया से उद्धार क्या करेंगे ? वे तो स्वयं माया के जाल में फँसे हैं। आप माया हैं, अतएव आप ही माया के जाल से उद्धार करने में समर्थ हैं।

वन पथ पर

(१) पुर ते निकसी रघुवीर-वधू------------------चारु चलीं जल च्वै।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह पद्य काव्यसंकलन के 'वन पथ' पर शीर्षक से उद्धृत है। यह रचना गोस्वामी तुलसीदासजी की है। इसमें वन के लिए चलती हुई सीताज़ी की सुकुमारता तथा अतुरता का वर्णन किया गया है।

भावार्थ— चौदह वर्षो के लिए वनवास में श्री राम और लक्ष्मण के साथ चलती हुई श्री सीता जी अयोध्या नगरी से निकलकर अभी दो चार ही डग चली थीं कि वे श्रान्त हो गयीं। उनके माथे पर पसीने की बूंदें झलकने लगीं और लाल-लाल ओठों के पुट सूख गये। इसके पश्चात् वे अपने प्रियतम श्री रामजी से पूर्छी कि प्रभो अभी कितना दूर चलना बाकी है ? आप कहाँ पर पर्णकुटी का निर्माण करेंगे ? सीताजी की इस प्रकार की आतुरता को देखकर करुणा सागर श्री राम के आँखों में आँसू भर गए। वे सोचने लग गए कि इतनी सुकुमारी सीता को मेरे साथ बनवास में जाना पड़ रहा है, यह मेरा कितना बड़ा दुर्भाग्य है?

विशेष— कवितावली के इस छन्द में सीताजी की अतिलौकिक सुकुमारता का वर्णन है।

(२) जल को गए लक्खन हैं लरिका---------------वारि विलोचन बाढ़ै।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत कविता काव्यसंकलन के 'वन के पथ पर' शीर्षक से उद्धृत है। इसके रचयिता गोस्वामी तुलसीदासजी भगवान् श्री राम और सीताजी के परस्पर के स्नेह का वर्णन कर रहे हैं।

भावार्थ— भगवान् राम लक्ष्मण और सीता तीनों जंगल में चल रहे थे। प्यास लगने पर लक्ष्मण जी पानी लाने के लिए चले गए। भगवान् राम आगे बढ़ रहे थे तो श्री सीताजी ने भगवान् से कहा-जल लाने के लिए गए हुए श्री लक्ष्मण

लड़के हैं, अतएव आगे बढना ठीक नहीं है। हे प्रिय! वृक्ष की छाया में घड़ी भर खड़ा होकर आप उनके आने की प्रतीक्षा कर लीजिए। मैं तब तक आपके पसीने को पोंछ दूं। जलती हुई धूल में पैर जल रहे होंगे। सीताजी की उपर्युक्त बातों को सुनकर भगवान् राम ने समझ लिया कि सीताजी थक गयी हैं। वे बैठ गये और देर तक अपने पैरों के काँटे निकालते रहे। सीताजी भी इस बात को समझ गयीं कि श्री राम के पैरों में काँटा नहीं गड़ा है, वे मुझे सुस्ताने के लिए देर तक काँटा काढ़ने का बहाना कर रहे हैं। अपने प्रियतम के इस प्रकार के प्रेम को देखकर श्री जानकी जी का सम्पूर्ण शरीर रोमाञ्चित हो गया और आँखों से प्रेम के आँसू बहने लगे।

विशेष— इस पंक्ति में गोस्वामी जी ने श्री राम और सीता के परस्पर के सात्विक स्नेह का वर्णन किया है।

(३) साँवरे गोरे सलोने सुभाय------------------सकुचात हियो है।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत कवित्त काव्य संकलन के 'वन पथ पर' शीर्षक से उद्धृत है। इस कवित्त छन्द के प्रणेता गोस्वामी तुलसीदासजी हैं। वन में जाते हुए श्रीराम सीता और लक्ष्मण को देखकर मार्ग के लोगों के मन की भावना तथा उनकी परस्पर की बातों का मनोहर वर्णन इस कवित्त में किया गया है।

भावार्थ— वन में जाते हुए श्री राम लक्ष्मण और जानकी को देखकर ग्रामवासी आपस में बातें करते हुए कहते हैं; ये दोनों श्री राम और लक्ष्मण श्याम और गौर वर्ण के हैं। इनकी सुन्दरता कामदेव से भी अधिक है। इनके शरीर पर धनुष बाण और तरकस सुशोभित हो रहे हैं, जिस पर जटा बनाये रखने के कारण इन लोगों ने मुनि का वेष बना लिया है। इन दोनों के साथ ऐसी नारी है जिस का मुख मण्डल चन्द्रमा के समान मनोहर है; उसके रूप के सामने कामदेव की पत्नी रति का रूप फीका लगता है; किन्तु दुःख की बात यह है कि इनके पैरों में जूते भी नहीं हैं। ये पैदल वन में चल रहे हैं। ये कैसे चल रहे हैं? यह सोचकर मन में बड़ा संकोच होता है।

(४) रानी मै जानी अयानी---------------------बनवास दियो है।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रकृत अवतरण 'काव्य संकलन' के 'वन पथ पर' शीर्षक से उद्धृत है। इस कवित्त छन्द में महाकवि गोस्वामी तुलसीदासजी ने ग्रामवासियों द्वारा वन में जाते हुए श्री राम, लक्ष्मण और सीता को देखकर कैकयी को दो वरदान दिये जाने का वर्णन किया है।

भावार्थ— श्री राम लक्ष्मण और जानकी को रानी कैकयी ने चौदह वर्षों के लिए वनवास में भिजवाया है। इस बात को जब ग्राम बधुएँ जान गयीं तो उन सबों ने कहा कि मैं समझती हूँ कि रानी महा अज्ञानी है। उसका हृदय तो वज्र और पत्थर से भी कठोर हे। वह राज के कार्य की होने वाली क्षति को भी नहीं समझ पाती है। वह तो नारियों के नाम पर कलंक जैसी है। इस प्रकार के मनोहर शरीर वाले श्री राम, लक्ष्मण, और सीता के; अपने से विछुड़ जाने पर इनके जो प्रेमी लोग हैं, वे कैसे जीवित रहते होंगे। हे सखि! यो लोग तो अपनी आँखों में बसा लिए जाने के योग्य हैं। जी चाहता है कि इन सबों को सदा देखते ही रहें। इन लोगों को किस लिए रानी ने बनवास दिया यह समझ में नहीं आता है। इसमें मैं तो रानी का केवल अज्ञान ही कारण प्रतीत होता है।

(५) सीस जटा, उर बाहु बिसाल------------------सखि रावरे को हैं।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह कविता 'काव्य संकलन' के 'वन पथ पर' शीर्षक से उद्धृत है। इसके रचयिता गोस्वामी तुलसीदासजी हैं। वन मार्ग में चलते हुए राम, लक्ष्मण और सीताजी को देखकर, श्री राम के अतिलौकिक सौन्दर्य से प्रभावित ग्राम नारियाँ सीताजी से उनके संबन्ध के विषय में पूछती हैं।

भावार्थ— सीताजी से मार्ग की ग्राम नारियाँ पूछती हैं कि जिनके सिर पर जटा है, जिनकी भुजाएँ लम्बी और विस्तृत (चौडी) छाती है, नेत्र लाल हैं और भौहें तिरछी सी हैं; जो तरकस, धनुष, एवं बाण धारण किएं हुए हैं। इस प्रकार से जो वन मार्ग में बहुत अधिक सुशोभित हो रहे हैं। तुम अपने स्वाभाविक ढंग से जिन्हें बारम्बार देखती हो, इससे हम लोगों के मन में भी बडी प्रसन्नता होता है। सखि ! ये साँवले वर्ण के जो पुरुष हैं तुम्हारे कौन लगते हैं?

(६) सुनि सुन्दर बैन------------------------------मंजुल कंज कली।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह कवित छन्द 'काव्य संकलन' के 'वन पथ पर' शीर्षक से उद्धृत है। इस कवित्त में गोस्वामी तुलसीदास ने वर्णन किया है कि श्री सीताजी ने अपने ईशारे और मन्द मुसुकान के द्वारा ही ग्राम बधुओं को बतला दिया कि श्याम वर्ण के श्री राम उनके प्राण प्रियतम हैं।

भावार्थ— ग्राम वधुओं ने बड़े ही प्रेम पूर्वक सीताजी से पूछा था कि श्याम वर्ण के पुरुष तुम्हारे कौन लगते हैं ? ग्राम नारियों की वह वाणी इतनी मधुर थी कि जैसे वह अमृत के रस में सानी गयी हो। अर्थात् उसमें बड़ी ही मधुरता थी। उस बात को सुनकर चतुर श्री जानकी ने आँखों के इशारे और मधुर मुसुकान के

द्वारा वे श्याम वर्ण के श्री राम हमारे प्राण स्वरूप हमारे पतिदेव हैं, बतला दिया और वे अपने मार्ग पर आगे बढ गयीं। तुलसीदासजी कहते हैं कि उस समय उनको खड़ा होकर देखने वाली नारियाँ ऐसी लग रही थीं जैसे अनुराग रूपी सरोवर में सूर्यदेव के प्रकाशित होने पर सबों के मन रूपी कमल की कलियाँ विकसित हो गयी हों।

विशेष— इस छन्द की अन्तिम पंक्ति में रूपक एवं उत्प्रेक्षा अलंकारों की संसृष्टि है।

मीरा बाई–पदावली

(१) बसो मेरे नैनन में-------------------------------भक्त वच्छल गोपाल।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह पद काव्यसंकलन ग्रन्थ के 'मीराबाई पदावली' शीर्षक से उद्धृत है। इसमें मीराबाई श्री भगवान् से अपने नेत्रों में निवास करने के लिए प्रार्थना करती हैं। इसमें उन्होंने भगवान् श्रीकृष्ण के अपने मनोनुकूल रूप का वर्णन किया है।

भावार्थ— मीराबाई इस पद में भगवान् श्री कृष्ण से प्रार्थना करती हैं कि हे नंदलाल आप मेरे नेत्रों में नित्य निवास करें। अर्थात् मैं आपका हमेशा दर्शन करती रहूँ। आपके सिर पर मोर का मुकुट है, मकराकृति कुण्डल है तथा ललाट पर आप लाल तिलक लगाए हुए हैं। आपकी मूर्ति प्यारी है, वर्ण आपका साँवला है तथा नेत्र बड़े-बड़े हैं। सुधा के रस से परिपूर्ण आपके ओष्ठों पर मुरली सुशोभित हो रही है। हृदय पर बैजयन्ती की माला लटक रही है। आपके कमर में छोटी-छोटी घंटी लगी है और आपके नूपुर के शब्द अत्यन्त सुखप्रद हैं। मीराबाई कह रही हैं कि प्रभु श्रीकृष्ण संतों को सुख देने वाले है। वे स्वभावतः भक्त वत्सल हैं।

(२) पायो जी म्हैं तो-------------------------------हरख-हरख जग गायो।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत पद काव्यसंकलन नामक पुस्तक के मीराबाई के 'पदावली' शीर्षक से लिया गया है। इसकी गायिका मीराबाई हैं। इस पद में वे बतलाती हैं कि मेरे सद्गुरु ने रामनाम के उपदेश रुपी अनमोल रत्न को मुझे प्रदान कर दिया है।

भावार्थ— मीराबाई इस पद में बतला रहीं हैं कि मैनें रामनाम रूपी अनमोल रत्न को प्राप्त कर लिया है। यह एक ऐसा रत्न है जिसका मूल्य कोई आँक ही नहीं

सकता है। मेरे सद्गुरु ने मुझ पर कृपा की और मुझे अपना लिया फिर उन्होंने इस राम-नाम रुपी अनमोल रत्न को प्रदान किया। संसार के लोग तो यहाँ आकर अपनी पूर्व जन्म की पूँजी गवाँ बैठेते हैं। किन्तु सद्गुरु की कृपा से मैंने अपने अनेक जन्म की पूँजी प्राप्त कर ली है। यदि इसको खर्च किया जाय तो घटता नहीं है, इसको कोई चोर भी नहीं चुरा सकता है। यह तो प्रतिदिन सवा गुना बढता ही जाता है। मेरे लिए सत्य ही नाव है, इस नाव को पार लगाने वाले सद्गुरु हैं। इस नाव के माध्यम से भवसागर को पार किया जा सकता है। मीराबाई कह रही हैं कि मेरे तो एकमात्र स्वामी श्री गिरधर नागर हैं। मै खूब खुश होकर बारम्बार उनके यश का गान करती हूँ।

विशेष— इस पद में रूपक अलंकार है।

(३) माई री मैं तो लियो----------------------------पूरब जनम को कौल।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत पद काव्यसंकलन के मीराबाई प्रणीत 'पदावली' से लिया गया है। इस पद में मीराबाई कह रही हैं कि मैंने तो गोविन्द को अपनी भक्ति के बल पर खरीद लिया है।

भावार्थ— मीराबाई कहती हैं कि मैंने तो गोविन्द भगवान् श्री कृष्ण को खरीद लिया है। कोई तो कहता है कि मीरा ने गोविन्द को प्रकट रूप से अपना लिया है, तो कोई कहता है कि यह काम मीरा ने चुपके-चुपके किया है। किन्तु मैंने तो ढिंढोरा पीटकर इस काम को किया है। कोई मेरे इस सौदे को मँहगा बतलाता है तो कोई सस्ता बतलाता है। चाहे जैसा हो मैंने तो भक्ति के बदले में गोविन्द को तराजु के पलड़े पर तौल कर ले लिया है। कोई गोविन्द को काला बतलाता है तो कोई गोरा; किन्तु मेरे लिए तो गोविन्द अमोल हैं; उनको मैंने खरीदा है। मेरा यह काम किसी से छिपा नहीं है। मैंने इस काम को खूब सोच-समझकर किया है, और सबों को जनाकर किया है। मीराबाई कहती हैं कि श्रीकृष्ण ने पूर्व जन्म में ही मुझे दर्शन देने की प्रतिज्ञा की थी; अतएव इस जन्म में उन्होंने मुझे दर्शन दिया है।

(४) हरी तुम हरौ जन की भीर----------------------------कँवल पे सीर।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह पद काव्यसंकलन नामक ग्रन्थ के मीराबाई प्रणीत 'पदावली' शीर्षक से उद्धृत है। इस पद में मीरा श्री भगवान् से प्रार्थना करती हैं कि हे भगवन् आप ही अपने भक्तों की लाज रखने वाले हैं।

भावार्थ— मीराबाई कहती हैं कि हे हरे ! भक्तों के ऊपर आयी हुयी विपत्ति

का निवारण करने वाले केवल आप ही हैं। आपने द्रौपदी की रक्षा उनके वस्त्रों को बढ़ाकर किया। उनके वस्त्रों को बढ़ाने में आपने थोड़ी सी भी देर नहीं की। अपने भक्त प्रह्लाद के लिए आपने नरसिंह रूप धारण किया तथा हिरण्यकशिपु को मारने में आपने थोड़ी सी भी देर नहीं की। जिस समय ग्राह से ग्रस्त होकर गजराज पानी में डूबा जा रहा था, उसको बचाने वाला कोई भी नहीं था, उस समय आपने गजराज को बचा लिया और उसे पानी से बाहर निकाला। मैं तो आपकी दासी हूँ, आपकी शरणागत हूँ। आपके चरण कमल पर मैंने अपना सिर रख दिया है, मेरी लाज अब आपके ही हाथ में है। आप उसे अवश्य बचायेंगे यह मुझे विश्वास है।

(५) हे री मैं तो प्रेम दिवाणी------------------------------सँवलिया होय।

सन्दर्भ एवं प्रसंग– यह पद काव्यसंकलन के मीराबाई पाठ के 'पदावली' शीर्षक से अवतीर्ण है। इस में मीराबाई अपनी मानसिक व्यथा को अभिव्यक्त करती हैं।

भावार्थ– मीराबाई कहती हैं कि मैं तो श्री हरि के प्रेम में पागल हो गयी हूँ। मेरे मन में अपने प्रियतम प्रभु को पाने की जो उत्कट इच्छा है, उसे कोई भी नहीं समझ रहा है। मेरे प्रियतम की शय्या तो शूली के ऊपर बिछी हुई है, उनके साथ मैं कैसे सोऊँ यह मुझे नहीं समझ में आता है। मेरे प्रियतम की शय्या सन्निकट भी नहीं है, वह आकाशमण्डल में है, उनसे किस तरह मैं मिलूँ यही मैं भी नहीं समझ पाती हूँ। किसी घायल की मनोदशा को तो वही समझ सकता है जो स्वयं घायल हुआ हो, अथवा जिसके हृदय में स्नेह की आग धधक रही हो, वही उस प्रेम में घायल मनवाले की स्थिति को जान सकता है। किसी जौहरी की मनः स्थिति को कोई जौहरी ही जान सकता है अथवा जो स्वयम् जौहर हो वह उसे समझ सकता है; कोई सामान्य व्यक्ति उसे नहीं समझ सकता।

मैं तो अपने प्रियतम के वियोग व्यथा में चारो तरफ कष्ट से त्राण पाने के लिए भटक रही हूँ; उसे कोई नहीं सूझाता है। मेरे कष्ट को दूर ही करने वाला कोई भी वैद्य नहीं मिलता है। मीराबाई कह रही हैं कि मेरा कष्ट तो तब दूर हो सकता है, जब मेरे लिए वैद्य बनकर स्वयम् मेरे प्रियतम भगवान् श्री कृष्ण मिल जायँ। उनके विना मेरी इस वेदना की शान्ति नहीं हो सकती है।

(६) मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो------------------------तारो अब मोई।।

सन्दर्भ प्रसंग– प्रस्तुत पद काव्यसंकलन ग्रन्थ के मीराबाई पाठ के 'पदावली'

शीर्षक से अवतीर्ण है। इस पद में मीराबाई बतला रही हैं कि मेरा एकमात्र संबन्ध भगवान् श्री कृष्ण से है। उनको छोड़कर कोई भी दूसरा व्यक्ति मेरा अपना नहीं है मैं केवल उन्हीं को अपना मानती हूँ।

भावार्थ– मीराबाई कहती हैं कि मेरा तो एकमात्र; अपना व्यक्ति गोवर्धन धारी भगवान् गोपाल ही हैं, उनको छोड़कर मेरा अपना कोई भी व्यक्ति नहीं है, जिनके सिर पर मोर के पंखों का बना हुआ मुकुट है; वे भगवान् श्री कृष्ण ही मेरे पति हैं। जितने भी माता, पिता, भाई बन्धु इत्यादि हैं ये सब के सब पराये हैं इनको मैं अपना नहीं मानती हूँ। अब तो मैंने अपनी कुल की मर्यादा का परित्याग कर दिया है। कोई भी मेरा क्या बिगाड़ लेगा ?

सन्तो के सन्निकट में बैठ-बैठकर मैंने लोक की लाज गँवा दी है। अपने आँसू के जल से सींच-सींच कर भगवान् के साथ किए गए प्रेम की लता को मैंने बोया है और अब भगवत् प्रेम की लता चारो ओर फैल गयी है। उससे आनन्द रूपी फल की प्राप्ति हो रही है। जब मैं भगवद् भक्तों को देखती हूँ; तो मेरे मन में प्रसन्नता होती है और जब मैं संसारी जीवों को देखती हूँ तो मुझे रुलाई आती है उससे कष्ट ही होता है। मैं तो गिरधर लाल की दासी हूँ, अब मेंरा उद्धार वे ही कर सकते हैं। उनको छोड़कर मेरा उद्धार करने वाला कोई भी दूसरा नहीं है।

विशेष– इस पद में रूपक अलंकार है।

(६) नहि ऐसो जनम बारम्बार------------------------जीवणा दिन चार

सन्दर्भ प्रसंग– यह पद काव्यसंकलन के मीराबाई पाठ के 'पदावली' शीर्षक से अवतीर्ण है। इस पद में मीराबाई बतला रही हैं कि मानव जीवन बड़ा ही दुर्लभ है। इसकी सफलता यही है कि इसी जन्म में भगवान् की भक्ति करके संसार सागर को पार कर लिया जाय।

भावार्थ– मीराबाई बतला रही हैं कि मनुष्य का जन्म बार-बार नहीं मिलता है। जब जीव का बहुत बड़ा पुण्य प्रकट होता है तो उसे मनुष्य का जन्म मिलता है। देखने में तो यह शरीर प्रत्येक क्षण बढता जाता है, किन्तु बढने के साथ-साथ यह घटता भी जाता है। अवस्था ज्यों-ज्यों बढ़ती है आयु उसी क्रम से घटती जाती है। जिस तरह वृक्ष का जो पत्ता टूट जाता है, वह फिर उस वृक्ष में जाकर नही जूटता। उसी तरह जीवन का जो दिन बीत जाता है वह फिर जीवन में कभी नहीं आने वाला है। यह संसार-सागर अत्यन्त जोर-शोर से लहरा रहा है, इसकी धारा विषम तथा गहरी है। यदि तुम चाहते हो कि इस संसार-समुद्र के पार चला

ऊँ तो राम नाम का वेड़ा बाँध लो। ऐसा करके तुम भव सागर के पार उतर ओगे।

संसार रूपी चौराहे पर ज्ञान की चौपड़ बिछी हुई है। इस चौपड़ में यदि तुम तना चाहते हो तो परमात्मा की सूरत (ध्यान) रूपी पासे का खेल-खेलो। यदि ऐसा करते हो तो फिर इस दुनिया में जीत जाओगे। तुम हार नहीं सकते। जगत के जितने भी साधु, सन्त, महन्त, तथा ज्ञानी पुरुष हैं वे केवल इसी त का उपदेश देते हैं। मीराबाई तो गिरधर लाल की ही दासी है। इस संसार में -चार दिन ही जीना है। अतएव इस संसार से विरक्त होकर श्री कृष्ण की राधना में लीन हो जाओ।

विशेष– इस पद में रूपक अलंकार है।

नरोत्तमदास सुदामाचरित

(१) सिच्छक हौं सिगरे जग को------------------------केवल भिक्षा।

सन्दर्भ प्रसंग– यह कवित्त छन्द काव्यसंकलन के नरोत्तमदास प्रणीत सुदामाचरित' शीर्षक से उद्धृत है। दारिद्र्य दोष से व्याकुल ब्राह्मण सुदामा जी की पत्नी ने भगवान श्रीकृष्ण से कुछ सम्पत्ति माँगने के लिए उन्हें द्वारकापुरी जाने की बार-बार कहा तो सुदामा जी कहते हैं, कि मैं तो ब्राह्मण हूँ, विद्वान हूँ, भिक्षचर्या ही हमारी सम्पत्ति है।

भावार्थ– सुदामा जी अपनी पत्नी से कहते हैं कि मैं तो ब्राह्मण हूँ, सम्पूर्ण जगत् को शिक्षा देता हूँ, किन्तु आज तुम मुझे ही शिक्षा दे रही हो। ब्राह्मणों का यह स्वभाव होता है कि वे तपस्या करके अपने परलोक को बनाने के लिए सदा सचेष्ट रहते हैं, उनको सम्पत्ति प्राप्त करने की इच्छा नहीं रहती है। मेरे हृदय में श्री भगवान् के चरण कमलों का निवास है। यदि तुम्हें विश्वास नहीं होता हो तो तुम मेरी बार-बार इस विषय में परीक्षा ले सकती हो। अरे बावरी (वेवकूफ) तुम को यह समझना चाहिए कि धन तो और लोगों को चाहिए, ब्राह्मणों की सम्पत्ति तो उसकी भिक्षा ही होती है। भिक्षान्न से ही वह अपना जीवन यापन करते हुए परमात्माराधन करता है।

(२) कोदो सवाँ जुरतो भरपेट------------------------फूटी कठौती।

सन्दर्भ एवं प्रसंग– प्रस्तुत पद्य काव्यसंकलन के नरोत्तमदास रचित 'सुदामा

चरित' से उद्धृत है। इस पद्य में सुदामाजी की पत्नी बतला रही है कि मेरी वेवशियाँ है, जिनके कारण मैं आपको द्वारका भेज रही हूँ, भगवान् श्री कृष्ण के पा

भावार्थ-सुदामाजी की पत्नी कहती हैं कि यदि मुझे खाने के लिए प्रति कोदो तथा साँवा का ही भात भरपेट मिल जाता तो मैं आपसे कभी दूध, दही मिठाई नहीं माँगती। जाड़े के दिन में काँपते-काँपते सारा जाड़ा बीत जाता यदि हमारे पास जाड़े में ओढ़ने के लिए वस्त्र भी होता तो मैं हठ करके आ द्वारका नहीं भेजती। मैं यह भी नहीं जानती कि श्री हरि भगवान् श्री कृष्ण आ मित्र हैं तो भी मैं आपको द्वारका भेजने का हठ नहीं करती। चूंकि हमें भरपेट भोजन भी नहीं मिला। हम बिना ओढ़ना के ही जाड़ा बिताते हैं आपके मित्र द्वारका के नाथ भगवान् श्री कृष्ण हैं; इसीलिए मैं आपको द्वा जाने के लिए प्रेरित करती हूँ। हे प्रियतम! यद्यपि हमारा तवा टूट गया है आँटा सानने की कठौत फूट गयी है। अब कष्ट सहा नहीं जाता है, इसीलिए आपको द्वारका जाने की बात कहती हूँ।

विशेष– इस कविता में सुदामा जी की पत्नी ने अपनी दीनता की पराका का सजीव वर्णन किया है।

(३) द्वारका जाहुँ जू द्वारका जाहुँ जू--------------चारि न चाँवरि में

सन्दर्भ एवं प्रसंग– यह पद्य काव्यसंकलन के नरोत्तमदास प्रणीत 'सुदा चरित' शीर्षक से लिया गया है। इस पद्य में सुदामा जी अपनी पत्नी से कहते कि तुम सदा मुझे द्वारिका जाने की बात तो कहती हो, किन्तु क्या तुम्हारे प उनको भेंट देने के लिए कुछ चावल इत्यादि है?

भावार्थ– सुदामा जी अपनी पत्नी से कहते हैं कि तुम तो रात दिन मु द्वारका ही जाने के लिए कहती रहती हो। तुमको तो झक सवार है। यदि तुम्हारी बात न मानूँ तो तुमको बड़ा कष्ट होता है। किन्तु तुम यह तो विच करो, कि वहाँ जाने के लायक क्या मेरी स्थिति है? उनके द्वार पर छड़ी धा द्वारपाल खड़े रहते हैं। बड़े-बड़े राजा तो श्री भगवान् से मिल ही नहीं पाते हमारी क्या बात है। यदि मैं वहां जाऊंगा तो उनको देने के लिए कुछ न कुछ मे पास चाहिए? किन्तु पाँच सुपारी की बात मैं क्या करूँ। मेरे पास तो चार चाव भी नहीं है कि उन्हें मैं भेंट में दे पाऊँगा। क्या भगवान् के पास खाली हाथ जाऊँ

विशेष– इस पद्य में सुदामा की अत्यन्त दीनता का वर्णन है।

(४) सीस पगा न झगा तन में------------------आपनो नाम सुदामा।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत पद्य काव्यसंकलन के 'नरोत्तमदास' प्रणीत 'सुदामा चरित' शीर्षक से लिया गया है। इस पद्य में सुदामा जी की दीन-हीनता का वर्णन-भगवान् श्री कृष्ण का द्वारपाल कर रहा है।

भावार्थ— सुदामा जी अपनी पत्नी के आग्रह को स्वीकार करके द्वारकापुरी चले गए। वहाँ पर द्वारपाल से अपना नाम भगवान् श्री कृष्ण से बतलाने के लिए उन्होंने कहा। द्वारपाल आकर भगवान् श्री कृष्ण से कहता है कि भगवन् राजद्वार पर एक दुर्बल ब्राह्मण आकर खड़ा है। उसके सिर पर न तो पगड़ी है और न तो शरीर में कुर्ता ही है। भगवन् न जाने वह ब्राह्मण किस ग्राम में रहता है ? उसकी धोती फटी हुई है और दुपट्टा बिल्कुल बदहाल है। उसको पैर में जूता पहनने का तो सामर्थ्य है ही नहीं। इस प्रकार का वह द्वार पर खड़ा दुर्बल ब्राह्मण यहाँ की सुन्दरता को देखकर चकित है। वह आप दीन दयाल को पूछ रहा है और अपना नाम सुदामा बता रहा है।

विशेष— इस पद्य में अनुप्रास अलंकार है।

(५) बोल्यो द्वारपालक 'सुदामा' नाम--------------दीनन सो माने को ?

भावार्थ एवं प्रसंग— यह पद्य काव्यसंकलन के नरोत्तमदास प्रणीत सुदामा चरित नामक शीर्षक से अवतीर्ण है। द्वारपालक के मुख से यह सुनकर कि सुदामा जी मुझसे मिलने आये हैं भगवान् सारा राज्य का कार्य छोड़कर दौड़ पड़े और सुदामा जी को प्रणाम कर उनके गले से लिपट गए।

भावार्थ- द्वारपालक के मुख से 'सुदामा पांडे' इस नाम को सुनते ही श्री भगवान् राज्य का सारा कार्य छोड़ दिए। इस प्रकार से भक्तों के मन की गति को श्री भगवान् को छोड़कर दूसरा कौन जान सकता है? द्वारका के स्वामी भगवान् दौड़कर सुदामा जी को हाथ जोड़े औरे उनके पैर पकड़ लिए। इसके पश्चात् उन्होंने सुदामा जी को अपनी छाती से लगा लिया। सुदामा जी तो दुख से सताये गये थे; किन्तु भगवान् ने उन्हें गले से लगाया। श्री भगवान् के नेत्रों में आँसू भर गए। उनसे कुशलक्षेम पूछने लगे। श्री भगवान् के स्नेह और समांदर को देखकर सुदामा जी ने श्री भगवान् से कहा कि भगवन् ! विपत्ति में कौन किसको पहचानता है? हे दया के सागर! आपने जिस तरह का सम्मान जनक व्यवहार किया, उस तरह का व्यवहार कौन कर सकता है ? हे दीनबन्धु ! दीन-दुखियों से इस प्रकार का प्रेम दूसरा कौन कर सकता है ?

(६) ऐसो बेहाल बिवाइन सों पग------------------जल सों पग धोए

सन्दर्भ एवं प्रसंग— ये पंक्तियाँ काव्यसंकलन के 'नरोत्तमदास' रचित 'सुदामा चरित' शीर्षक से ली गयी हैं। इन पंक्तियों में भगवान् श्री कृष्ण सुदामा जी की दीन-दशा को देखकर अफसोस करते हैं।

भावार्थ— भगवान् श्री कृष्ण सुदामा जी से कहते हैं कि मित्र ! आपके पैर तो बेवाइ से इस प्रकार से बेहाल हो गए हैं। अर्थात् आपके पैरों में तो अत्यधिक बेवाइ फट गयी है। आपके सारे पैर में कांटे ही कांटे चुभे हैं। मित्र आपने बहुत अधिक कष्ट भोगा है। आप आज तक हमारे पास नही आए। न जाने कितने दिन आपने कष्ट में ही बिता दिया। अपने मित्र सुदामा की दीन-दशा को देखकर करुणा के सागर श्री भगवान् करुणा से भर गए और रोने लगे। श्री भगवान् अपने मित्र की दीन दशा पर इतना रोए कि वे जल को छुए तक नहीं अपितु उन्होंने अपने आँसुओं के ही जल से सुदामा जी के पैर धो दिया।

विशेष— इस पद्य में श्री भगवान् की करुणा का वर्णन है तथा अन्तिम पंक्ति में अशियोक्ति अलंकार है।

(७) हाथ गह्यो प्रभु की कमला------------------------होन भिखारी।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह पद्य काव्यसंकलन के नरोत्तमदास प्रणीत 'सुदामा चरित' नामक शीर्षक से उद्धृत है। इस पद्य में बतलाया गया है कि श्री भगवान् ने सुदामा जी की पोटली के चावल के दो मुट्ठी खा लिए। जब वे तीसरी मुट्ठी खाना चाहते थे तो लक्ष्मी जी ने उनका हाथ पकड़ लिया और उन्हें खाने से रोक दिया।

भावार्थ— नरोत्तमदास जी कहते हैं कि भगवान् जब चावल की तीसरी मुट्ठी खाना चाहते थे तो लक्ष्मी जी ने श्री भगवान् का हाथ पकड़ लिया और कहा कि प्रभो! आज आपके मन में क्या आ गया है? आपने चावल की दो मुट्ठी को खाकर तो सुदामा जी को दो लोकों की सम्पदा प्रदान कर दी। यदि आप तीसरी मुट्ठी खाना चाहते हैं तो आप स्वयम् कहां रहेंगे ? आपको अपने भी रहने का तो कुछ ठिकाना चाहिए। आपने आज दरिद्र सुदामा को तो दो लोकों की सम्पदा प्रदान करके अपने ही समान बना दिया और तीसरी मुट्ठी खाकर क्या स्वयम् भिखारी बनना चाहते हैं?

विशेष— इस पद्य में श्री भगवान् की उदारता का वर्णन किया गया है।

रहीम (दोहा)

(१) जो रहीम उत्तम प्रकृति का करि------------------------------भुजंग।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह दोहा काव्यसंकलन 'के रहीम के दोहों' से लिया गया है। इसमें रहीम कवि बतलातें हैं कि उत्तम प्रकृति के पुरुषों पर कुसंग का दुष्प्रभाव नहीं होता।।

भावार्थ— रहीम कवि कहते हैं कि जो उत्तम प्रकृति के पुरुष होते हैं उन पर कुसंग का प्रभाव नहीं पड़ता है। चन्दन में विषैले सांप लिपटे रहते हैं किन्तु चन्दन में विष नहीं फैलता है।

विशेष— इस दोहे में अर्थान्तरन्यास नामक अलंकार है।

(२) टूटे सुजन सराहिए------------------------------टूटे मुक्ताहार।।

प्रसंग— इस दोहे में रहीम कवि बतलाते हैं कि सज्जन पुरुष बार-बार टूटकर भी जुड जाते हैं क्योंकि वे सात्त्विक प्रकृति के होते हैं।

भावार्थ— टूटे अर्थात् विछड़े हुए भी सज्जन की सराहना करनी चाहिए। यदि वे सैकड़ों बार भी टूटें विछड़ जायँ तो भी उनकी सराहना करनी चाहिए। जैसे मोती की माला बार-बार टूटती है और बार-बार जोड़ी जाती है।

विशेष— इस दोहे में दृष्टान्तालंकार है तथा अर्थगाम्भीर्य का सद्भाव है।

(३) रहिमन अँसुआ------------------------------भेद कहि देइ।

प्रसंग— इस दोहो में रहीम कवि कहते हैं कि जिसको घर से निकाल दिया जाता है वह घर के रहस्यों को सबों के समक्ष खोल देता है।

भावार्थ— रहीम कवि कहते हैं कि आँसू नेत्रों से बाहर निकाल कर हृदय में विद्यमान दुख को प्रकट करता है। यदि किसी को घर से बाहर निकाल दिया जाय तो वह घर के रहस्यों को क्यों नहीं बतला देगा?

(४) रहिमन निज मन की------------------------------कोय।

प्रसंग— इस दोहे में रहीम कवि यह बतलाते हैं कि अपना दुख अपने ही सहने की कोशिश करनी चाहिए दूसरे लोग तो सुनकर मजाक ही उड़ायेंगे।

भावार्थ— रहीम कवि कहते हैं कि अपने मन में विद्यमान कष्ट को अपने मन में ही छिपाकर रखना चाहिए। दूसरों से नहीं कहना चाहिए, क्योंकि उसे सुनकर दूसरे लोग तो हँसी भर करेंगे। कोई उस दुःख में हिस्सा, नहीं बँटायेगा।

(५) रहिमन धागा प्रेम का----------------------------जुरै गाँठ परि जाय

प्रसंग— इस दोहे में रहीम कवि बतलाते हैं कि कभी भी स्नेह विच्छि सूत्रों को कभी करना चाहिए। स्नेह में कटुता तथा विच्छेद होने पर तो उसमें पु वह बात नहीं आती है जो पहले रहती है।

भावार्थ— रहीम कवि कहते हैं कि कभी भी प्रेम के सूत्र को तोड़ना न चाहिए क्योंकि दो प्रमियों का मन जब टूटता है तो वह जल्दी जुटता नहीं है, और यदि किसी भी तरह जुट भी गया तो उसमें उसी तरह से शंका की गांठ पड़ जा है जिस तरह से टूटे हुए धागे को जोड़ने पर उसमें गांठ पड़ जाती है।

विशेष— इस दोहे में प्रेम को धागे के समान बतलाया गया है। इस अर्थान्तरन्यासालंकार है।

(६) रहिमन रहिला की भली----------------------------मैदा जरि जाय।

प्रसंग— इस दोहे में रहीम कवि यह बतला रहे हैं कि प्रेमपूर्वक यदि को छोटी भी वस्तु मिल जाय तो अच्छी है, और यदि बिना प्रेम की अच्छी वस्तु बुरी होती है।

भावार्थ— रहीम कवि कहते हैं कि प्रेमपूर्वक यदि कोई चने की ही रोटी देता है तो वह अच्छा है। किन्तु यदि मन में बुरी भावना रखकर कोई मैदे की रोटी देता है तो वह रोटी नहीं लेनी चाहिए। क्योंकि उसमें भाव की गंदगी ब रहती है।

(७) तरुवर फल नहिं----------------------------संचहि सुजान।

प्रसंग— इस दोहे में रहीम कवि कहते हैं कि सज्जन पुरुष परोपकार के लिए ही संपत्ति का संचय करते हैं।

भावार्थ— रहीम कवि कहते हैं कि पेड़ स्वयम् अपना फल नहीं खाते है और न तो सरोवर स्वयम् अपना जल पीते हैं। इसी तरह जो सज्जन पुरुष होते हैं, वे परोपकार करने के लिए संपत्ति का संचय करते हैं। केवल अपने स्वार्थ की सिद्धि धन का प्रयोजन नहीं होता है।

(८) यों रहीम सुख होत हैं----------------------आँखिन को सुख होत॥

प्रसंग— इस दोहे में रहीम कवि बतलाते हैं कि अपने वंश की वृद्धि सबको अच्छी लगती है।

भावार्थ— रहीम कवि कहते हैं कि अपने बढ़ते हुए गोत्र को देखकर उसी तरह से सब को सुख मिलता है जिस तरह से जब किसी प्रेमी अथवा प्रेमिका की

ड़ी-बड़ी आँखों को देखकर आँखों को ही सुख मिलता है।

(९) रहिमन वे नर मर----------------------------नाहिं।

प्रसंग— इस कविता में रहीम कवि कहते हैं कि माँगना तो निकृष्ट कर्म है ही किन्तु माँगने वाले को देने से इन्कार करना उससे भी निकृष्ट कर्म है।

भावर्थ— रहीम कवि कहते हैं कि जो व्यक्ति किसी से कोई याचना करने जाता है, वह उस याचना करने से पूर्व ही मर जाता है। उसका अपना स्वाभिमान समाप्त हो जाता है। किन्तु इस माँगने वाले से वह आदमी अधिक निकृष्ट है जो याचना करने वाले को देने से इनकार कर देता है।

(१०) रहिमन ओछे नरन ते-------------------दुहूं भाँति विपरीत।।

प्रसंग— इस दोहे में रहीम कवि यह बतलाते हैं कि छोटे विचार के लोगों से किसी भी प्रकार का संबन्ध न रखें यह सब से अच्छी बात है।

भावार्थ— रहीम कवि कहते हैं कि छोटे विचार वाले लोगों से न तो प्रेम करना ठीक है और न बैर करना ही। ऐसे लोगों से बैर और प्रीति दोनों छोड़ देना चाहिए। कुत्ता यदि काट ले तो भी बुरा होता है और यदि चाट ले तो भी।

विशेष– इस दोहे में अर्थान्तरन्यासालंकार है।

रसखान सवैया

(१) मानुष हों तो वही रसखानि-----------------कदम्ब की डारन।।

सन्दर्भ— प्रस्तुत सवैया काव्य संकलन के रसखान के सवैया शीर्षक से उद्धृत है।

प्रसंग— इस सवैया में रसखान कवि कहते हैं कि मेरा चाहे जिस योनि में जन्म हो किन्तु हो तो वृन्दावन और गोकुल में ही।

भावार्थ— रसखान कवि कहते हैं कि यदि मेरा जन्म मनुष्य योनि में हो तो मेरा निवास स्थान व्रज एवं गोकुल के गाँवों के ग्वालों के बीच बने। यदि मैं पशु योनि में जन्म लूँ तो मेरा वश चले तो सदा नन्दबाबा के गायों के बीच में ही चरा करूँ। यदि अपने कर्म के अनुसार मैं पत्थर ही हो जाऊँ तो फिर उसी पर्वत का पत्थर होऊँ जिस पर्वत को भगवान श्रीकृष्ण ने इन्द्र के उत्पात के कारण अपने हाथ का छाता बनाया था। यदि मैं पक्षी ही होऊँ तो में पक्षियों के साथ मिलकर यमुना के तट पर लगे हुए कदम्ब वृक्षों की डालियों पर ही निवास करूँ।

विशेष— इस सवैया-छन्द में रसखान कवि ने उस पौराणिक आख्यान निर्देश कया है, जिसके अनुसार भगवान् श्रीकृष्ण ने गोपों द्वारा प्रतिवर्ष की वाली इन्द्र पूजा को रोक-कर गोवर्धन पर्वत की पूजा करवाया था। नाराज इन्द्र ने गोकुल को विनष्ट कर देने की इच्छा से सात दिन तक लगातार वर्षा किन्तु भगवान् श्रीकृष्ण ने अपने एक हाथ पर गोवर्धन पर्वत को उठाकर गो और ग्वालों की रक्षा की।

(२) धूरि भरै अति सोभित श्याम जू-------------------माखन रो

प्रसंग— इस सवैया छन्द में रसखान कवि ने भगवान श्रीकृष्ण के सौन्दर्य का बड़ा ही मनोरम वर्णन किया है।

भावार्थ— रसखान कवि कहते हैं कि भगवान् श्री कृष्ण बाल क्रीड़ा के समय धूल से धूसरित हो जाने पर भी अत्यन्त सुन्दर लगते हैं। उनके सिर बनी हुई बालों की चोटी भी अत्यन्त सुन्दर लगती है। वे खेलते हुए और खाते जब आँगन में चलते हैं तो उनके पैरों की नूपुर सुन्दर आवाज करती है और पीला कच्छा पहने हुए हैं। रसखान कवि कहते हैं कि भगवान श्रीकृष्ण के सौन्दर्य को देखकर कामदेव अपनी करोड़ों कलाओं को भी तुच्छ समझते हैं। कौए का भाग्य कितना बड़ा है कि, खाते हुए श्री भगवान के हाथ से माखन रोटी लेकर भाग गया।

विशेष— इस सवैया में अनुप्रासालंकार है।

(३) जा दिन ते वह नंद का छोहरा-------------------बिकाइ गयो

प्रसंग— इस सवैया छन्द में रसखान कवि भगवान् श्रीकृष्ण के मनोमोह सौन्दर्य का वर्णन करते हैं।

भावार्थ— रसखान कवि कहते हैं कि जिस दिन से वे नन्दजी के भगवान् श्रीकृष्ण इस वन में गायों को चराकर चले गये हैं, उस दिन से तो हृदय कुछ टोना सा समा गया है। लगता है कि श्रीकृष्ण हमें टोना करके चले गए। गा को चराते समय वे अपनी मोहिनी मुरली पर तान बजाते और गाते थे एवं गा को रिझाने का काम करते थे। उस दिन से कोई भी किसी की परवाह नहीं करत लगता है कि सम्पूर्ण व्रज के लोग उस श्रीकृष्ण के हाथों बिक गए हैं। सबों को श्री कृष्ण की ही याद बनी रहती है।

विशेष— इस सवैया छन्द में अनुप्रासालंकार है।

कान्ह भये बस बाँसुरी के----------------------बस बाँसुरी रहिहै।

प्रसंग— इस सवैया छन्द में रसखान कवि गोपियों की मनोदशा का वर्णन कर रहे हैं। गोपियों के मन में है कि बाँसुरी ही हम लोगों की सौतन है। श्रीकृष्ण इसके ही बस में रहते हैं।

भावार्थ— गोपियाँ आपस में बातें कर रही हैं कि अब तो श्रीकृष्ण बाँसुरी के ही वश में हो गए हैं। वह रात-दिन श्री कृष्ण के संग लगी रहती है। कभी उसका साथ श्रीकृष्ण छोड़ते ही नहीं। हम लोगों से उस सौत का संताप नहीं सहा जा रहा है। जिस बाँसुरी ने सबों के मन को मोह लेने वाले श्रीकृष्ण के भी मन को मोह लिया है, वह तो हमं लोगों को रात-दिन संतप्त करती ही रहेगी। आओ हम सब लोग व्रज छोड़कर यहाँ से भाग चलें। अब तो इस व्रज में अकेली बाँसुरी ही श्रीकृष्ण के साथ रहेगी। यहाँ हम लोगों की कौन सी आवश्यकता है? यह बाँसुरी हम लोगों को उसी तरह से अधिक दुःख दे रही है, जिस तरह से कोई भी सौतन अपनी सौतन को अनेक प्रकार से कष्ट देती रहती है।

विशेष— इसं सवैया छन्द में बाँसुरी में नायिकात्व की प्रतीति व्यंजित होती है।

(५) मोर पखा सिर ऊपर--------------------------अधरा न धरौंगी।।

प्रसंग— इस सवैया छन्द में रसखान कवि एक गोपी की बात का अनुवाद करते हैं। वह कहती है कि मैंश्री कृष्ण के सम्पूर्ण स्वांग को तो बना लूँगी, किन्तु उनकी मुरली को अपने अधरों पर नहीं रखं सकती, क्योंकि वह तो हमारी सौत बन गयी है और सौत को इस तरह से समादृत नहीं किया जा सकता है।

भावार्थ— रसखान कवि कहते हैं कि गोपी कहती है कि हे सखी, मैं अपने सिर पर मोर का पंख रख लूँगी, गले में गूँजे की माला भी श्रीकृष्ण के समान पहन लूँगी, मैं पीताम्बर ओढ़कर और लकुटी (लाठी) हाथ में लेकर वन में गोधन तथा ग्वालों के साथ चलती रहूँगी जो श्रीकृष्ण को अच्छा लगता है उस सम्पूर्ण स्वांग को बना लूँगी, किन्तु श्रीकृष्ण की उस मुरली को जिसे श्रीकृष्ण ने अपने अधरों से लगाया है, उसको अपने अधरों से नहीं लगा सकती। वह हमारी सौत है। वही श्रीकृष्ण को अपने माया जाल में फुसलाकर उनको हमलोगों से सदा अलग किये रहती है।

बिहारी लाल-भक्ति

(१) मेरी भव बाधा हरौ------------------------------दुति होय।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह दोहा काव्य संकलन में संगृहीत बिहारी कवि भक्ति शीर्षक से उद्धृत है। इस दोहे में बिहारी कवि श्री राधाजी की स्तुति करते हैं।

भावार्थ— मेरी संसार रूपी बाधा को वे ही राधाजी दूर करें जिनके शरीर की छाया पड़ने से भगवान् श्यामसुन्दर के शरीर की कान्ति हरी-हरी सी प्रतीत होने लगती है। इस दोहे के माध्यम से कवि ने श्री राधाजी को संसार से पार करने वाली बतलाया है।

(२) सोहत ओढै पीत पट------------------------------पर्‌यो प्रभात।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— (१) यह दोहा काव्य संकलन में संगृहीत बिहारी कवि के भक्ति शीर्षक से उद्धृत है। इस दोहे में बिहारी लाल जी पीताम्बरीधारी श्रीकृष्ण भगवान् की अत्यन्त मनोहर शोभा का वर्णन करते हैं।

भावार्थ— अपने श्यामसुन्दर शरीर पर पीताम्बर धारी भगवान् श्री कृष्ण की शोभा उस तरह प्रतीत होती है जैसे मानो नीलमणि पर्वत के ऊपर प्रातःकालीन सूर्य की पीली-पीली किरणें छिटक गयी हों।

विशेष- इस दोहे में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

(३) अधर धरत हरि के------------------------------इन्द्रधनुष रंग होति।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह दोहा काव्य संकलन में संगृहीत बिहारी कवि के भक्ति शीर्षक से उद्धृत है। इस दोहे में बिहारी लाल जी भगवान श्रीकृष्ण के हरे बाँस की वाँसुरी के वादन काल की शोभा का वर्णन कर रहे हैं।

भावार्थ— जिस समय भगवान हरे बाँस की बाँसुरी को वजाने के लिये अपने लाल-लाल ओठों पर रखते हैं, उस समय उस हरी बाँस की बाँसुरी पर उनके ओष्ठों, नेत्रों, पीताम्बर तथा शरीर इन सबों की कान्ति मिल जाती है और हरी बाँसुरी का रंग इन्द्रधनुषी हो जाता है। जिस तरह इन्द्र धनुष में अनेक रंगों का संयोग होता है उसी तरह इस बाँसुरी में भी अनेक रंग सक्रान्त हो जाते हैं।

(४) या अनुरागी चित्त की------------------------------उज्जलु होइ।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह दोहा काव्य संकलन में संगृहीत बिहारी कवि के भक्ति शीर्षक से उद्धृत है। इस दोहे में बिहारी लाल जी भगवान श्याम सुन्दर के अनुराग के रंग में रंगे हुए अन्तःकरण का वर्णन कर रहे हैं।

भावार्थ— मेरे इस श्याम सुन्दर के अनुराग में रंगे हुए मन की स्थिति को कोई समझ नहीं पाता है। वह ज्यों-ज्यों श्याम सुन्दर के अनुराग के रंग में डूबता जाता है त्यों-त्यों उजला होता है। अर्थात् श्रीकृष्ण प्रेम में पागल मन की सारी वासनाएँ रूपी कालिमा घुल जाती है और अन्तःकरण सात्त्विक हो जाता है।

विशेष— इस दोहे में विरोधाभास अलंकार है।

(५) जगत् जनायो जिहिं सकल----------------------देखी जांहि।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह दोहा काव्य संकलन में संगृहीत बिहारी कवि के भक्ति शीर्षक से उद्धृत है। इसं दोहा में बिहारी कवि कहते हैं कि परमात्मा ही सम्पूर्ण ज्ञानों का साधन है, किन्तु उसे सामान्य ज्ञान के द्वारा जानना कठिन है।

भावार्थ— जिस परमात्मा ने सम्पूर्ण जगत् को ज्ञान प्रदान किया है। जीव अपने सांसारिक माया जाल में फंसकर उस परमात्मा की ओर से पराङ्मुख हो जाता है। उसे नहीं जान पाता है। उदाहरणार्थ मनुष्य आँखों के द्वारा ही समस्त वस्तुओं को देखता है किन्तु वह अपनी आँख को स्वयं नहीं देख पाता है। उसको देखने के लिए तो दर्पण रूपी साधन की आवश्यकता होती है। उसी तरह से परमात्मा को जानने के लिए गुरू रूपी साधन की आवश्यकता होती है।

विशेष— इस दोहे में अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

(६) सीस मुकुट कटि काछनी----------------------बिहारी लाल।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह दोहा काव्य संकलन में संगृहीत बिहारी कवि के भक्ति शीर्षक से उद्धृत है। इस दोहे में बिहारी कवि अपने मनोनुकूल श्री कृष्ण भगवान के रूप का निर्देश करते हैं।

भावार्थ— बिहारी कवि कहते हैं कि हे भगवन् ! श्रीकृष्ण ! आप जिस रूप से मेरे मन में सदा निवास करें वह यह है कि आपके सिर पर मुकुट हो, कमर में काँछनी आप पहने हों, आपके हाथ में मुरली हो और हृदय पर माला लटक रही हो, इसी रूप में आप मेरे मन में सदा बिहार करते रहें।

(७) जप माला छापा----------------------------साँचे राँचे राम।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह दोहा काव्य संकलन में संगृहीत बिहारी कवि के भक्ति शीर्षक से उदृधृत है। इस दोहे में बिहारी कवि कह रहे हैं कि परमात्मा दिखावे से नहीं बल्कि भक्ति की वास्तविकता से प्रसन्न होता है।

भावार्थ— बिहारी कवि कहते हैं कि जपमाला लिए रहने, छाप लगाने, अथवा तिलक लगाने से कोई भी काम नहीं बनने वाला है। इन बाह्याडम्बरों से

परमात्मा की प्राप्ति असंभव है। जब तक मन कच्चा है परमात्मा में अटल वि नहीं है तब तक ये सारी दिखावे की चीजें व्यर्थ हैं। साँचे मन से ही आरा करने से परमात्मा की प्राप्ति संभव है।

(८) चटक न छाड़त घटत हूँ-------------------------चोल रंग चं

सन्दर्भ एवं प्रसंग– यह दोहा काव्य संकलन में संगृहीत बिहारी की भक्ति शीर्षक से उद्धृत है। इस दोहें में बिहारी कवि कहते हैं कि सज्जनों क स्नेह घट जाने पर भी विकृत नहीं होता है उसमें वास्तविकता तथा सात्वि बनी रहती है।

भावार्थ– बिहारी कवि कहते हैं कि सज्जनों का स्नेह यदि घटने भी है, तो भी उसमें किसी भी प्रकार का विकार नहीं आता। उसकी पवित्रता पू बनी रहती है। सज्जन पुरुष कभी भी स्नेहास्पद का अपकार नहीं सोच क्योंकि सज्जनों का स्नेह गंभीर होता है। जिस तरह गेरुआ रंग में रंगा गया फुट जाता है किन्तु उसका रंग ज्यों का त्यों बना रहता है।

विशेष– इस दोहे में अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

(९) दुसह दुराज प्रजानु की-------------------------रवि चं

सन्दर्भ एवं प्रसंग– यह दोहा काव्य संकलन में संगृहीत बिहारी की भक्ति शीर्षक से उद्धृत है। इस दोहे में बिहारी कवि बतलाते हैं कि कुवासन प्रजाओं का दुख-दर्द बढ़ जाता है।

भावार्थ– बिहारी कवि कहते हैं कि यदि राज्य का राजा दुष्ट हो जाता है वह प्रजाओं के लिए दुःसह हो जाता है। प्रजाओं का परस्पर में दुःख एवं द्वेष जाता है। यह उसी तरह से हो जाता है जिस तरह जब अमावस्या के दिन और चन्द्रमा एक साथ हो जाते हैं उस दिन और अन्धेरा अधिक बढ़ जाता है।

विशेष– इस दोहे में अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

(१०) संगति सुमति न-------------------------न होइ सुग

सन्दर्भ एवं प्रसंग– यह दोहा काव्य संकलन में संगृहीत बिहारी कवि भक्ति शीर्षक से उद्धृत है। इस दोहे में बिहारी कवि बतलाते हैं कि कुसंग में व्यक्ति में सुमति को होना असंभव है।

भावार्थ– बिहारी कवि कहते हैं कि जो व्यक्ति कुमति के जाल में फँस जाए वह अच्छी संगति में पड़ने पर भी नहीं सुधर पाता है। उदाहरण के लिए यदि हींग कपूर के साथ रख दिया जाय तो भी उसमें कपूर की सुगंध नहीं आ सकती है।

(११) नर की अरु नल नीर की----------------------ऊँचो होय।।

सन्दर्भ— यह दोहा काव्य संकलन में संगृहीत विहारी कवि के भक्ति शीर्षक से उद्धृत है। इस दोहे में कवि ने मानव तथा जल के स्वभाव की समता बतलाया है।

प्रसंग— विहारी कवि कहते हैं कि मानव मन और नल के जल की एक ही प्रकार की स्थिति होती है। नल का जल जितना ही नीचे की ओर जाता है उतना अधिक बढता जाता है। उसी तरह जो मनुष्य जितना ही झुक कर (विनम्र होकर) चलता है उसकी उतनी ही अधिक उन्नति होती है।

(१२) जो चाहत, चटक न घटै--------------------नेह चीकने चित्त।।

सन्दर्भ— यह दोहा काव्य संकलन में संगृहीत विहारी कवि के भक्ति से शीर्षक उद्धृत है। इस दोहे में विहारी कवि बतलाते हैं कि मित्रता में रजोगुण का संसर्ग नहीं होना चाहिए। सात्त्विक भावना से भूषित मित्रता चिरस्थायी होती है।

भावार्थ— बिहारी कवि कहते हैं कि यदि तुम यह चाहते हो कि तुम्हारी मित्रता में तरोताजगी हमेशा बनी रहे, वह कभी धूमिल न हो, तो उसमें कभी भी रजोगुण रूपी रज (धूलि) को न छुवाइये। ऐसा करने से स्नेह पूरित अन्तःकरण चिकना बना रहेगा। उसमें किसी भी प्रकार की गन्दगी नहीं आयेगी।

विशेष— इस दोहे में रूपक अलंकार है।

(१३) कहै यहै श्रुति सुमत्यौ----------------------------राजा रोग।

सन्दर्भ— यह दोहा काव्य संकलन में संगृहीत बिहारी कवि के भक्ति शीर्षक से उद्धृत है। इस दोहे में कवि कहते हैं कि पाप, राजा और रोग ये तीनों सदा दबाने की ही कोशिश करते हैं।

भावार्थ— बिहारी कवि कहते हैं कि श्रुतियाँ, स्मृतियाँ तथा ज्ञानी पुरुष यही कहते हैं कि पाप पापी को ,राजा अपने शत्रु को, या कमजोर राजा को, तथा रोग रोगी का हमेशा दबाये रहते हैं।

(१४) गंधी गंध गुलाब-------------------------------गाहकु कौन।।

सन्दर्भ— यह दोहा काव्य संकलन में संगृहीत बिहारी कवि के भक्ति शीर्षक से उद्धृत है। इस दोहे में बिहारी कवि कहते हैं कि अनभिज्ञ लोगों के बीच में अच्छी वस्तु का कोई महत्त्व नहीं होता।

भावार्थ— बिहारी कवि कहते हैं कि किसी गुलाब के इत्र बेचने वाले के इत्र को गाँव के लोगों ने हाथ में लेकर उसकी खूब सराहना की; सूँघा और अन्त में चुप हो गए। किसी ने उसे खरीदा नहीं। गाँव के लोग तो हींग के ही गंध के

अन्धभक्त होते हैं, वहाँ पर गुलाब की सुगन्धि को खरीदने वाला कौन अर्थात् उन लोगों के बीच गुलाब की सुगन्धि का कोई भी महत्त्व नहीं होता।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र- प्रेम माधुरी

(१) यह संग में लागियै डोलै----------------दुखिया नहीं मानतीं

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह सवैया छन्द काव्य संकलन के भारतेन्दु हरिश्चन्द्र प्रणीत 'प्रेममाधुरी' शीर्षक से उद्धृत है। इसमें कवि ने गोपियों का श्रीकृष्ण के प्रति प्रेम माधुर्य का वर्णन किया है।

भावार्थ— गोपियाँ कहती हैं कि हमारी ये श्रीकृष्ण के दर्शन के लिए आँखें सदा हमारे साथ-साथ लगी रहती हैं। वे श्रीकृष्ण को देखे बिना मानतीं। अर्थात् यदि हम श्रीकृष्ण को नहीं भी देखें तो भी ये हमारी आँखें उन्हें देख ही लेती हैं। हरिश्चन्द्र कवि कहते हैं कि श्रीकृष्ण का यदि क्षणभर भी विप्रयोग होता है तो इन आँखों में आँसुओं की प्रलय कालीन बाढ़ आ है। लगता है कि इन आँखों ने श्रीकृष्ण के प्रेम का शराब पी लिया है, ये कभी होती ही नहीं, सदा खुली रहती हैं। इन आँखों को मानों पलकों में समाना ही नहीं है प्रियतम श्री कृष्ण ! तुम्हें देखे बिना हमारी ये दुखी आँखें मानतीं नहीं हैं।

(२) पहिले बहु भाँति भरोसो दियो----------------आपुहि धावति

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह सवैया छन्द काव्य संकलन के भारतेन्दु हरिश्चन्द्र प्रणीत 'प्रेममाधुरी' शीर्षक से उद्धृत है। इस सवैया छन्द में कोई सखी अपनी दूसरी सखी को उलाहना देती हुई कहती है—

भावार्थ— कोई गोपी अपनी सखी से कहती है कि सखी! तुमने तो मुझे भरोसा दिलाया कि अभी-अभी मैं श्रीकृष्ण को लाकर तुमसे मिलाती हूँ। वही तुम आकर मुझे समझा रही हो। हरिश्चन्द्र कवि कहते हैं कि गोपी कहती कि अब तक तो मैं तुम्हारे ही भरोसे बैठी थी। अब वहीं तुम हमसे अलग हो और आकर मुझे समझाने का काम कर रही हो। पहले तो तुमने मेरे हृदय श्रीकृष्ण मिलन के चाह की आग लगा दी और अब उस आग को बुझाने के जल लेने के लिए दौड़ रही हो।

(३) उधौ जु सूधौ गहौ वह मारग-------------------माँग परी है।।

सन्दर्भ— यह सवैया छन्द काव्य संकलन के भारतेन्दु हरिश्चन्द्र प्रणीत 'प्रेममाधुरी' शीर्षक से उद्धृत है। इस सवैया छन्द में गोपियाँ उद्धव जी से कहती हैं कि यहाँ पर तो सब के सब श्रीकृष्ण-प्रेम में पागल लोग हैं, यहाँ पर आपकी ज्ञान की कथा कौन सुनेगा?

भावार्थ— गोपियाँ उद्धव जी से कहती हैं कि आपको यहाँ पर उपदेश करने की कोई आवश्यकता नहीं हैं। आपको तो सीधे ही अपने ज्ञान गुदड़ी का ही रास्ता पकड़ लेना चाहिए था। यहाँ तो सब के सब श्रीकृष्ण के प्रेम में पागल हैं, यहाँ पर आपके उपदेश को कौन सुनेगा ? यहाँ तो पूरी व्रजबालाओं की मण्डली ही एक समान बिगड़ चुकी है। यदि कोई एक गोपी श्रीकृष्ण-प्रेम में पागल होती तो उसे समझाया भी जा सकता था किन्तु यहाँ के तो कुँए में ही भाँग पड़ी है। सब के सब श्रीकृष्ण-प्रेम में पागल हैं।

मातृभाषा

(१) निज भाषा उन्नति अहै-------------------मिटै न हिय को सूल।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह सवैया छन्द काव्य संकलन के भारतेन्दु हरिश्चन्द्र 'मातृभाषा' शीर्षक से उद्धृत है। इस दोहे में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी बतला रहे हैं कि अपनी मातृभाषा की उन्नति से ही सभी प्रकार की उन्नति संभव है।

भावार्थ— अपनी भाषा की उन्नति ही सभी प्रकार की उन्नति का साधन है। जब तक अपनी भाषा का ज्ञान नहीं होता तब तक अन्य भाषाओं का ज्ञान होने पर भी हृदय में विद्यमान दुःख का अन्त नहीं होता। अपनी मातृभाषा का ज्ञान आवश्यक है। उसी से सभी प्रकार की सुख-शान्ति संभव है।

(२) इक भाषा इक जीव इक-----------------------------------सोग।

सन्दर्भ— यह सवैया छन्द काव्य संकलन के भारतेन्दु हरिश्चन्द्र प्रणीत 'मातृभाषा' शीर्षक से उद्धृत है। इस दोहे में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी सबों की भाषा की एकता पर बल दे रहे हैं। सम्पूर्ण देशवासियों की भाषा की एकता से ही सभी प्रकार के सद्भाव संभव हैं।

भावार्थ— जब सम्पूर्ण देश की भाषा एक होगी तो उनका जीवन भी एक समान होगा, और देश के सब लोग एक ही दिशा में सोचेंगे भी। ऐसी स्थिति में

सभी लोगों में प्रेम व्यवहार होगा ऐसा करने से देश के अज्ञान तथा कष्ट विन हो जायेंगे।

काश्मीर सुषमा

(१) प्रकृति यहाँ-------------------------------तन मन वारति

प्रसंग— इस पद्य में कवि श्रीधर पाठक ने स्वर्ग कश्मीर के प्राकृतिक सौन्द को चित्रित किया है। उन्होंने प्रकृति को एक सुन्दरी के रूप में देखा है।

अर्थ— कवि कहते हैं कि प्रकृति सन्दरी मानों एकान्त में बैठकर अपना रू संवारती है। वह प्रतिपल अपना परिधान बदलती रहती है तथा प्रतिक्षण अप सुन्दर शरीर सजाती रहती है। वह स्वच्छ सरोवर रूपी दर्पण में अपने मुख प्रतिबिम्ब को देखती है तथा अपने सौन्दर्य पर स्वयं मोहित होकर अपना सर्व निछावर करती रहती है।

(२) सजति सजावति-------------------------------बनि ठनि

प्रसंग— प्रस्तुत अवतरण 'काव्य संकलन' के काश्मीर सुषमा नामक शीर्ष से उद्धृत है। इसके प्रणेता कवि श्रीधर पाठक हैं।

अर्थ— कश्मीर में प्रकृति रूपी सुन्दरी सरा सजती है और इस धरती के सजाती रहती है। यह अपने रूप पर शरमाती है और प्रसन्न होती है। यह बड़ी प्यारी दिखाई देती है। प्रकृति सुन्दरी काश्मीर रूपी सुन्दर चित्रशाला को प्राप्त करके अपने भाग्य की बार-बार सराहना करती है। यह आनन्द और यौवन के मद से परिपूर्ण होकर चारों ओर विहार करती है, लचकती अनेक प्रकार के विलाँसा को करती हुई देखती है तथा बन-ठनकर थिरकती है।

विशेष— इस अवतरण में प्रकृति का मानवीकरण किया गया है।

उत्तर (३)— मधुर मंजु छवि---------------------------- तरुवर तृन

सन्दर्भ- प्रस्तुत अवतरण 'काव्य संकलन' के काश्मीर सुषमा नामक शीर्षक से उद्धृत है इसके प्रणेता कवि श्रीधर पाठक हैं।

अर्थ— कश्मीर में प्रकृति रूपी सुन्दरी चारों ओर कमल के वन में माधुर्यमय सौन्दर्य पुञ्ज शोभा को बिखेरती रहती है। यह चारों ओर देखती है। देखने वालों को रिझाती है, हंसती है, मुस्कराती है तथा लोगों के मन को मोह लेती है। यह पर सुन्दरी अनेक प्रकार का शृंगार करके सरोवरों, नदियों, पर्वतों, शिख, आकाश

ढ़े, पेड़ तथा घास-फूँस को सजाया करती है।

प्रकृति वर्णन

(१) जेठ के दारुण आतप से---------------------------चलौ तो भलो।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— इस अवतरण में कवि श्रीधर पाठक ने ग्रीष्म ऋतु की यंकरतामय सौन्दर्य का वर्णन किया है। यह अवतरण काव्य संकलन के श्रीधर ठक प्रणीत 'प्रकृति वर्णन' से संगृहीत है।

भावार्थ— नायिका अपने प्रियतम से कह रही है कि हे प्रियतम! इस ज्येष्ठ स के दुःखद धूप से सारी पृथिवी जली जा रही है। आकाश मण्डल में मरुस्थल समान धूल छा गयी है। अपने सम्पूर्ण सहायकों के साथ आँधी चली आ रही । सभी जलाशयों के जल से रहित हो जाने से प्यास से पशु-पक्षी व्याकुल हो रहे , और सूर्य की किरणें प्रचण्ड हो गयी हैं। प्रियतम अच्छा होगा कि हमलोग किसी कानन-कुञ्ज में चलकर विश्राम करें।

(२) काली घटा का घमण्ड घटा------------------समलंकृत कैसे भले।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह अवतरण काव्य संकलन के श्रीधर पाठक प्रणीत 'प्रकृति वर्णन' से उद्धृत है। इस पद्य में कवि श्रीधर पाठक शरद ऋतु का मनोज्ञ वर्णन कर रहे हैं।

भावार्थ— नायक शारदीय सौष्ठव का वर्णन करते हुए कहता है कि इस शरद ऋतु में अब आकाश में बादलों की काली घटा नहीं दिखायी देती है। आकाश में तारों का समूह छिटक गया है। सम्पूर्ण पृथिवी पुष्पों एवं फलों से सुशोभित हो रही है। वन के रास्ते साफ-सुथरे हो गए हैं पेड़ों के पत्ते मानों चाँदनी से धुल गए हैं। देखो न ! यह वन किस प्रकार शरद् ऋतु की चन्द्रिका रूपी चादर को ओढ़कर सुसज्जित हुआ-सा कितना सुन्दर लग रहा है ?

विशेष— इस पद्य में रूपक अलंकार है।

श्री कृष्ण सौन्दर्य

१- जब हुए---गोकुल ग्राम को।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत पद्य काव्यसंकलन के श्रीकृष्ण-सौन्दर्य शीर्षक से उद्धृत है। इसमें भगवान् श्रीकृष्ण के सौन्दर्य का वर्णन हरिऔध जी ने किया है।

भावार्थ– सांयकाल होते समय जब धीरे-धीरे सभी ग्वालों एवं गायों समूह एकत्रित हुआ तो वे सब ब्रजभूषण श्री कृष्ण भगवान् को साथ ले अत्यन्त सुन्दर गोकुल धाम की ओर चल पड़े।

(२) ककुभ सोभित गोरज-----------------------------नलिनीश

सन्दर्भ– प्रस्तुत अवतरण काव्य संकलन के अयोध्या प्रसाद सिंह 'हरिऔ प्रणीत 'श्री कृष्ण सौन्दर्य' शीर्षक से उदृधृत है। इस पद्य में हरिऔध जी कृष्ण सायंकाल गौ चराकर लौटते समय की शोभा का वर्णन करते हैं।

भावार्थ– सायंकाल भगवान् श्री कृष्ण गायों एवं ग्वालों के साथ गोकुल आ रहे थे। गायों के खुर से उड़ी हुई धूलि से दिशाएँ सुशोभित हो रही थीं। उ बीच से निकलते हुए श्री कृष्ण ऐसे लगते थे जैसे दिशाओं के अन्धेरे को चीर आकाश में सूर्य सुशोभित होता है।

विशेष– इस पद्य में शिखरिणी छन्द और उपमा अलंकार है।

(३) अतसि पुष्प अलंकृतकारिणी----------------------कलकान्ति

सन्दर्भ एवं प्रसंग– प्रस्तुत पद्य 'काव्यसंकलन' के श्री हरिऔध प्र 'श्रीकृष्ण सौन्दर्य' से लिया गया है। इस पद्य में कवि भगवान् श्रीकृष्ण के शारीरि सौन्दर्य का वर्णन कर रहे हैं।

भावार्थ– अतसी (तीसी) के पुष्प को भी सुशोभित करने वाली अ अतसी पुष्प से भी सुन्दर, शरद् ऋतु के नीलकमल से भी अधिक सुन्दर, भग श्रीकृष्ण के नवीन,सुन्दर तथा श्यामवर्ण के शरीर की मनोहर कान्ति जल से हुए बादल की कान्ति के समान थी।

विशेष– इस पद्य में विपर्यय तथा उपमा अलंकार की संसृष्टि है। यह शिखरिणी छन्द में निविद्ध है।

(४) अति समुन्नत अंग समूह था---------------प्रतिविम्वित हो रह

सन्दर्भ एवं प्रसंग– प्रस्तुत अवतरण काव्यसंकलन के अयोध्या सिंह उपाध्य 'हरिऔध' प्रणीत 'श्रीकृष्ण सौन्दर्य' से उद्धृत है। इस पद्य में कवि ने भग श्रीकृष्ण के शारीरिक सौन्दर्य का वर्णन किया है।

भावार्थ– हरिऔधजी श्री भगवान के अंगों का वर्णन करते हुए कहते हैं उनके सभी अंग अत्यन्त सौन्दर्य युक्त, समुन्नत तथा उत्तम कोटि के थे। वे द के समान स्वच्छ और मनामोहक थे। उन सभी अंगों में सुकुमारता बनी हुई और सरसता प्रतिबिम्बित हो रही थी।

विशेष— इस पद्य में शिखरिणी छन्द और उपमा अलंकार है।

(५) विलसता कटि में पटपीत था---------------------स्कंध था।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत पद्य काव्यसंकलन के श्री अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' प्रणीत श्रीकृष्ण सौन्दर्य से उद्धृत है। श्रीकृष्ण जब गायों को चराकर लौट रहे थे, उस समय भगवान् के वस्त्राभूषणों का वर्णन कर रहे हैं।

भावार्थ— हरिऔध जी कह रहे हैं कि भगवान् श्रीकृष्ण जब गायों को चराकर लौट रहे थे, तो उस समय उनके कमर में पीताम्बर शोभा दे रहा था। उनका शरीर मनोहर वस्त्रों से सुशोभित हो रहा था। उनके हृदय पर वनमाला शोभा दे हो रही थी तथा मनोहर दुपट्टों से उनके स्कन्ध सुशोभित हो रहे थे।

विशेष— इस पद्य में शिखरिणी छन्द है।

(६) मकरकेतन के कलकेतु से---------------------अलकावली।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत पद्य काव्यसंकलन के अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' प्रणीत 'श्रीकृष्ण सौन्दर्य' शीर्षक से उद्धृत है। इस पद्य में हरिऔध जी भगवान् श्रीकृष्ण के कुण्डल तथा काले घुँघराले बालों की शोभा का वर्णन कर रहे हैं।

भावार्थ— गोचारण करके लौटते हुए श्रीकृष्ण भगवान् के कानों में उत्तम कुण्डल कामदेव की मनोहर पताका के समान शोभित थे। उन कुण्डलों के ऊपर अनेक भावों से भरपूर उनके काले घुंघराले बाल लटक रहे थे।

विशेष— उपमालंकार और शिखरिणी छन्द इस पद्य में है।

(७) छलकती मुख की छवि पुञ्जता-----------क्षणदा कर कान्ति सी।।

सन्दर्भ— यह पद्य काव्य संकलन के अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' प्रणीत 'श्रीकृष्ण सौन्दर्य' से उद्धृत है।

प्रसंग— इस पद्य में हरिऔध जी भगवान् श्री कृष्ण के सम्पूर्ण शरीर की शोभा का वर्णन कर रहे हैं।

भावार्थ— भगवान् श्रीकृष्ण की मुख शोभा का समूह है ऐसा प्रतीत होता था कि उनके शरीर का सौन्दर्य पृथिवी को छूकर छिटक रहा है। उनके शरीर का श्रेष्ठ तेज दिशाओं के अन्त तक फैल रहा है लग रहा था जैसे क्षितिज से चन्द्रमा की किरणें निकल रही हैं।

विशेष— इस पद्य में उत्प्रेक्षा अलंकार तथा शिखरिणी छन्द है।

पंचवटी

(१) चारु चन्द्र की चंचल किरणें----------------पवन के झोंकों से।

सन्दर्भ- यह अवतरण काव्य संकलन के मैथिलीशरण गुप्त प्रणीत 'पंचवटी' शीर्षक से अवतीर्ण है।

प्रसंग- इस अवतरण में गुप्तजी ने प्राकृति का मनोज्ञ चित्र अंकित किया है।

भावार्थ- चन्द्रमा की मनोहर एवं चंचल किरणें मानों पृथ्वी तथा जल में खेल रही हैं। पृथ्वी और आकाश में जैसे स्वच्छ चाँदनी बिछी हुई है। हरी-हरी घासों की नोकों के माध्यम से पृथ्वी मानो पुलकित हो रही है, लगता है कि धीरे-धीरे चलती हुई वायु के झोंकों से पेड़ भी झूम रहे हैं।

विशेष- इस अवतरण के प्रत्येक पाद् में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

(२) पंचवटी की छाया में है-----------------------दृष्टिगत होता है।

सन्दर्भ- यह अवतरण काव्य संकलन के मैथिलीशरण गुप्त प्रणीत 'पंचवटी' शीर्षक से अवतीर्ण है।

प्रसंग- इस पद्य में कवि श्रीसीताराम की कुटी का लक्ष्मण जी द्वारा रात्रिभर जगकर पहरा देने का वर्णन करते हैं।

भावार्थ- पञ्चवटी की छाया में सुन्दर पर्णकुटी बनी हुई है। उस कुटी के सामने स्वच्छ शिला के उपर एक धनुर्धारी धीर, वीर एवं गम्भीर पुरुष रात्रि में जाग रहा है। इस रात्रि की बेला में जब कि सारी दुनियाँ सोती है, यह पुरुष जग रहा है। यह कामदेव के सामने भोगी होकर भी योगी सा लग रहा है। कवि पूछ रहे हैं कि यह कौन-सा पुरुष है?

(३) किस व्रत में है व्रती वीर----------------------------जीवन है।

सन्दर्भ- यह अवतरण काव्य संकलन के मैथिलीशरण गुप्त प्रणीत 'पंचवटी' शीर्षक से अवतीर्ण है।

प्रसंग- इस पद्य में कवि श्रीसीताराम की कुटी का लक्ष्मण जी द्वारा रात्रिभर जगकर पहरा देने का वर्णन कर रहे हैं।

भावार्थ- पञ्चवटी में बनी पर्णकुटी की रक्षा में संलग्न लक्ष्मण जी को देखकर कवि पूछ रहे हैं कि यह वीर व्रती किस व्रत की पूर्णता के लिए इस प्रकार से अपनी नींद को त्याग दिया है ? आज यह राज्य का सुख भोगने के लायक है किन्तु वन में वैराग्य लेकर बैठा हुआ है। यह वीर जिस कुटी की रखवाली करता

है उसमें कौन सी सम्पत्ति है? जिस सम्पत्ति की रक्षा यह तन, मन एवं जीवन की बाजी लगाए हुए कर रहा है ?

(४) मर्त्यलोक मालिन्य मिटाने----------------------माया ठहरी।।

सन्दर्भ– यह अवतरण काव्यसंकलन के मैथिलीशण गुप्त प्रणीत 'पंचवटी' शीर्षक से अवतीर्ण है।

प्रसंग– इस पद्य में कवि श्रीसीताराम की कुटी का लक्ष्मण जी द्वारा रात्रिभर जगकर पहरा देने का वर्णन कर रहे हैं।

भावार्थ– इस पद्य में कवि बतला रहे हैं कि– श्री सीता जी स्वयं तीनों लोकों की स्वामिनी हैं। ये मर्त्यलोक की मलीनता को मिटाने के लिए अपने पति श्रीराम के साथ वन में आकर इस कुटी को अपना निवास बनायी हैं।

वे वीर वंश की लाज हैं, अतएव उस कुटी का रक्षक यह वीर बना है।

इस स्थान में कोई दूसरा नहीं रहता, एकान्त स्थान है, रात्रि की बेला है और ऐसे काल तथा स्थान में निशाचर अपनी माया जाल फैलाते हैं, इसीलिए श्री लक्ष्मण जी इतनी सावधानी से इस कुटी की रक्षा कर रहे हैं।

(५) क्या ही स्वच्छ चाँदनी है यह---------------शान्त और चुपचाप।।

सन्दर्भ– यह अवतरण काव्यसंकलन के मैथिलीशरण गुप्त प्रणीत 'पंचवटी' शीर्षक से अवतीर्ण है।

प्रसंग– इस पद्य में कवि श्रीसीताराम की कुटी का लक्ष्मण जी द्वारा रात्रिभर जगकर पहरा देने का वर्णन कर रहे हैं।

भावार्थ– श्री मैथिलीशरण गुप्त जी कहते हैं कि इस रात्रि की बेला में स्वच्छ चाँदनी विछीं हुई हैं, रात्रि निस्तब्ध है, कही से कोई भी आवाज नहीं आती। धीरे-धीरे स्वच्छन्द वायु बह रही है; सभी दिशाओं में आनन्द ही आनन्द है; किन्तु इस समय भी नियति रूपी नटी अपने कार्य-कलापों को कर रही है, उसमें कोई भी रुकावट नहीं है। वह अत्यन्त एकान्त भाव से चुपचाप समस्त कार्यों को करती चली जा रही है।

विशेष– इस पद्य में रूपक एवं अनुप्रास अलंकार हैं।

(६) है बिखेर देती वसुन्धरा-----------------------रूप झलकता है।

सन्दर्भ– यह अवतरण काव्य संकलन के मैथिलीशरण गुप्त प्रणीत 'पंचवटी' शीर्षक से अवतीर्ण है।

प्रसंग– इन पंक्तियों में कविवर मैथिलीशरण गुप्त प्रकृति के अहर्निश

चलते कार्यकलापों का वर्णन कर रहे हैं।

भावार्थ— गुप्त जी कह रहे हैं कि— रात्रि में जब सब लोग सो जाते हैं तो पृथिवी ओस कणों के माध्यम से सर्वत्र मानों मोती बिखेर देती हैं। जब प्रातः काल होता है तो सूर्य पृथिवी के द्वारा बिखेरी गयी मोतियों को अपनी किरणों के माध्यम से बटोर लेता है। जाते जाते सूर्य सब को विश्राम देने वाली सन्ध्या प्रदान कर जाता है जिसके शरीर की अभिव्यक्ति शून्य श्याम रात्रि के रूप में होती है।

विशेष— इन पंक्तियों में रूपक एवं उत्प्रेक्षा अलंकार हैं।

जयशंकर प्रसाद-आह्वान गीत

(१) हिमाद्रि तुंग शृंग से------------------------बढ़े चलो-बढ़े चलो ।।

सन्दर्भ— ये पंक्तियाँ काव्य संकलन के जयशंकर प्रसाद प्रणीत 'आस्वान गीत' से ली गयी हैं।

प्रसंग— इसमें स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए आह्वान देश की पुत्री अलका अपने सैनिकों का उत्साहवर्धन करती हुई कहती है कि स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करना ही तुम्हारा कर्त्तव्य है।

भावार्थ— हिमालय की ऊँची-ऊँची चोटी से ज्ञानमयी वाणी में स्वयमप्रकाश तथा देदीप्यमान स्वतंत्रता पुकारकर कह रही है कि तुम अमर वीरों के पुत्र हो, तुम दृढ़ प्रतिज्ञ होकर सोच लो कि यही सब पे अच्छा एवं विस्तृत पवित्र मार्ग है, आत्मकल्याण के लिए इससे बढ़कर कोई दूसरा मार्ग नहीं है। इसीलिए तुम आगे की ओर बढ़ते रहो।

विशेष— इन पंक्तियों में स्वतंत्रता का मानवीकरण किया गया है।

(२) असंख्य कीर्ति रश्मियाँ----------------------------बढ़े चलो ।।

सन्दर्भ— ये पंक्तियाँ काव्य संकलन के जयशंकर प्रसाद प्रणीत 'आह्वान गीत' से ली गयी है।

प्रसंग— इसमें स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए आह्वान देश की पुत्री अलका अपने सैनिकों का उत्साहवर्धन करती हुई कहती है कि स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करना ही तुम्हारा कर्त्तव्य है।

भावार्थ— दिव्य अग्नि के समान तुम्हारी असंख्य यश की कान्तियाँ फैली हुई हैं। ऐ मातृभूमि के वीर तथा साहसी सपूतों तुम रुको मत। शत्रुओं की सेना

रूपी समुद्र को सोख लेनें के लिए तुम बाडवाग्नि के समान प्रदीप्त होओ, तुम उत्तम वीर बनकर विजयी बनो और आगे की ओर बढ़ते रहो।

विशेष— इस पद्य में रूपक एवं उपमा दोनों अलंकार हैं।

वसन्त की प्रतीक्षा

(१) परिश्रम करता हूँ दिन रात----------------------------वसन्त।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— ये पंक्तियाँ काव्यसंकलन के जयशंकर प्रसाद प्रणीत 'झरना' कविता से अवतरित 'वसन्त की प्रतीक्षा' से उद्धृत की गयी है।

भावार्थ— कवि कहता मैं लगातार परिश्रम करके क्यारी और कुञ्ज को बना रहा हूँ। मैं आनन्द पूर्वक इसे नेत्रों के जल से सींचता हूँ। इस आशा से कि कभी इसमें जूही के फूल खिलेंगे। इस काम को करते समय यदि काँटे ही गड़ते हैं तो मैं उनकी परवाह नहीं करता हूँ। प्रयास पूर्वक मैं इस कुञ्ज को सजाये रखता हूँ। सोचता हूँ कि कभी तो इसमें फूल खिलेंगे और मेरा प्रयास सफल होगा। इसको देखकर कभी तो मधुर रजनी इठलाती हुई मधुर मुसकान करेगी। इस कुञ्ज में कभी अचानक फूल खिल उठेंगे और इस कुञ्ज में चन्दन का आवास होगा। कभी तो समय आयेगा जब इसकी नयी कोपलों के बीच से कोकिल की कूक सुनायी देगी और तुम भी मेरे पास बैठकर मुझे मादक मदिरा का मकरन्द पिला दोगे। कवि कहता है कि मैं चाहता हूँ कि कभी मदमत्त ममता मूक हो जाय और इस कुञ्ज के पुष्पों से अनन्त विश्व विकसित हो जाय। चेतना ही धैर्य रहित मिलिन्द (उपवन) बन जाय कितनी प्रसन्नता होगी जब कि उस स्वच्छ वसन्त का आगमन होगा।

विशेष- इन पंक्तियों में रूपक अलंकार है। कवि की मनोहर कामना का मनोज्ञ वर्णन है।

दान

(१) मैंने झुक नीचे को देखा----------------------------श्रेष्ठ मानव।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— ये पंक्तियाँ काव्य संकलन के 'दान' शीर्षक से अनुगृहीत हैं। इसके प्रणेता महाप्राण निराला हैं। इन पंक्तियों में कवि किसी दानी पुरुष का वर्णन कर रहे हैं।

भावार्थ— कवि कहीं पर श्रम करते एक पुल पर आए जहाँ पर एक दिन दुर्बल ब्राह्मण भिखारी बैठा था। फिर उन्होंने नीचे झुककर देखा तो उसे एक आशा की रेखा दिखायी दी। कोई ब्राह्मण स्नान करके शिवजी पर जल, दूर्वादल, चावल तथा तिल चढ़ाकर अपनी झोली लिए हुए ऊपर आ रहे थे। उनको देखकर उनके सामने कुछ बानर आ गए। राम की भक्ति पाने की इच्छा वाले रामभक्त, ब्राह्मण बारहो मास शिवजी की आराधना करते थे। रामायण का पाठ करते थे, श्रीमन्नारायण का जय करते थे। जब कभी वे दुख पाते तो बन्दरों से हाथ जोड़कर प्रार्थना करते थे। वे मेरे पड़ोसी थे प्रतिदिन नदी में स्नान करते थे। उन्होंने झोले से पुए निकाल लिए बन्दरों के हाथ में दे दिए। जिस तरफ वह भिखारी असहाय बैठा था उस तरफ उन्होंने देखा भी नहीं। जब उसने पुए माँगे तो उन रामभक्तों ने कहा भगो राक्षस कहीं के। कवि को यह देखकर तरस आयी और वह कहने लगा धन्य है तू सृष्टि का श्रेष्ठ जीव मानव तू कितना असहाय है ? और कितना निर्हर्थ ?

तोड़ती पत्थर

(१) तोड़ती पत्थर-------------------------------------मैं तोड़ती पत्थर।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत पद्य काव्य संकलन के 'वह तोड़ती पत्थर' शीर्षक से उद्धृत है। इसके रचयिता महाप्राण निराला हैं। इस कविता में निराला जी किसी पत्थर तोड़ने वाली महिला का वर्णन कर रहे हैं।

भावार्थ— निराला जी कहते हैं कि उस महिला को पत्थर तोड़ते हुए इलाहाबाद के मार्ग पर देखा था। उसके सन्निकट में कोई छायादार पेड़ नहीं था जिसके नीचे बैठकर वह पत्थर तोड़े। वह युवती थी और उसका शरीर साँवला था उसके नेत्र झुके थे और उसका मन अपना काम करने में संलग्न था। हाथ में भारी हथौड़ा लेकर वह बार-बार प्रहार करती थी। उसके सामने मल्लिका का पेड़, अट्टालिका और चहरदिवारी थी।

गर्मियों के दिन में धूप बढ़ती जा रही थी दिन प्रखर होता जा रहा था फिर लू चलने लगी और पृथिवी रुई के समान जलने लगी। चिनगारी के समान धूल फैल गयी, इस तरह दोपहर की बेला हो गयी। किन्तु वह पत्थर तोड़ने वाली पत्थर तोड़ती रही।

उसके इस कार्य को मैं देख रहा था। मुझे देखते हुए उसने एक बार मुझे देखा। अपना काम बन्द करके उसने उस सामने वाले भवन की ओर देखा। उसने देखा कि कोई नहीं है, तो उसने फिर मुझे उस दृष्टि से एक बार पुनः देखा जो दृष्टि मार खाकर रो न सकी हो। अर्थात् अत्यन्त कातर दृष्टि से उसने मुझे देखा। मेरे लिए तो मानो स्वाभाविक रूप से सितार ही सज गया हो। मुझे उसके हथौड़े की आवाज से वह झंकार सुनायी दी जिसे मैंने कभी सुना नहीं था। एक क्षण के बाद वह सुन्दरी काँप उठी, उसके माथे से पसीने की बूँदें गिर पड़ीं। फिर अपने काम में लगकर उसने मानो यह कह दिया कि मैं पत्थर तोड़ती हूँ।

विशेष— यह अतुकान्त तथा छन्द के बन्धन से रहित कविता है। इसमें महाप्राण निराला ने दीन-हीन महिला की वेवशी का मार्मिक चित्रण किया है।

हिमालय से

(१) हे चिर महान !------------------------------पर रागहीन।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह कविता काव्यसंकलन के 'हिमालय से' शीर्षक से उद्धृत है। इसकी रचयिता सुश्री महादेवी वर्मा हैं। इस पद्यांश में महादेवी ने हिमालय का मर्मस्पर्शी वर्णन किया है।

भावार्थ— इस पद्यांश में महादेवी वर्मा हिमालय को सम्बोधित करती हुई कहती हैं कि हिमालय तुम तो चिरकाल से महान हो। तुम्हारी बर्फ से ढंकी उजली चोटियों पर प्रातःकाल की जब सूर्य की किरणें पड़ती हैं तो लगता है कि जैसे सूर्य की किरणों ने तुम्हारे उन्नतभाल पर अपनी रंगीन हंसी विखेर दी हो। इन्द्रधनुष तुम्हारे हार के समान प्रतीत होता है और वायु तुम्हारे ऊपर सुगन्धि फैला जाती है। किन्तु हे हिम के खजाने के समान हिमालय ! तुम इन सबों से रागहीन ही बने रहते हो। उदास बने रहते हो। लगता है स्वभाव से ही उदासीन।

विशेष— इस पद्यांश में उत्प्रेक्षा और उपमा अलंकार हैं। हिमालय के समान ही महादेवी का मन भी सांसारिक रंगीनियों से उदास रहता है।

(२) नभ में गर्वित------------------कितने मृदु कितने कठिन प्राण।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह कविता काव्यसंकलन के 'हिमालय से' शीर्षक से उद्धृत है। इसकी रचयिता सुश्री महादेवी वर्मा हैं। इस पद्यांश में महादेवी ने हिमालय का मर्मस्पर्शी वर्णन किया है।

भावार्थ– इस पद्यांश में कवियित्री कहती हैं कि तुम्हारा गर्व से मण्डित शिर आकाश में उठा हुआ है। यह कभी भी नहीं झुकता है। तुम अपने स्वाभिमान की रक्षा स्वयम् करते हो। किन्तु तुम में दयालुता इतनी है कि तुम अपनी गोद में धूल को बसाये हुए हो। विनयानवत विश्व को देखकर तुम्हारा मन बर्फ के बहाने गल जाता है। तुम अपने शरीर पर वज्र का भी प्रहार सह लेते हो। तुम कितने कोमल हो तथा कितना सहनशील हो।

(३) टूटी है तेरी कब समाधि---------------------------दुःख में समान।

सन्दर्भ एवं प्रसंग– यह कविता काव्यसंकलन के **'हिमालय से'** शीर्षक से उद्धृत है। इसकी रचयिता सुश्री महादेवी वर्मा हैं। इस पद्यांश में महादेवी ने हिमालय का मर्मस्पर्शी वर्णन किया है।

भावार्थ– महादेवी कहती हैं कि तुम से बार-बार टकराकर तीव्र वायु का झोंका हार मान कर बैठ जाता है, किन्तु तुम्हारी सुदृढ समाधि कभी भंग नहीं होती। जब तुम पृथ्वी के जलते हुए कणों की पुकार सुनते हो तो तुम्हारे नेत्रों से जल की धारा प्रवाहित होने लगती है। तुम्हारी सुख में कोई भी आसक्ति नहीं है और साथ ही तुम दुख में एक समान ही बने रहते हो।

वर्षा सुन्दरी के प्रति

(१) रूपसि तेरा घन केश पाश---------------------------घन केश पाश।

सन्दर्भ एवं प्रसंग– यह पद्य काव्यसंकलन के महादेवी वर्मा प्रणीत **'वर्षा सुन्दरी के प्रति'** शीर्षक से उद्धृत है। इस पद्य में कवयित्री ने वर्षा का चित्रण एक सुन्दरी के रूप में किया है।

भावार्थ– वर्षा सुन्दरी का चित्रण करती हुई महादेवी जी कहती हैं कि हे सुन्दरी वर्षा बादल ही तेरे कोमल तथा काले-काले सुगन्धित एवं लहराते हुए केश पाश हैं। क्या रात्रि में तू अपने इन बालों को आकाश गंगा की चाँदनी जैसी स्वच्छ जल धारा में धोकर आयी है ? जल भरे तेरे अंग काँप रहे हैं, तुम्हारा सद्यः स्नात शरीर सिहरा सा प्रतीत होता है। तेरे भींगे हुए बादल रूपी बालों की छोरों से, अनेक प्रकार की लास (नृत्य) करती हुई जल की बूँदें चू रही हैं। ऐ सुन्दरी बादल ही तेरे केश-कलाप हैं।

विशेष– इस पद्यांश में सांङ्गरूपक अलंकार है। वर्षा का मानवीकरण किया

या है और उसका एक सद्यः स्नात सुन्दरी के रूप में चित्रण किया गया है।

(२) सौरभ झीना गीला------------------रूपसि तेरा घन-केश-पाश।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह पद्य काव्यसंकलन के महादेवी वर्मा प्रणीत 'वर्षा सुन्दरी के प्रति' शीर्षक से उद्धृत है। इस पद्य में कवयित्री ने वर्षा का चित्रण एक सुन्दरी के रूप में किया है।

भावार्थ— कवयित्री कहती हैं कि हे वर्षा सुन्दरी ! तुम्हारे शरीर पर पतला या सुगन्धित एवं गीला गीला काला काला कोमल वस्त्र लिपटा हुआ है। तुम्हारे चल आँचल से रास्ते में झर-झर जुगुनूरूपी फूल झरते हैं। तेरे कटाक्षपात का सौन्दर्य दीपक के समान बार-बार विजृम्भित होता है। ऐ वर्षा सुन्दरी ! मेघ ही तेरे केश पाश हैं।

विशेष- इस पद्य में सांङ्गरूपक अलंकार है; वर्षा का सुन्दरी के रूप में मानवीकरण किया गया है।

(३) उच्छ्वसित वक्ष पर--------------------------------केशपाश।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह पद्य काव्यसंकलन के महादेवी वर्मा प्रणीत 'वर्षा सुन्दरी के प्रति' शीर्षक से उद्धृत है। इस पद्य में कवयित्री ने वर्षा का चित्रण एक सुन्दरी के रूप में किया है।

भावार्थ— तुम्हारे उच्छ्वासों से उल्लसित वक्षस्थल पर उजले कमल के समान उजली वकपंक्ति का हार शोभा दे रहा है। तुम्हारी निःश्वासें पृथिवी को छूकर मलयानिल बन जाती हैं। मयूरी की मधुर ध्वनि तेरे नूपुर की झंकार है, उसको सुनकर पृथिवी की मूक प्यास जग जाती है। सुन्दरी मेघ ही तेरे केश पाश हैं।

विशेष— इस पद्य में रूपक एवं उपमा अलंकार हैं तथा वर्षा का मनोज्ञ सुन्दरी के रूप में मानवीकरण किया गया है।

(४) इन स्निग्ध लटों से छादे तन---------------------घन-केश-पाश।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह पद्य काव्यसंकलन के 'वर्षा सुन्दरी के प्रति' शीर्षक से उद्धृत है। इस पद्य में कवयित्री ने वर्षा का वर्णन एक मनोज्ञ सुन्दरी के रूप में किया है।

भावार्थ— कवयित्री वर्षा सुन्दरी से कहती हैं कि तुम्हारा संसार रूपी शिशु उदास है, अपने इन कोमल लटों से तुम उसको ढंक दो, और अपने रोमाञ्चित गोद में बिठा लो, झुककर तुम अपने स्मितपूर्ण चुम्बन के द्वारा इसके ललाट को चूम लो, इसको तुम दुलरा एवं बहला देना, जिससे कि तुम्हारे इस संसार रूपी

शिशु की उदासी मिट जाय। हे सुन्दरी मेघ ही तेरा केश कलाप है।

विशेष— (१) इस पद्यांश में रूपक अलंकार है, तथा वर्षा का जगन्माता के रूप में मानवीकरण किया गया है।

निर्झर से

(१) अरे निर्जन के————————————जिसे खोजते हो वन-वन

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत अवतरण काव्यसंकलन के रामकुमार वर्मा प्रणीत 'निर्झर से' शीर्षक से लिया गया है। इस अवतरण में नीचे की ओर निरन्तर बहते हुए झरने को देखकर कवि उससे प्रश्न करता है कि उसके इस अधः अवतरण का लक्ष्य क्या है ?

भावार्थ— कवि कहता है कि ऐ निर्जन वन के निर्मल झरने तुम एकान्त स्थल के प्रांगण में किसको अपना सुमधुर गीत सुना रहे हो ? तुम अपना ऊँचा स्थान छोड़कर नीचे क्यों गिर रहे हो ? तुम्हारा वह कौन सा प्रेमी है जिसे तुम वनों में खोज रहे हो ?

(२) विरह में अश्रु बहाकर————————————गति खोकर

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत अवतरण काव्यसंकलन के रामकुमार वर्मा प्रणीत 'निर्झर से' नामक शीर्षक से लिया गया है। इस अवतरण में नीचे की ओर निरन्तर बहते हुए झरने को देखकर कवि उससे प्रश्न करता है कि उसके इस अधः अवतरण का लक्ष्य क्या है। ?

भावार्थ- कवि निर्झर से कहता है कि किसकी विरह-व्यथा में आँसू बहाते-बहाते तुम अपना सारा शरीर जलमय किए जा रहे हो ? अथवा अपने किस अज्ञात प्रेमी के चरणों की धूलि धोने के लिए इतनी शीर्घता से आगे बढे जा रहे हो। पाषाण के छोटे-छोटे टुकड़े भी तुमको ठोकर मारते हैं और क्षण भर के लिए तुम विचलित होते हो, तुम्हारी गति रुकती सी है, और तुम अपने धुन में उसकी परवाह किए बिना किस धुन में आगे बढते जाते हो ?

(३) लघु लहरों से कम्पित कर से————————————कातर निर्झर।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत अवतरण काव्यसंकलन के रामकुमार वर्मा प्रणीत 'निर्झर से' शीर्षक से लिया गया है। इस अवतरण में नीचे की ओर बहते हुए झरने को देखकर कवि उससे प्रश्न करता है कि उसके इस अधः का लक्ष्य क्या है ?

भावार्थ— तुम अपनी छोटी-छोटी लहर रूपी बाहों से उत्सुकता पूर्वक लिंगन करते हो। तुम्हें तुम्हारे मार्ग का निर्देश कौन करता है ? ये सभी पेड़ तो हैं। ये तो तुम्हें मार्ग बतलाते नहीं। स्थिर पलकों से जल भरे अविचल पलकों जल कल-कल स्वर में पर्वत पर गिराकर मैं चाहता हूँ कि मेरी जीवात्मा रूपी र की मधुर ध्वनि मेरे प्रियतम परमात्मा के अन्तर्मन में गूँजती रहे।

क्या गाऊँ

(१) प्रियतम भूले मैं---------------------------------- क्या गाऊँ।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत पद्यांश काव्यसंकलन के रामकुमार वर्मा प्रणीत ा गाऊँ' शीर्षक से अवतीर्ण है। इस पद्य में कवि परमात्मा को ही अपना तम मानकर जीव का उससे विप्रयोग अनुभव करता है।

भावार्थ— इस कविता में कवि कहते हैं कि हे प्रियतम ! अब तो आप ही को भूल गए हैं। आपके विप्रयोग में मैं कैसे जी सकता हूँ। गीत तो खुशियों का ार होता है। मेरी जिस ध्वनि में आपका निवास है, उसे मैं संसार के कणों में विखेर सकता हूँ ? इस समय मेरे शब्दों के द्वार पूर्ण रूप से नहीं खुले हैं। वे खुले हैं। अधखुले द्वार से ध्वनियाँ नहीं निकल पाती हैं। उच्छ्वासों के छोटे-छोटे पर चलती हुई इच्छाएँ थक जाती हैं। मेरे पास समस्या यह है कि स्वप्न के तों से मैं आपको अपने पास किस तरह बुला सकता हूँ।

जुही की सुगन्धित भरी वायु के एक झोंके से ही कान्ति श्रीहत गयी है और डूब गसे हैं, किन्तु आँसुओं के जल में बार-बार डूबकर भी मेरी आँखों के हारे नहीं हैं। दुःख ही जगा है। उस स्थिति में आपको जगाकर मैं किस प्रकार सुख पा सकता हूँ। प्रियतम आप तो मुझे भूल चुके हैं, मैं किस प्रकार गीत ऊँ ?

विशेष— यह रहस्यवादी कविता है। कवि एक अव्यक्त सत्ता परमात्मा से करता है।

पुष्प की अभिलाषा

(१) चाह नहीं मैं सुर बाला के---------------------------वीर अनेक।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत अवतरण काव्यसंकलन के श्री माखनलाल चतुर्वेदी

रचित 'पुष्प की अभिलाषा' शीर्षक से लिया गया है। इस कविता में कवि ने पुष्प की अभिलाषा के माध्यम से अपनी देशभक्ति की भावना को अभिव्यक्त किया है।

भावार्थ- पुष्प कहता हैं कि हे वनमाली मैं यह नहीं चाहता हूँ कि मैं किसी देवी के गहने में गूँथा जाऊँ, मैं यह भी नहीं चाहता हूँ कि किसी प्रेमी की माला में गूँथकर मैं उसकी प्रेमिका को उसकी ओर आकृष्ट करूँ, मैं यह भी नहीं चाहता कि मुझे सम्राटों के केश पर चढ़ाया जाय और न तो मैं यह ही चाहता हूँ कि मुझे देवताओं के सिर पर चढाया जाय और मुझे को देवताओं के सिर चढाये जाने का अभिमान हो। वनमाली तुम मुझे तोड़कर उस मार्ग पर चढ़ा देना जिस रास्ते से अपनी मातृभूमि पर अपना शिर चढ़ा देने के लिए मातृभूमि भक्त वीर जाते हों।

विशेष- इस कविता की देशभक्ति की भावना अभिव्यक्त हुई है।

जवानी

(१) प्राण अन्तर में लिए ये पागल------------------उठरी जवानी

सन्दर्भ एवं प्रसंग- यह पद्यांश काव्यसंकलन के श्री माखनलाल चतुर्वेदी प्रणीत 'जवानी' शीर्षक से उद्धृत है। कविता का अभिप्राय है कि जवानी उस अवस्था विशेष का नाम है जिसमें हर पल नया जोश, विश्वास तथा असंभव को भी संभव करके दिखला देने की उमंग होती है।

भावार्थ- कवि देश के जवानों को संबोधित करते हुए कहता है कि अपने भीतर प्राणों को सजोए हुए तुम तो हमेशा पागल बनी रहने वाली हो। तुम अपनी इज्जत गवाँ कर विधवा हो गयी हो। घड़ियाँ, आकाश के तारे, नदियाँ, हिमालय के हिमखण्ड, शरीर के भीतर श्वाँस, ये सब के सब सतत गतिमान हैं; ऐसी स्थिति में तुम ही क्यों ठहर जायेगी ? इन सबों के ही समान तुम्हें भी निरन्तर आगे बढ़ते रहना है। यदि तुम रुक जाओगी तो ये सब के सब तुम्हारे पीछे रुक जायेंगे। तुम नरमुण्ड की माला पहन लो और उस माला में तुम्हारा स्थान सुमेरु के समन शीर्ष स्थान पर होना चाहिए। तुम पृथिवी के ही समान धानी वेश धारण करलो। प्राण तुम्हारा साथ देने के लिए उद्यत है। अतएव तुम चुपचाप बैठी न रहो, उठो और देश के लिए अपना बलिदान करने के लिए तैयार हो जाओ।

विशेष- इस कविता में कवि की देशभक्ति के भाव की अभिव्यक्ति हुई है। इस कविता के माध्यम से वे देश की जवानी को संबोधित करते हुए उन्हें देशरक्षार्थ

अपना बलिदान देने के लिए प्रोत्साहित करते हैं।

(२) श्वान के सिर हो-----------------------------मस्तानी जवानी।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह पद्यांश काव्यसंकलन के श्री माखनलाल चतुर्वेदी प्रणीत 'जवानी' शीर्षक से उद्धृत है। कवि का अभिप्राय है कि जवानी उस अवस्था विशेष का नाम है जिसमें हर पल जोश, विश्वास तथा असंभव को भी संभव करके दिखला देने की उमंग होती है।

भावार्थ— कवि अपनी और सम्पूर्ण देश की जवानी को ललकार कर कह रहा है, यदि कुत्ते के सिर पर पैर रख दिया जाय तो वह उसको चाटने का काम करता है, दूसरों को वह भोंकता भी है। किन्तु उसमें इतना साहस नहीं होता कि वह सिंह को भी डाँट ले। उसको देखते ही वह अपनी जान बचाकर भागता है। कुत्ता तो रोटी खाता है न कि वह साहस खाता है। साहस का पुतला तो सिंह ही होता है। यद्यपि वह भी प्राणी है, किन्तु उसके प्राण का कोई भी महत्त्व नहीं है। वह जीते ही मरा हुआ है। इसी तरह जो कायर हैं, विदेशियों के चाटुकार हैं, वे तो एक कुत्ते की जिन्दगी जीते हैं। यह देश की जवानी उनकी परवाह नहीं करती है। इन चाटुकार ग्राम सिंहों (कुत्तों) के बीच अपनी क्रीड़ा करो विश्व का स्वाभिमान भी मदमस्त जवानी से सुरक्षित होता है। वही जवानी है जो अपनी मातृभूमि के लिए मर मिटना जानती है।

हिन्दूस्तान हमारा है

(१) कोटि-कोटि कण्ठों से------------------हिन्दूस्तान हमारा है।

सन्दर्भ एवं प्रसंग- प्रस्तुत अवतरण काव्यसंकलन के 'बालकृष्ण शर्मा' प्रणीत 'हिन्दूस्तान हमारा है' शीर्षक से गृहीत है। इस पद्यांश में कवि का अभिप्राय है कि यह हिन्दूस्तान हम भारतवासियों का है। इस देश पर किसी दूसरे का अधिकार नहीं होना चाहिए। यदि कोई इस पर अधिकार करता है तो वह उसका अवैध है और उसके उस कार्य को हमें कभी भी नहीं सहना चाहिए।

भावार्थ— करोडों कण्ठों से आज यहीं स्वर निकल रहा है कि हिन्दूस्तान हमारा है। जिस दिन से नयी सृष्टि प्रारम्भ हुई, जिस दिन से देश तथा काल इन दोनों के पृथक्-पृथक् दो तम्बू ताने गए, जिस दिन आकाश में सर्वप्रथम तारे, सूर्य एवं चन्द्रमा उदित हुए, उसी दिन से यह भारत वर्ष हमारा है, यह हम

भारतवासियों का स्वाभिमान है।

(२) सतलज, व्यास, चिनाव-----------------हिन्दूस्तान हमारा है।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत अवतरण काव्यसंकलन के 'बालकृष्णशर्मा' प्रणीत 'हिन्दूस्तान हमारा है' शीर्षक से गृहीत है। इस पद्यांश में कवि का अभिप्राय है कि यह हिन्दूस्तान हम भारतवासियों का हैं इस देशपर किसी दूसरे का अधिकार नहीं होना चाहिए। यदि कोई इस पर अधिकार करता है तो वह उसका अवैध कार्य है और उस कार्य को हमें कभी भी नहीं सहना चाहिए।

भावार्थ— कवि कहता है कि इस मेरे देश के भीतर, सतलज, व्यास, चिनाव, वितस्ता, रावी, सिन्धु आदि नदियाँ बहती हैं। इस देश की अत्यन्त पवित्र दो नदियाँ हैं गंगा माता और यमुना। ब्रह्मपुत्र, कृष्णा तथा कावेरी आदि नदियों का वात्सलय भरा गोद भारतवासियों को ही आप्यायित करता रहता है। ये समस्त नदियाँ हमारे इस देश भारतवर्ष को सींचती रहती हैं। हमारा यह देश रस का खजाना है। इस प्रकार का यह हिन्दूस्तान हमारा है। इस पर किसी दूसरे का अधि ाकर नहीं हो सकता है।

(३) है आसन्नभूत अति उज्ज्वल--------------हिन्दूस्तान हमारा है।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत अवतरण काव्यसंकलन के 'बालकृष्णशर्मा' प्रणीत 'हिन्दूस्तान हमारा है' शीर्षक से गृहीत है। इस पद्यांश में कवि का अभिप्राय यह है कि यह हिन्दुस्तान हम भारतवासियों का है इस देश पर किसी दूसरे का अधिकार नहीं होना चाहिए। यदि कोई इस पर अधिकार करता है तो वह उसका अवैध कार्य है और उस कार्य को हमें कभी भी सहना नहीं चाहिए।

भावार्थ— कवि कहता है कि हमारे इस भारतवर्ष का अतीत गौरवशाली रहा है। इस देश का असन्नभूत भी उज्ज्वल रहा है। वर्तमान काल में यद्यपि यह देश कुछ दिन से परतंत्रता की बेड़ियों में जकड़ गया है। किन्तु इस देश का वर्तमान भी देशभक्तों के खून से रंगने लग गया है और सद्यः समुपलब्ध होने वाली स्वतन्त्रता के बिहान का उषाकाल आ गया है। चारों तरफ उसकी लालिमा विखर गयी है। हमारा यह नियम है कि हम मानव को मुक्त करें। यह भारतवर्ष हमारा है और यह हमारा ही बनकर रहेगा।

(४) गरज उठे चालीस कोटि जन-------------हिन्दूस्तान हमारा है।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत अवतरण काव्यसंकलन के बालकृष्णशर्मा प्रणीत 'हिन्दुस्तान हमारा है' शीर्षक से गृहीत है। इस पद्यांश में कवि का यह अभिप्राय

है कि यह हिन्दूस्तान हम भारतवासियों का है। इस पर किसी दूसरे देश का अधिकार नहीं होंना चाहिए। यदि कोई इस पर अधिकार करता है तो वह उसका अवैध कार्य है और उसके इस कार्य को हमें कभी भी नहीं सहना चाहिए।

भावार्थ— कवि बालकृष्ण शर्मा ने उत्साह भरे स्वतंत्रता का गीत गाया। उस गीत को सुनकर उत्साह भरी भारत की चालीस करोड़ जनता गरजने लगी, अपना अधिकार पाने के लिए विदेशियों को भगाने के लिए। उस गर्जना को सुनकर विरोधियों के हृदय काँप गये। आज एक नये युग का प्रारम्भ हो गया है। सभी देशवासियों के आँखों से जैसे आग की चिनगारी छिटक रही है।

□

पद्यसंकलन-परिचयात्मक भाग

प्रश्न १— कबीरदास का संक्षिप्त जीवन-परिचय प्रस्तुत करते हुए उनकी रचनाओं पर प्रकाश डालिए ।

उत्तर— मध्यकाल के अन्य कवियों की भाँति कबीरदास के जीवन के सम्बन्ध में भी किसी निश्चित मत का अभाव है । कबीरदास ने स्वयं अपने बारे में कुछ नहीं लिखा है । उनके जीवन के सम्बन्ध में अनेक विसंगतियों एवं किंवदन्तियों के दर्शन होते हैं । अस्तु उनके जीवन के बारे में निश्चित रूप से कुछ भी नही कहा जा सकता है।

जन्म-तिथि— कबीर के जन्म-काल के बारे में चर्चा करते हुए पाश्चात्य विद्वान् हंटर ने संवत् १४३७ में कबीर का जन्म स्वीकार किया है। वेस्टकट ने कबीर का जन्म संवत् १४४७ में तथा मृत्यु १५७५ में स्वीकारा है। कबीरपंथियों के अनुसार कबीर का जन्म संवत् १४५६ और मृत्यु १५७५ में हुई। मिश्रबन्धुओं ने कबीर की जन्म-तिथि संवत् १४५५ की ज्येष्ठ शुक्ल पूणिमा माना है। आचार्य शुक्ल ने कबीर का जन्म ज्येष्ठ शुक्ल पूर्णिमा संवत् १५५६ स्वीकार किया है । अधिकांश विद्वान् १५५५ को ही मानते हैं।

जाति एवं वंश— क़बीर सच्चे अर्थों में एक महान् सन्त थे और सन्त क़ा सम्बन्ध किसी जाति विशेष से नहीं होता। सन्त तो वह होता है जिसने सत्य का

साक्षात्कार कर लिया हो । इस बात को कबीर ने स्वयं भी स्वीकारा है—

जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिए ग्यान।
मोल करो तलवार का, पड़ा रहन दो म्यान।।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जैसे समीक्षक को यह कहना पड़ा कि, हिन्दी साहित्य के हजारों वर्षों के इतिहास में कोई ऐसा प्रमाण नहीं है कि कबीर जैसा व्यक्तित्व लेकर कोई लेखक उत्पन्न हुआ हो। महिमा के विषय में वह व्यक्तित्व केवल एक ही प्रतिद्वन्द्वी को जानता है, तुलसीदास को ।

कहा जाता है कि कबीर का जन्म एक विधवा ब्राह्मणी के गर्भ से हुआ था जिससे लोक-लज्जा के भय से इनको लहरतारा नामक तालाब के किनारे फेंक दिया गया था। ऐसी मान्यता है कि आचार्य रामानन्द के आशीर्वाद के परिणामस्वरूप कबीर का जन्म हुआ था। इनका पालन-पोषण नीरू और नीमा नामक जुलाहे-दम्पति ने किया था। हिन्दू और मुसलमान दोनों धर्मों के प्रति कबीर की श्रद्धा भावना इस बात को पुष्ट करती है।

कबीर की वंशपरम्परा को देखने से ज्ञात होता है कि इनकी पत्नी का नाम लोई था जिससे कमाल और निहाल दो पुत्र तथा कमाली और निहाली दो पुत्रियां थीं, किन्तु उनकी जीवित सन्तानों में कमाल का ही उल्लेख प्राप्त होता है—

बूडा वंश कबीर का उपजा पूत कमाल।
हरि का सुमिरन छाडि कै घर लै आया माल।।

जन्म-स्थान तथा शिक्षा-दीक्षा— कबीर के जन्मस्थान के सम्बन्ध में अनेक मत सामने आते हैं। पं० परशुराम चतुर्वेदी काशी को कबीर का जन्म स्थान स्वीकार करते हैं। 'बनारस गजेटियर' के अनुसार कबीर का जन्म आजमगढ़ जिले के 'बेलहरा' नामक गाँव में हुआ था। इस मत की पुष्टि में पं० चन्द्रवली पाण्डेय ने लिखा है कि 'आज भी पटवारी के कागजों में 'बेलहरा' उर्फ 'बेलहरा पोखर' लिखा मिलता है। जहाँ तक कबीर की शिक्षा का प्रश्न है इस बात को कबीर ने स्पष्ट शब्दों में घोषित किया है कि—

'मसि कागद छुयौ नहीं, कलम गही नहि हाथ।
चारिउ जुग को महातम, मुखहिं जनाई बात।।

अतः कबीर पढे-लिखे नहीं थे। उनके शिष्यों ने उनकी वाणी को लिपिबद्ध किया। चूँकि कबीर एक सच्चे समाज सुधारक थे और साधना के लिए एक योग्य

गुरु की आवश्यकता पड़ती है। वे काशी के तत्कालीन प्रसिद्ध महात्मा रामानन्द का शिष्यत्व ग्रहण किये।

नाभादास ने अपने 'भक्तमाल' में कबीर को रामानन्द के २२ शिष्यों में से एक स्वीकारा है।

व्यक्तित्व— कबीरदास जी एक विलक्षण व्यक्तित्व लेकर आये थे। वे स्वयं कपड़ा बुनने का कार्य करते थे, परन्तु उन्होंने अपना सारा जीवन सामाजिक कुंठाओं, धार्मिक आडम्बरों ओर मिथ्या विश्वासों के विरूद्ध संघर्ष में लगा दिया। उनके हिन्दी केवल सन्त कवियों में ही नहीं अपितु पूरे हिन्दी साहित्य में बेजोड़ है। हिन्दी साहित्य के लगभग बारह सौ वर्षों के इतिहास में तुलसीदास को छोड़कर इतना प्रभावशाली और महिमा - मण्डित व्यक्तित्व दूसरे कवि का नहीं है। वह हिन्दुओं के लिए 'वैष्णव भक्त, मुसलमानों के लिए 'पीर' सिक्खों के लिए 'भगत', कबीरपंथियों के लिए 'अवतार', आधुनिक राष्ट्रवादियों के लिए 'हिन्दु मुस्लिम ऐक्य विधायक', नव वेदान्तियों के लिए 'विश्व धर्म-प्रवर्तक' प्रगतिशील तत्त्वों की दृष्टि में 'समाज सुधारक', जातिगत श्रेष्ठता के विरोधी, सामाजिक दृष्टि से कमजोर वर्ग के पक्षधर, क्रान्तिकारी और समता, बन्धुत्व- भावना, न्याय तथा एकता के प्रतिपादक रूप में मान्य हैं।"

रचनायें— यद्यपि कबीर नें अपनी सफाई में साफ कह दिया है कि 'मसि कागद छुयौ नहीं, कलम गही नहीं हाथ।' किन्तु उनके काव्य-संग्रह प्राप्त होते हैं। इसका कारण यह है कि वे उच्चकोटि के ज्ञानी, प्रचारक और सन्त थे। परिणामतः उनके शिष्यों की संख्या अधिक थी। वे जो कुछ भी बोलते अथवा उपदेश देते थे, उसे उनके शिष्यों द्वारा लिपिबद्ध कर लिया जाता था। कबीर स्वभाव से मनमौजी और फक्कड़ थे जो उनकी रचनाओं में लक्षित होता है। यही कारण है कि डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी को कहना पड़ा कि "यद्यपि कबीर नें कहीं काव्य लिखने की प्रतिज्ञा नहीं की तथापि उनकी आध्यात्मिक रस की गगरी से झलके हुए रस से काव्य की कटोरी में भी कम रस नहीं इकट्ठा हुआ है।

अतः कबीर की रचनाओं को तीन भागों में बाँटा गया है।

(१) **साखी—** साखी शब्द संस्कृत साक्षी का तद्भव रूप है जिसका अभिप्राय होता है 'गवाह'। अर्थात किसी वस्तु, व्यक्ति अथवा व्यापार को अपनी आँखों से देखा हो, उसे साखी कहते हैं। कबीर स्वयं आँखों की देखी घटना में विश्वास करते थे। उन्होनें स्पष्ट कहा है कि—

"तू कहता कागज की लेखी।
मैं कहता आखों की देखी ।

(२) **सबद**– सबद संस्कृत भाषा के 'शब्द का तद्भव रूप है। शब्द का एक अर्थ ब्रह्म भी होता है । अर्थात् ब्रह्मविषयक मान्यताओं का संकलन 'सबद' के अन्तर्गत हुआ है । सबद के अन्तर्गत सभी पद गेयता से सम्पुष्ट हैं।

(३) **रमैनी**– रमैनियों की रचना दोहा-चौपाई शैली में हुई है। सात-सात चौपाइयों के बाद एक दोहा का प्रयोग रमैनी के अन्तर्गत देखा जाता है । 'बीजक' में रमैनी का विशिष्ट कोटि का महत्त्व है, जबकि कबीर ग्रन्थावली में इसे उतना महत्त्व नहीं मिला है ।

प्रश्न २– जायसी का संक्षिप्त जीवन-परिचय प्रस्तुत करते हुए उनकी रचनाओं पर प्रकाश डालिए।

अथवा

जायसी के जीवन, व्यक्तित्व और कृतियों पर प्रकाश डालिए।

उत्तर– मलिक मुहम्मद जायसी भक्तिकाल की रचनाओं की निर्गुणपन्थी काव्यधारा की प्रेममार्गी शाखा के प्रतिनिधि कवि थे। जायसी के जीवन-परिचय के बारे में डॉ० जनार्दन उपाध्याय ने लिखा है कि- "भक्तिकाल की इस प्रेममार्गी काव्यधारा के सर्वोत्कृष्ट कवि मलिक मुहम्मद जायसी के जीवन-परिचय के बारे में उतना मत वैभिन्य नही पाया जाता जितना भक्तिकाल की अन्य धाराओं के प्रसिद्ध कवियों के बारे में मिलता है।

यद्यपि जायसी के पद्मावत में उनके समय की राजनैतिक, सामाजिक तथा साहित्यिक स्थिति का स्पष्ट चित्र दृष्टिगोचर होता है और उससे उनके जीवन-वृत्त तथा उनके साहित्यक क्षेत्र में आविर्भाव का अनुमान लगाया जा सकता है। फिर भी निश्चित रूप सें कोई भी प्रमाण प्रस्तुत नही किया जा सकता। अस्तु, जायसी की रचनाओं एवं आचार्य शुक्ल के कथनों के आधार पर उनके जीवन-परिचय सम्बन्धी तथ्यों का प्रकाशन करना समीचीन होगा–

जन्मतिथि– जायसी ने अपनी रचना 'पदमावत' में शाहेवक्त के रूप में शेरशाह का उल्लेख किया है तथा 'आखिरी कलाम' में बाबर का उल्लेख किया है। 'आखिरी कलाम' में उन्होंने अपनें जन्म के सम्बन्ध में लिखा है ।

भा अवतार मोर नव सदी। तीस बरस ऊपर कवि बदी।

यदि 'नव सदी' का अर्थ 'नवीं सदी' मान लिया जाय तो जायसी की जन्म तिथि सन् ९०० हिजरी के आस-पास होनी चाहिए। जायसी ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ पद्मावत के रचना-काल का उल्लेख करते हुए लिखा है–

'सन नौ सै सत्ताइस अहा ।
कथा अरम्भ बैन कवि कहा ।।

नौ सौ सत्ताइस हिजरी वर्ष सन् १५२० ई० के आस-पास पड़ता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल सन् ९०० हिजरी अर्थात् सन् १४९२ ई० को जायसी की जन्म तिथि स्वीकारा है। जबकि डॉ० रामपूजन तिवारी ने जायसी की जन्म-तिथि को सन् ८७० हिजरी अर्थात् सन् १४६४ ई० माना है। इसी क्रम में डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल ने जायसी की जन्मतिथि ८०० से ९०० हिजरी के बीच कभी भी स्वीकार किया है।

जन्मस्थान– जायसी ने अपने ग्रन्थों की भाषा अवधी बताया है जिससे यह स्पष्ट होता है कि जायसी अवध क्षेत्र के रहने वाले थे। किन्तु इनका जन्म किस स्थान पर हुआ था इसे प्रामाणिक तौर पर नहीं कहा जा सकता। 'जायसी' शब्द को लेकर कुछ विद्वान् उनका जन्म रायबरेली जिले के 'जायसनगर' नामक स्थान स्वीकारते हैं। 'पद्मावत' में जायसी ने स्वयं भी लिखा है कि–

'जायस नगर धरम अस्थानू। तहाँ आइ कवि कीन्ह बखानू।।'

अवध प्रान्त में प्रचलित जनश्रुतियों के अनुसार जायसी का जन्म गाजीपुर जनपद में एक निर्धन मुसलमान परिवार में हुआ था। अतः जायसी के जन्म-स्थान के विषय में भी किसी निश्चित मत का अभाव है, किन्तु यह निर्विवाद रूप से सत्य है कि जायसी की जन्म-भूमि 'जायसनगर' भले ही न हो वह उनकी पर कर्मभूमि अवश्य रही होगी।

व्यक्तित्त्व– विद्वानों का मानना है कि जायसी शारीरिक रूप से 'कुरूप, असुन्दर और काने थे। कुछ विद्वान् कहते हैं कि जायसी जन्म से काने नहीं थे बल्कि शीतला के प्रकोप से उनकी एक आँख खराब हो गयी थी और उनका सुन्दर शरीर विकृत हो गया था।

परिवार– जायसी के पिता का नाम मलिक शेख मुमरेज था। इनके पिताजी के नाम से यह बात साफ हो जाती है कि मलिक शब्द 'सरनाम' के रूप में इनकी परम्परा में प्रचलित था, इनका ननिहाल मनकपुर में था। शेख अलहदाद इनके

नाना थे । इनके पिताजी छोटी उम्र में ही मर चुके थे, चेचक की बीमारी में इनकी माता भी मनकपुर के मनकशाह की मनौती मानकर अपने नन्हे बालक को रोगी अवस्था में ही अनाथ छोड़कर चल बसीं। जायसी की माता का नाम प्राप्त नही होता। कहा जाता है कि जायसी एक गृहस्थ किसान के रूप में जायस में रहते थे। इनके छः पुत्र थे जो मकान की छत के नीचे दबकर मर गये। इस संतति वियोग के कारण उन्हें संसार से विरक्ति हो गयी और वे अध्यात्मवादी होकर फकीर बन गयें। वे स्वभांव के बहुत उदार थे।

गुरुपरम्परा— जायसी के गुरु का नाम मुहिउद्दीन था। वे निजामुद्दीन औलिया की शिष्य-परम्परा से सम्बन्धित थे।

मृत्यु-तिथि— जायसी की जन्म तिथि की ही तरह मृत्यु तिथि भी विवादित है। अवध के नवाब शुजाउद्दौला के काजी नसरूद्दीन हुसैन ने जायसी का मृत्यु काल ४ रजब ६४६ हिजरी माना है। इसके अनुसार जायसी की आयु ४६ वर्ष ही ठहरती है। परन्तु जायसी ने पदमावत के उपसंहार में अपनी वृद्धावस्था का अत्यन्त मार्मिक चित्रण किया है जिससे उपरोक्त तिथि संदिग्ध लगती है। उनकी मृत्यु के विषय में दूसरी मान्यता सन् १६४२ ई० की है। किन्तु निश्चित रूप से कुछ भी नही कहा जा सकता।

प्रश्न ३— महात्मा सूरदास का संक्षिप्त जीवन-परिचय देते हुए उनकी रचनाओं पर प्रकाश डालिए ।

अथवा

सूरदास के व्यक्तित्त्व एवं कृतियों पर प्रकाश डालिए।

उत्तर— हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल की सगुण मार्गीय शाखा के कृष्णाश्रयी कवियों में महात्मा सूरदास का महत्त्वपूर्ण स्थान है। हिन्दी साहित्य में ही नही संस्कृत साहित्य का भी अवलोकन करने से यह ज्ञात होता है कि बड़े-बड़े कवियों ने अपने जीवन-परिचय के विषय में कहीं भी कुछ भी नही लिखा है। भारतीय वे कवियों की यह परम्परा रही है कि स्व का प्रकाशन नहीं करना चाहते थे, वे अपने को अधम, नीच तथा भगवान का सेवक आदि कहकर शान्त हो गये हैं। कहीं पर भी उन्होंने अपने जन्म, जाति, जन्म-स्थान तथा परिवार आदि का उल्लेख नही किया है। यही कारण है कि हम किसी भी कवि के बारे में निर्विवाद रूप से कुछ नही कह सकते। महात्मा सूरदास का जीवन-परिचय भी कुछ इसी प्रकार का है। उनके जीवन के सम्बन्ध में किसी भी सर्वमान्य तथ्य का सर्वथा अभाव है।

जन्म-काल— सूरदास की जन्म-तिथि निश्चित करने के लिए अन्तस्साक्ष्य के रूप में 'सूरसारावली' तथा 'साहित्य लहरी' के एक-एक पदों का आधार लिया जाता है। 'सूरसारावली' में सूरदास ने लिखा है कि—

गुरु परसाद होत यह दरसन बरस प्रबीन ।
शिव विधान तप कियो बहुत दिन, तऊ पार नहि लीन ।।

इस पद में सूरदास ने 'सूरसारावली' की रचना के समय अपनी आयु ६७ वर्ष की बतायी है। पुष्टिमार्ग की मान्यतानुसार सूरदासजी बल्लभाचार्य से १० दिन छोटे थे। गोकुलनाथ जी ने 'निजवार्ता में लिखा है—

सो श्रीनाथ आचार्य जी सो दस दिन छोटे हुते।'

वल्लभाचार्य जी का जन्म सन् १५३५ वैशाख कृष्ण १५ को हुआ था, ऐसा विश्वास प्रचलित है। इसमें से १० दिन कम करने पर सूर की जन्म-तिथि वैशाख शुक्ल ५ गुरूवार सं० १५३५ ठहरती है। पुष्टि-सम्प्रदाय में भी किसी निश्चित मत का अभाव है। इनके जन्म-स्थान को ले करके विद्वानों में दो वर्ग दिखायी देता है। विद्वानों का एक वर्ग इनका जन्म आगरे के निकट 'रूनकता' नामक गाँव स्वीकारता है, जिसके समर्थक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल तथा डा० श्यामसुन्दरदास आदि विद्वान हैं। विद्वानों का दूसरा समूह उनका जन्म दिल्ली के निकट 'सीही नामक गाँव स्वीकारता है, जिसके समर्थक विद्वानों में डॉ० प्रमुख हैं डा० हरवंशलाल शर्मा तथा डा० ब्रजेश्वर ।

परिवार— सूरदासजी की वंशावली विवाद ग्रस्त होने के कारण इनके पिता का नाम भी विवादग्रस्त है। वैसे 'साहित्यलहरी' के एक पद में सूर की पूरी वंशावली का उल्लेख है। उसके अनुसार सूरदास चन्दवरदाई के वंशज हैं। इसमें सूादास का नाम सूरजदास' बताया गया है। इतना तो निर्विवाद सत्य है कि सूरदास का जन्म ब्राह्मण परिवार में हुआ था। उपरोक्त वंशावली में सूर के छः भाइयों के नामों का भी उल्लेख हुआ है जो क्रमशः इस प्रकार है- कृष्णचन्द, उदारचन्द, रूपचन्द, प्रकाशचन्द, बुद्धिचन्द, देवचन्द तथा सातवें स्वयं सूरचन्द (सूरदास) थे।

अन्धत्व— सूरदास के अन्धत्व के बारे में भी विद्वानों में मतैक्य का अभाव है। वार्त्ता साहित्य तथा सूर के सम्बन्ध में प्रचलित जनश्रुतियों के अनुसार सूरदास जन्मान्ध थे। अन्तस्साक्ष्य के रूप में सूर ने स्वयं भी लिखा है—

'सूर कूर आँधरो मैं द्वार पर्यो गाऊं'
'सूरदास अन्ध अपराधी सो काहै विसरायौ'

प्रारम्भिक जीवन तथा गुरु-दीक्षा— सूरदास के प्रारम्भिक जीवन के विषय में उनकी वंशावली के आधार पर यह कहा गया है कि उनके छः भाई मुसलमानों के आक्रमण में मारे गये तब उनके वृद्ध पिता निराश होकर किसी दरबार में मुसाहिब बने। इन्हीं कारणों से सूर की वैराग्य-भावना जागृत हुई और उन्होंने गृहत्याग कर दिया।

मृत्यु-तिथि— सूरदास की मृत्यु-तिथि भी जन्म-तिथि की भाँति विवादित है। कुछ पुष्टिमार्गीय विद्वानों ने उनका निधन सं० १६२० माना है, परन्तु श्री प्रभुदयाल मीतल तथा आचार्य रामचन्द्र शुक्ल आदि विद्वानों का अभिमत है कि सूरदास की मृत्यु सं० १६४० में हुई थी। अतः सं० १६४० वाला मत ही अधिक प्रामाणिक और समीचीन प्रतीत होता है।

सूर की रचनायें— सूरदास की प्रमुख रचनाओं में उनकी तीन रचनाओं का उल्लेख किया जाता है 'सूरसागर,' सूरसारावली' तथा 'साहित्यलहरी'। इन तीनों रचनाओं में से 'सूरसागर' उनकी सबसे महत्त्वपूर्ण कृति है।

प्रश्न ४— तुलसीदास का संक्षिप्त जीवन-परिचय बताइये।

अथवा

तुलसी के जीवनवृत्त पर प्रकाश डालिए ।

उत्तर— हिन्दी साहित्य के इतिहास में भक्तिकाल की सगुणभक्ति धारा की रामाश्रयी शाखा के प्रमुख कवि तुलसी का महत्त्वपूर्ण स्थान है। जिस प्रकार भक्तिकाल के अन्य कवियों का जीवन वृत्त विवादित है उसी प्रकार महाकवि तुलसी का जीवन भी विवाद की परिधि में आता है । प्रायः सभी भक्त कवियों के जीवन-वृत्त के बारे में देखा जाय तो ज्ञात होता है कि, इन लोगों ने अपने बारे में अपने ग्रन्थ में कहीं कुछ भी नहीं लिखा है जिसे अन्तस्साक्ष्य के रूप में प्रमाण मान करके उनके जीवन-वृत्त के विषय में कुछ निश्चितता पूर्वक कहा जा सके।

जन्म-तिथि— तुलसी के जन्म-काल के विषय में उनके किसी भी ग्रन्थ में कोई संकेत नहीं प्राप्त होता है। इनकी जन्म तिथि को लेकर विद्वानों में भी किसी निश्चित मत का अभाव है। भिन्न-भिन्न विद्वानों ने इनकी जन्म-तिथि को भिन्न - भिन्न रूप में स्वीकार किया है। पाश्चात्य विद्वान् डा० ग्रियर्सन ने तुलसी की

जन्म-तिथि सम्वत् १५८९ स्वीकार किया है। इस तिथि को मानने वाले विद्वानों में डा० माताप्रसाद गुप्त, डा० विमलकुमार जैन, तथा डा० गुलाबराय आदि प्रमुख हैं। बाबा वेणीमाधवदास ने तुलसी की जन्म-तिथि सं० १५५४ स्वीकारा है।

जन्म-स्थान— तुलसी के जन्म-स्थान के बारे में भी अनेक मत प्रचलित हैं। विद्वानों का एक समूह तुलसी का जन्म-स्थान बाँदापुर जिले का राजापुर ग्राम स्वीकार करता है। इस मत को मानने वाले विद्वानों में गार्सा-द- तासी, विल्सन, शिव सिंह 'सेगर' पं० रामगुलाम द्विवेदी तथा आचार्य रामचन्द्र शुक्ल आदि प्रमुख हैं।

विद्वानों का दूसरा वर्ग इनका जन्म-स्थान एटा जनपद का 'सोरो' नामक स्थान स्वीकार करता है। तुलसी का जन्म-स्थान 'सोरो मानने वाले विद्वानों में पं० गोविन्दवल्लभ पन्त, पं० भद्रदत्त शर्मा तथा पं० देवव्रत शर्मा आदि के नाम प्रमुख हैं।

माता-प्रिता एवं परिवार— तुलसीदास के माता-पिता के विषय में भी थोडा. बहुत मतभेद की स्थिति है, किन्तु कुल मिलाकर ठीक है। तुलसी की माता का नाम हुलसी था तथा पिता का नाम आत्माराम दूबे था। राजापुर से प्राप्त सामग्री के अनुसार उनके पिता का नाम आत्माराम दूबे था तथा सोरो से प्राप्त साम्रग्री के अनुसार उनके पिता का नाम आत्माराम शुक्ल था। तुलसीदास जी ने रामचरितमानस में स्वयं लिखा है कि—

'रामहि प्रिय पावन तुलसी-सी। तुलसीदास हित हिय हुलसी सी।।'

इनकी माता के नाम के सम्बन्ध में एक दोहा भी उपलब्ध होता है जिसके उत्तरार्द्ध की रचना कविवर रहीम ने किया है, जो इस प्रकार है—

सुरतिय नरतिय नागतिय, सब जानत अस होय।
गोद लिए हुलसी फिरैं, तुलसी सो सुत होय ।।

जाति और कुल— तुलसीदास की जाति के बारे में किसी भी प्रकार की संदेहास्पद स्थिति नहीं है। हाँ इतना अवश्य है कि इनके गोत्र के बारे में मतवैभिन्य है। राजापुर से सम्प्राप्त होने वाली सामग्री के आधर पर तुलसीदास जी सरयूपारीण दूबे ब्राह्मण थे तथा सोरो से प्राप्त सामग्री के अनुसार तुलसीदास जी शुक्ल थे, जो सनाढ्य ब्राह्मणों की एक कोटि है।

गुरू और शिक्षा— तुलसीदास के गुरु के विषय में भी मतभेद है। सारो से

प्राप्त सामग्री के अनुसार तुलसीदास नंददास के बड़े भाई थे और इनके गुरु नरसिंह थे। नरसिंह मंदिर के निकट सोरो में ही उनकी पाठशाला थी। जहाँ उन्होने शिक्षा ग्रहण की थी।

बाल्यकाल गार्हस्थ्य तथा वैराग्य– जन्म के समय तुलसी के मुख से राम नाम उच्चरित होने के कारण अशुभ एवं अमंगलकारी जानकर हुलसी ने उन्हें चुनिया दासी को दे दिया। एक दूसरी जनश्रुति है कि तुलसी पैदा होते ही पाँच वर्ष के बालक की तरह थे, उनके मुख में दाँत निकले हुए थे और उनका जन्म अभुक्त मूल नक्षत्र में हुआ था जिससे इनके माता-पिता ने इनका परित्याग कर दिया। जनश्रुतियों के आधार पर ऐसा कहा जाता है कि यमुना पार के बदरिका ग्राम निवासी दीनबन्धु पाठक की कन्या रत्नावली के साथ इनका पाणिग्रहण संस्कार भी हुआ।

लगभग १५ वर्ष तक इनका सुखमय दाम्पत्य-जीवन बीता। एक दिन रत्नावली अप्रत्याशित ढ़ंग से अपने भाई के साथ मायके चली गयीं। तुलसी रत्नावली को अपने प्राणों से भी अधिक मानते थे, अतः उसका एक पल का भी वियोग उनके लिए असह्य था। रात्रि का गहन अंधकार था, मार्ग में उफनती हुई नदी थी जिसे पार करना अत्यन्त दुष्कर कार्य था, परन्तु स्त्री-प्रेम में दिवाना तुलसी इन बाधाओं को कब मानने वाले था ? मिलन की सुखद कल्पनाओं में डुबते-उतरते तुलसी रत्नावली के पास पहुँच गये। परन्तु रत्नावली को उनका इस प्रकार आना अच्छा नहीं लगा। वह लज्जित हुई और उन्हे धिक्कारती हुई बोली–

लाज न आवत आपको, दौरे आयउ साथ ।
धिक-धिक ऐसे प्रेम को, कहा कहौं मैं नाथ ।।
अस्थि चर्ममय देह मय, तामें ऐसी प्रीति ।
होती जो कहूँ राम में, होती न तौ भवभीति ।।

पत्नी की यह फटकार तुलसी के लिए प्रबोधन बन गयी, तत्काल उनके मन में वैराग्य की लहर दौड़ पड़ी और उनके चरण रामभक्ति के पथ पर बढने लगे। तत्पश्चात् वर्तमान सामाजिक स्थिति के समाधानार्थ उन्होंने 'रामचरितमानस' की रचना किया और इसके बाद अनेक अमूल्य रचनाओं का सर्जन तुलसी ने किया।

मृत्यु-तिथि– तुलसी की मृत्यु के सम्बन्ध में तीन प्रकार का मत सामने आता है। पहले मत के अनुसार तुलसीदास की मृत्यु के संवत् १६८० श्रावण

ल सप्तमी को हुई थी।

दूसरे मत के अनुसार तुलसी की मृत्यु सम्वत् १६८० श्रावण कृष्ण तृतीया हुई थी। इस मत के समर्थक दोहे को आधार मानते हैं–

इनके मृत्यु के सम्बन्ध में तीसरा मत सम्वत् १६८० श्रावण कृष्ण तृतीया इनकी मृत्यु मानता है।

प्रश्न ५– मीराबाई का संक्षिप्त जीवन परिचय लिखिए।

उत्तर– मीराबाई का जन्म सन् १४९८ ई० के लगभग राजस्थान में मेड़ता पास चौकड़ी ग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम रत्न सिंह था। उदयपुर के ा साँगा के पुत्र भोजराज के साथ इनका विवाह हुआ था। विवाह के कुछ ही य बाद इनके पति की मृत्यु हो गयी। मीरा की मृत्यु सन् १५४६ के आस- पास ी जाती है।

मीरा बचपन से ही कृष्ण की भक्ता थीं। गोपियों की भाँति मीरा माधुर्य भाव कृष्ण की उपासना करती थीं। वे कृष्ण को ही अपना पति कहती थीं और क- लाज खोकर कृधण के प्रेम में लीन रहती थीं। बचपन से ही ये अपना धिक समय संत महात्माओं के सत्संग में व्यतीत करतीं थीं। मंदिर में जाकर पने आराध्य की प्रतिमा के समक्ष ये आनन्द विह्वल होकर नृत्य करतीं थीं। का इस प्रकार का व्यवहार उदयपुर की राजमर्यादा के प्रतिकूल था। अतः रिवार के लोग इनसे रुष्ट रहते थे।

नरसी जी का मायरा, रागगोबिन्द, राग सोरठ के पद तथा गीत- गोविन्द टीका मीरा की रचनाएँ है।

मीरा ने गीत काव्य की रचना की और कृष्ण भक्त कवियों की परम्परागत द शैली में प्रियतम के समक्ष गाया। सभी पद संगीत के स्वरों में बँधे हुए हैं। नके गीतों में आवेशपूर्ण आत्माभिव्यक्ति मिलती है। प्रियतम के समक्ष आत्म-समर्पण ी भावना तथा तन्मयता ने इनके काव्य को मार्मिक तथा प्रभावोत्पादक बना दिया ा। कृष्ण के प्रति प्रेमभाव की व्यंजना ही इनकी कविता का उद्‌देश्य रहा है। ीवन भर मीरा कृष्ण की वियोगिनी बनी रहीं। इनके काव्य में हृदय की आवेशपूर्ण ह्वलता देखने का मिलती है।

मीरा की काव्य भाषा शुद्ध साहित्यिक एवं ब्रज- भाषा के सन्निकट है तथा स पर राजस्थानी, गुजराती, पश्चिमी हिन्दी और पंजाबी का प्रभाव दुष्टिगोचर

होता है। इनकी काव्य भाषा अत्यन्त मधुर, सरस, और प्रभावपूर्ण है।

प्रश्न ६— सुदामाचरित के प्रणेता नरोत्तमदास जी का जीवन परिचय लिखि

उत्तर— नरोत्तमदास का जन्म सन् १४६३ ई० के लगभग सीतापुर जिले बाड़ी ग्राम में हुआ था। इनका लिखा हुआ केवल एक छोटा सा खंडकाव्य 'सुदा चरित' उपलब्ध है। यह ग्रंथ इतना सुंदर और भावपूर्ण है कि इसी के का नरोत्तमदास का नाम काव्य-जगत् में अमर हो गया है।

'सुदामा चरित' में नरोत्तमदास ने कृष्ण और सुदामा की आदर्श मित्र का वर्णन किया है। इस काव्य में कवि को कथा के वर्णन में जैसी सफलता मि है वैसी ही सफलता मार्मिक मनोभावों के चित्रण में भी मिली है। नरोत्तमदास जहाँ दरिद्रता में व्यतीत होने- वाले सुदामा के जीवन एवं पारिवारिक परिस्थिति का तथा ऐश्वर्य और वैभव से सम्पन्न कृष्ण की द्वारिकापुरी का सजीव व किया है। वहाँ इन्होंने मित्र की दुर्दशा देखकर कृष्ण के हृदय में उमड़ी करुणा तथा सुदामा के आत्म- सम्मान की भावनाओं का भी हृदय स्पर्शी चित्रण किया सुदामा तथा उनकी पत्नी के बीच होने वाले कथोपकथन में भारतीय दाम्प जीवन का मार्मिक तथा सजीव रूप व्यक्त हुआ है।

स्वाभाविक चित्रण नरोत्तमदास के काव्य की सबसे बड़ी विशेषता है इसमें उपमा, रूपक, अनुप्रास आदि के प्रयोग से काव्य- सौन्दर्य का उत्कर्ष हु है। नरोत्तमदास ने मुख्यतः कवित्त सवैया का और कहीं पर दोहा छन्द का प्रयोग किया है। इनके छन्दों में कथा का स्वाभाविक प्रवाह मिलता है। इन भाषा व्रजभषा है। भाषा की स्वच्छता, सरलता तथा सजीवता इनके काव्य लोकप्रियता का प्रमुख कारण है। इनकी भषा में परिस्थितियों को साकार रूप दे की अद्भुत क्षमता है।

प्रश्न ७— रहीम का जीवनवृत्त लिखिए।

उत्तर— रहीम का पूरा नाम अब्दुर्रहीम खानखाना था। इनका जन्म स १५५५ ई० के लगभग लाहौर नगर (अब पाकिस्तान में) में हुआ था। ये अकब के संरक्षक बैरम खाँ के पुत्र थे। रहीम अकबर के दरबार के नवरत्नों में से थे। अकबर के प्रधान सेनापति और मंत्री भी थे। ये वीर योद्धा थे और बड़े कौशल से सेना का संचालन करते थे। इनकी दानशीलता की अनेक कहानियाँ प्रचलि हैं। सन् १६२७ में इनकी मृत्यु हो गयी।

अरबी, तुरकी, फारसी तथा संस्कृत के ये पंडित थे। हिन्दी काव्य के

थे और हिन्दी कवियों का बड़ा सम्मान करते थे। गोस्वामी तुलसीदास से इनका परिचय तथा स्नेह-पूर्ण सम्बन्ध था।

रहीम-सतसई, शृंगार-सतसई , मदनाष्टक, रासपंचाध्यायी, रहीम रत्नावली बरवै नायिका भेद वर्णन इनकी रचनाएँ हैं। इन्होंने फारसी भाषा में भी ग्रंथों रचना की है। इनकी रचनाओं का पूर्ण संग्रह रहीम रत्नावली के नाम से शित हुआ है।

रहीम बड़े लोकप्रिय कवि थे। इनके नीति के दोहे तो सर्वसाधारण की पर रहते हैं। इनके दोहों में कोरी नीति की नीरसता नहीं है; उनमें कता तथा कवि-हृदय की सच्ची संवेदना भी मिलती है। दैनिक जीवन की तियों पर आधारित दृष्टांतों के माध्यम से इनका कथन सीधे हृदय पर चोट है। इनकी रचना में नीति के अतिरिक्त भक्ति शृंगार की भी सुन्दर व्यंजना हुई है।

रहीम जनसाधारण में अपने दोहों के लिए प्रसिद्ध हैं, पर इन्होंने कवित्त , सोरठा, तथा बरवै छन्दों में भी सफल काव्य- रचना की है। रहीम का ब्रज अवधी भाषाओं पर समान रूप से अधिकार था। इनकी भाषा सरल, स्पष्ट प्रभावपूर्ण है।

प्रश्न— रसखान का साहित्यिक जीवन परिचय लिखिए।

उत्तर ८— रसखान सगुण काव्य धारा की कृष्ण- भक्ति- शाखा के कवि इनका नाम सैयद इब्राहिम था। ये दिल्ली के पाठान सरदार थे। इनका जन्म १५५५ ई० के लगभग हुआ था। ये गुसाईं विट्ठलनाथ के शिष्य हो गये थे। १६१८ ई० के लगभग इनकी मृत्यु हुई।

रसखान रीतिकालीन कवि हैं परन्तु इनकी रचना कृष्ण-भक्ति काव्यधारा परम्परा में है। रसखान आरम्भ से ही बड़े प्रेमी व्यक्ति थे। इनका लौकिक भगवान कृष्ण के प्रति अलौकिक प्रेम-भाव में परिवर्तित हो गया था। ये ना कृष्ण के रूप सौन्दर्य पर मुग्ध थे उतना ही उनकी लीला-भूमि ब्रज के तिक सौन्दर्य पर भी। कृष्ण के प्रति इनके प्रेम-भाव में बड़ी तीव्रता, गहनता र आवेशपूर्ण तन्मयता मिलती है। इसी कारण इनकी रचनाएँ हृदय पर मार्मिक व डालती हैं। अपनी भाव सबलता तथा सरलता के कारण इनकी रचनाएँ लोकप्रिय हो गयीं। इनकी लिखी दो पुस्तकें प्रसिद्ध है, 'सुजान रसखान' र 'प्रेमवाटिका'।

सुजान रसखान की रचना कवित्त और सवैया छन्दों में हुई है तथा 'प्रेमवाटि की रचना दोहा छन्दों में। अन्य कृष्णभक्त कवियों की भाँति इन्होंने परम्परा पद शैली का अनुसरण नहीं किया। इनकी मुक्तक छंद शैली की परम्परा रीतिक तक चलती रही।

रसखान ने ब्रजभाषा में काव्य रचना की। इनकी भाषा मधुर एवं सरल है उसका स्वभाविक प्रवाह ही इनके काव्य को आकर्षक बना देता है। इन्होंने कहीं-क पर यमक तथा अनुप्रास आदि अलंकारों का प्रयोग किया है जिससे भाषा-सौन्द के साथ भाव की भी वृद्धि हुई है।

प्रश्न ९— भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का जीवन परिचय लिखिए।

उत्तर— भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र का जन्म सन् १८५० ई० में काशी के सम्भ्रान्त वैश्य परिवार में हुआ था। इनके पिता 'गिरधर दास' उपनाम से ब्र भाषा में कविता करते थे। भारतेन्दु जी ने पाँच वर्ष की अवस्था में ही एक दो रचकर अपने पिता से सुकवि होने का आशीर्वाद पाया था। दुर्भाग्य से इन स्कूली शिक्षा भली प्रकार न हो सकी। स्वाध्याय से ही इन्होंने हिन्दी, फारसी, उ अंग्रेजी, संस्कृत आदि भाषाओं का अच्छा प्राप्त किया। सन् १८८५ में इन निधन हो गया।

भारतेन्दु जी एक प्रतिभावान कवि थे। निबन्ध, नाटक, उपन्यास, आलोचन पत्रकारिता कविता आदि सभी क्षेत्रों में इन्होंने युगान्तर उपस्थित किया। य कारण है कि उस काल का नामकरण **'भारतेन्दु युग'** हुआ।

भारतेन्दुजी को हिन्दी का प्रथम राष्ट्र कवि निस्संकोच कहा जा सकता क्योंकि सर्वप्रथम इनके ही साहित्य में राष्ट्रीयता, समाज सुधार, राष्ट्र-भक्ति और देश-प्रेम के व्यापक रूप के दर्शन होते हैं। इन्होंने भक्ति एवं रीतिकाली कवियों की भाँति भक्ति और श्रृंगार की सरस एवं मार्मिक कविताएँ भी लिखा है इनकी प्रसिद्ध काव्य रचनाएँ-**प्रेम-माधुरी, प्रबोधिनी, प्रेम-सरोवर, प्रेम-फुलवारी सतसई-श्रृंगार, भक्तमाल, विनय प्रेम पचासा** आदि हैं। भारतेन्दु ग्रंथावली भ १, २ तथा ३ में इनका सम्पूर्ण साहित्य संगृहीत है।

भारतेन्दु जी खड़ी बोली गद्य के आविष्कर्ता माने जाते हैं। इन्होंने कवित ब्रजभाषा में ही की। ब्रजभाषा का रूढ़िमुक्त रूप भारतेन्दु ने अपनाया। लोकोक्तियों और मुहावरों का भी इन्होंने प्रयोग अनोखे ढंग से किया है। इन्होंने कवित्त कुण्डलिया, सवैया, छप्पय, दोहा आदि छंदों में कविता की।

हिन्दी साहित्य में भारतेन्दुजी का योगदान अविस्मरणीय और प्रेरणाप्रद रहेगा।

प्रश्न १०— श्रीधर पाठक का साहित्यिक जीवन परिचय लिखिए।

उत्तर— श्रीधर पाठक जी का जन्म सन् १८५६ ई०·में आगरा जिले के जोंधरी गाँव में हुआ था। सन् १६२८ ई० में इनकी मृत्यु हो गयी।

पाठकजी हिन्दी, संस्कृत, उर्दू फारसी तथा अंग्रेजी भाषा के प्रकाण्ड पंडित थे। इनकी रचनाओं को दो वर्गों में विभक्त किया जा सकता है- अनूदित रचनायें तथा मौलिक रचनायें इस प्रकार हैं-

वे इस प्रकार हैं-

अनूदित रचनाएँ— 'एकान्तवासी योगी' (गोल्डस्मिथ के 'हरमिट' का अनुवाद), 'श्रान्त पथिक' (ट्रैवेलर का अनुवाद) 'ऊजाड़ ग्राम' (डेजर्टेड विलेज का अनुवाद) 'ऋतु संहार' (कालिदास के ऋतुसंहार का अनुवाद) '

मौलिक रचनाएँ— जगत सच्चाईसार, कश्मीर सुषमा, भारतगीत, मनोविनोद, धन विजय, गुनवन्त, हेमन्त, वनाष्टक, देहरादून, गोखले गुणाष्टक, गोखले प्रशस्ति, गोपिका गीत तथा स्वर्गीय वीणा और तिलस्माती सुन्दरी।

पाठकजी स्वदेशप्रेम और समाज-सुधार की भावनाओं के प्रतिनिधि कवि थे। प्रकृति वर्णन में आपकी स्वच्छन्द प्रतिभा के दर्शन किये जा सकते हैं। आपकी कविता का विषय एक ओर राष्ट्रीयता और स्वदेश-गान है तो दूसरी ओर शिक्षा-प्रसार और विधवाओं की व्यथा जैसे सामाजिक विषय हैं।

भाषा की दृष्टि से पाठकजी ब्रजभाषा और खड़ी बोली दोनों में कविता लिखते थे। सच तो यह है कि इनकी ब्रजभाषा की कविताओं में अगाध माधुर्य है, सरसता है और काव्य-सौन्दर्य का अतुल सन्निवेश है, किन्तु खड़ी बोली की इनकी कविताएँ ऐतिहासिक महत्त्व रखती हैं। हिन्दी में अतुकान्त कविता लिखने का सम्भवतः सवप्रथम प्रयास पाठकजी ने ही प्रारम्भ किया था।

प्रश्न ११— अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' का साहित्यिक जीवन परिचय लिखिए।

उत्तर— खड़ी-बोली को काव्य-भाषा के पद पर प्रतिष्ठित करने वालों में अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' का नाम सर्वोपरि है। इनका जन्म जिला आजमगढ़ जिला के निजामाबाद नामक ग्राम में पर सन् १८६५ ई० में हुआ था। इनके पिता का नाम पंडित भोला सिंह था। सन् १४४५ ई० में हरिऔध जी का निधन हुआ।

हरिऔधजी द्विवेदी युग की विभूति थे, किन्तु ये छायावादी युग तक निरन्तर साहित्य-साधना करते रहे। इन्होंने साहित्य के विविध अंगों पर लिखा है। खड़ी बोली और ब्रजभाषा दोनों पर हरिऔधजी का अधिकार था। इनकी प्रमुख कृतियां हैं---प्रिय-प्रवास, वैदेही-वनवास, चौखे-चौपदे, चुभते- चौपदे, रसकलश।

प्रिय-प्रवास में कवि ने सरल हिन्दी और समासयुक्त पदावली का प्रयोग कर खड़ी बोली के एक नवीन रूप को प्रस्तुत किया। उसमें राधा तथा कृष्ण के परम्परागत शृंगारी रूप को त्याग कर उनके चरित्र में लोक-कल्याण के आदर्शों का सन्निवेश किया गया है और उन्हें लोक-रक्षक, महा-मानव के पद पर प्रतिष्ठित किया गया है। इस ग्रंथ में कवि ने संस्कृत वर्णवृत्तों का प्रयोग कर हिन्दी भाषा और साहित्य की अपूर्व सेवा की है।

हरिऔधजी ने अपनी रचनाओं में प्रकृति-चित्रण के विशिष्ट रूपों का प्रयोग कर हिन्दी कविता को नयी दिशा प्रदान की है।

इनकी **चौखे चौपदे, चुभते चौपदे** आदि पुस्तकें खड़ी बोली में हैं। इनमें सामाजिक जीवन के विविध पहलुओं पर मीठी चुटकियां हैं और भाषा मुहावरेदार है। ये दोनों ही रचनाएँ हरिऔधजी के ऐतिहासिक महत्त्व को स्थापित करने के लिए पर्याप्त हैं। हरिऔधजी को इनके जीवन-काल में पर्याप्त सम्मान प्राप्त हुआ था। सन् १६२४ ई० में इन्होंने हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रधान पद को सुशोभित किया। प्रिय प्रवास पर मंगला प्रसाद पारितोषिक भी प्राप्त हुआ था।

प्रश्न १२– राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त का साहित्यिक जीवन परिचय लिखिए।

उत्तर– राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त हिन्दी-काव्य-जगत के अनुपम रत्न हैं। इनका जन्म सन् १८८६ ई० में चिरगाँव (झाँसी) में हुआ था और मृत्यु सन् १६६४ ई० में हुई। गुप्तजी के पिता का नाम सेठ रामचरण था। वे कविता के प्रेमी, निष्ठावान भारतीय थे। पिता के संस्कार पुत्र को पूरी तरह प्राप्त थे।

गुप्तजी ने मौलिक तथा अनूदित लगभग चालीस पुस्तकें लिखी है। उनमें से प्रमुख है: **रंग में भंग, जयद्रथ वध, पंचवटी,** अनघ, हिन्दू, गुरुकुल, झंकार, **साकेत, यशोधरा, मंगल घट, नहुष, कुणाल गीत, द्वापर, विष्णुप्रिया, दिवोदास, मेघनाद, बिरहिणी-व्रजांगना** आदि।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग से 'साकेत' महाकाव्य पर मंगलाप्रसाद पुरस्कार भी प्राप्त हुआ है।

गुप्तजी ने अपनी रचनाओं खड़ी बोली के शुद्ध परिष्कृत और तत्सम-बहुल रूप को ही अपनाया है। गुप्तजी की भाषा भावों के अनुकूल है। गुप्तजी के काव्यों में अलंकारों का सहज एवं स्वाभाविक प्रयोग हुआ है।

हिन्दी की आधुनिक युग की समस्त काव्य-धाराओं को गुप्तजी ने अपने साहित्य में स्थान दिया है- प्रबन्ध-काव्य, खंड-काव्य, गीतनाट्य और छायावादी शैली के गीत।

गुप्तजी खड़ी बोली के उन्नायकों में प्रधान हैं, इन्होंने खड़ी बोली को काव्य के अनुकूल भी बनाया और जनरुचि को भी उसकी ओर प्रवृत्त किया।

मैथिलीशरण गुप्त भारतीय संस्कृति के अमर गायक, उद्‌भट प्रस्तोता और सामाजिक चेतना के प्रतिनिधि कवि थे। इन्हें राष्ट्रकवि होने का गौरव प्राप्त है। गुप्तजी बारह वर्ष तक राज्य-सभा के मनोनीत सदस्य भी रहे।

प्रश्न १३— श्री जयशंकर 'प्रसाद' का साहित्यिक जीवन परिचय लिखिए।

उत्तर— जयशंकर 'प्रसाद' का जन्म वाराणसी में 'सुंघनी साहु' नाम से प्रसिद्ध एक प्रतिष्ठित वैश्य परिवार में सन् १८९० ई० में हुआ था। 'प्रसाद' के पिता बाबू देवी प्रसाद की मृत्यु इनके बाल्यकाल में ही हो गयी थी। 'प्रसाद' की शिक्षा स्कूल में केवल आठवें दर्जे तक हुई थी, किन्तु घर पर इन्हें अंग्रजी, हिन्दी, उर्दू, और संस्कृत की अच्छी शिक्षा मिली। संस्कृत-साहित्य के प्रति इनका गहन अनुराग था। इन्होंने वेद और उपनिषदों के साथ-साथ इतिहास और दर्शन का भी गंभीर अध्ययन किया। काशी के अच्छे कवियों की संगति इन्हें बाल्यकाल से ही प्राप्त हो गयी, जिससे बचपन से ही इनकी रुचि प्रणयन के प्रति जागृत हो गयी। इनका जीवन बड़ा संघर्षपूर्ण रहा तथा अनेक पारिवारिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। सन् १९३७ ई० में क्षय-रोग से इनका देहावसान हो गया।

पन्द्रह वर्ष की आयु से ही 'प्रसाद' जी ने लिखना आरम्भ किया था। वे बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न कलाकार थे। इन्होंने काव्य, कहानी, नाटक, उपन्यास तथा निबन्ध सभी प्रकार की साहित्य प्रणयन किया है। किन्तु 'प्रसाद' मूलतः कवि हैं। आपके प्रमुख काव्य ग्रंथ हैं—

लहर, झरना, प्रेम-पथिक, करुणालय, कानन-कुसुम, आँसू तथा कामायनी। अनेक विद्वानों की राय में कामायनी आधुनिक हिन्दी साहित्य का सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य है। इसमें मानव-सभ्यता के विकास की कथा रूपक के माध्यम से प्रस्तुत की गयी है। 'कामायनी' को मंगला प्रसाद पारितोषिक से सम्मानित किया गया है।

वस्तुतः हिन्दी में नवीन युग का द्वार 'प्रसाद' ने ही खोला। अनेक विद्वान् एक स्वर से इन्हें छायावाद का प्रवर्तक और उसका श्रेष्ठ कवि मानते हैं। निश्चय ही ये युग-प्रवर्तक साहित्य-स्रष्टा थे। इतिहास, दर्शन और कला के मणि- कांचन संयोग ने इनके काव्य को अपूर्व गरिमा प्रदान की है। छायावादी शैली-शिल्प का प्रौढ़तम रूप इनकी कविता में उपलब्ध होता है।

प्रश्न १४— श्री सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' का साहित्यिक जीवन परिचय अपने शब्दों में दीजिए।

उत्तर— सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' का जन्म सन् १८९७ ई० में बंगाल के महिषादल राज्य में हुआ था। इनके पिता उत्तर-प्रदेश के उन्नाव जिले के निवासी थे, किन्तु आजीविका के लिए बंगाल चले गये थे। ढाई वर्ष की अवस्था में इन्हें माता की गोद से वंचित होना पड़ा और इनके लालन-पालन का भार इनके पिता के कंधों पर आ पड़ा। 'निराला' की प्रारम्भिक शिक्षा महिषादल में हुई। संस्कृत, बंगला और अंग्रेजी का अध्ययन इन्होंने घर पर ही किया। सन् १९६१ ई० में इनका देहावसान हो गया।

'निराला' बहुमुखी प्रतिभा वाले साहित्यकार थे। कविता के अतिरिक्त इन्होंने उपन्यास, कहानियाँ, आलोचना और संस्मरण भी लिखा हैं। इनकी प्रमुख काव्य रचनाएँ हैं- परिमल, गीतिका, अनामिका, तुलसीदास, कुकुरमुत्ता, अणिमा, अपरा, बेला, नये पत्ते, आराधना, अर्चना आदि। मुख्यतः ये कवि थे और छायावाद के प्रमुख प्रर्वतकों में से एक थे। इनकी कविता में विषय की विविधता और नवीन प्रयोगों की बहुलता है। शृंगार, रहस्यवाद, राष्ट्र-प्रेम, प्रकृति-वर्णन के अतिरिक्त शोषण और भेदभाव के विरूद्ध विद्रोह, शोषित एवं दीन-हीन जन के प्रति सहानुभूति तथा पाखण्ड और प्रदर्शन के प्रति व्यंग्य इनके काव्य की विशेषताएँ हैं।

'निराला' का मुक्त एवं क्रान्तिकारी स्वभाव परम्परागत छन्द विधान को स्वीकार नहीं कर पाया और इन्होंने छन्द का विकास किया। 'निराला' की दो शैलियाँ स्पष्ट हैं----एक उत्कृष्ट छायावादी गीतों में प्रयुक्त, लम्बी, समस्त पदावली युक्त, तत्सम बहुल, गहन विचार से ओत-प्रोत शैली और दूसरी सरल, प्रवाहपूर्ण, प्रचलित उर्दू के शब्द लिये व्यंग्यपूर्ण और चुटीली शैली।

इनकी रचनाओं में आग है, पौरुष है और है सड़ी-गली परम्पराओं से विद्रोह। कुल मिलाकर निराला हिन्दी के क्रान्तिकारी कवि हैं।

प्रश्न १५— श्री सुमित्रानन्दन पन्त का साहित्यिक जीवन परिचय लिखिये।

उत्तर— सूमित्रानन्दन पन्त का जन्म सन् १६०० ई में अल्मोड़ा के निकट कौसाम्बी ग्राम में हुआ था। जन्म के छः घण्टे बाद ही इनकी माता का शरीरान्त हो गया। इनका लालन-पालन प्रकृति की गोद में हुआ। प्रारम्भिक शिक्षा ग्राम की पाठशाला में हुई। हाई स्कूल की परीक्षा वाराणसी से पास करके पन्त जी प्रयाग के म्योर सेण्ट्रल कालेज में प्रविष्ट हुए, किन्तु सन् १६२१ ई० में असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ होने पर इन्होंने कालेज छोड़ दिया और साहित्य साधना में प्रवृत्त हो गए इन्होंने दीर्घकाल तक हिन्दी साहित्य की निरन्तर सेवा की । २८ दिसम्बर १६७७ को इनका देहावसान हो गया। साहित्य अकादमी ने इनकी विशिष्ट साहित्य सेवा के लिए पुरस्कृत किया तथा भारत-सरकार ने इन्हें 'पद्मभूषण' के अलंकार से सम्मानित किया। इनकी कृति 'चिदम्बरा' पर इन्हें भारतीय ज्ञानपीठ का एक लाख रूपये का पुरस्कार प्रदान किया गया।

इनकी प्रमुख रचनाएँ— वीणा ग्रन्थि, पल्लव , पल्लविनी, अतिसा, गुंजन, युगान्त, युगवाणी, ग्राम्या, स्वर्णकिरण, स्वर्णधूलि, उत्तरा, कला और बूढ़ा चाँद, युगपथ, शिल्पी, चिदम्बरा, ऋता, लोकायतन, रश्मिबन्ध, आदि हैं।

'प्रसाद और 'निराला' की भाँति पन्त भी छायावाद के आधार-स्तम्भ हैं। छायावाद अपने पूरे सौन्दर्य और समृद्धि के साथ पन्त के काव्य में अभिव्यक्त हुआ है। पन्त जी प्रकृति के सुन्दर, सजीव, मनोरम दृश्य अंकित करने में सिद्धहस्त कवि हैं। इन्हें प्रकृति का सुकुमार कवि कहा जाता है।

पन्त के काव्य-जीवन की यात्रा के स्पष्टतः तीन सोपान माने जा सकते हैं।

१- छायावादी काव्य रचनाएँ, २- प्रगतिवादी काव्य तथा ३- श्री अरविन्द के दर्शन से प्रभावित होने के पश्चात् की अन्तश्चेतनावादी, आध्यात्मिक कविताएँ जहां ये मानवतावाद के सच्चे समर्थक के रूप में प्रकट हुए हैं।

पन्त के काव्य में मानवता के प्रति सहज आस्था है। वे एक नवीन, सुन्दर, एवं सुखी समाज की सृष्टि के प्रति आशवान हैं। विश्व-बंधुत्व और भ्रातृत्व के प्रति यह आशावादी स्वर ही उनके काव्य को उदात्त बनाता है। काव्य-कला के प्रति पन्त जी विशेष रूप से सचेष्ट हैं। इनकी भाषा चित्रमयी एवं अलंकृत है तथा स्पष्ट, सशक्त बिम्ब-योजना ने उसे अत्यन्त प्रभावमयी बना दिया है। संक्षेप में सुन्दर, सुकुमार भावों के चतुर-चितेरे पन्त ने खड़ी बोली को ब्रजभाषा जैसा माधुर्य एवं सरसता प्रदान करने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। पन्त जी एक

गम्भीर विचारक हैं, उत्कृष्ट कवि हैं मानवता के सहज आस्थावान् कुशल शिल्पी, हैं; जो नवीन सृष्टि के अभ्युदय का स्वप्न देखने में तल्लीन हैं।

प्रश्न १६– सुश्री महादेवी वर्मा का साहित्यिक जीवन परिचय लिखें।

उत्तर– महादेवी वर्मा का जन्म सन् १९०७ ई० में होली के दिन फर्रूखाबाद (उ० प्र०) में हुआ था। इनके पिता श्री गोविन्दसहाय वर्मा इन्दौर के एक कालेज में आध्यापक थे तथा माता सरल हृदया, धर्म-परायण महिला थीं। महादेवी एक कुशाग्रबुद्धि बालिका थीं और बचपन से ही माँ से रामायण-महाभारत की कथाएँ सुनते रहने के कारण इनके मन में साहित्य के प्रति आकर्षण उत्पन्न हो गया था; फलतः मौलिक काव्य-रचना इन्होंने बहुत छोटी आयु से आरम्भ कर दी थी। इन्होंने प्रयाग विश्वविद्यालय से संस्कृत में एम० ए० किया। दर्शन, संगीत तथा चित्रकला में इनकी विशेष अभिरुचि है। भारत- सरकार ने इन्हें 'पद्मभूषण' के अलंकार से सम्मानित किया है।

महादेवीजी आधुनिक हिन्दी साहित्य के निर्माताओं में महत्त्वपूर्ण स्थान की अधिकारिणी हैं। प्रसाद, पन्त, निराला तथा महादेवी छायायुग के इन चार महान कवियों को बृहत चतुष्टयी के नाम से जाना जाता है।

इनकी प्रमुख काव्य रचनाएँ हैं-नीहार, रश्मि, नीरज, सांध्यगीत, दीपशिखा, सप्तपर्णा तथा हिमालय।

साहित्य को इनका योगदान मुख्यतः कवि के रूप में प्राप्त है; किन्तु इन्होंने प्रौढ़ गद्य-लेखन द्वारा हिन्दी भाषा को सजाने-सँवारने तथा अर्थ-गाम्भीर्य प्रदान करने में जो प्रयत्न किया है, वह अत्यन्त प्रशंसनीय है।

महादेवीजी ने सरस गीतों की रचना की है, जिनमें वेदना की मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है। अपने गीतों में इन्होंने असीम, अगोचर, परोक्ष प्रिय (ईश्वर, ब्रह्म) के प्रति प्रेम का निवेदन किया है। बौद्धों के दुःखवाद तथा करुणावाद का इन पर गहरा प्रभाव है। इन्होंने अपने गीतों में स्निग्ध और सरल, तत्सम प्रधान खड़ी बोली का प्रयोग किया है। साहित्य तथा संगीत के मणि-कांचन संयोग द्वारा 'गीत' की विधा को विकास की चरम सीमा तक पहुँचा देने का श्रेय महादेवी वर्मा को ही है।

प्रश्न १७– श्री रामकुमार वर्मा का साहित्यिक जीवन परिचय लिखें।

उत्तर– रामकुमार वर्मा का जन्म सागर (मध्य प्रदेश) जनपद के गोपालगंज ग्राम में सन् १९०५ ई० में हुआ था। राबर्टसन कालेज जबलपुर तथा

प्रयाग-विश्वविद्यालय में इन्होंने शिक्षा प्राप्त की। सन् १६२६ ई० में प्रयाग-विश्वविद्यालय की एम० ए० (हिन्दी) परीक्षा में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होकर इन्होंने प्रथम स्थान प्राप्त किया। प्रयाग-विश्वविद्यालय में ये अध्यापन कार्य करते रहे। सन् १६४० ई० में नागपुर विश्वविद्यालय ने इन्हें डाक्टर ऑफ फिलासफी की उपाधि प्रदान की। हिन्दी के प्रोफेसर होकर ये सोवियत यूनियन और श्रीलंका भी गये। भारत-सरकार ने इन्हें **'पद्मभूषण'** की उपधि से और हिन्दी-साहित्य सम्मेलन ने **'साहित्य वाचस्पति'** की उपाधि से सम्मानित किया। **इन्होने देव-पुरस्कार तथा कालिदास-पुरस्कार** भी प्राप्त किये। सन् १६६६ ई० में प्रयाग-विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष के पद से इन्होंने अवकाश ग्रहण किया।

चित्ररेखा, चन्द्रकिरण, संकेत, आकाश गंगा, इनके काव्य-संग्रह हैं तथा एकलव्य और उत्तरायण प्रबंधकाव्य हैं।

भारतीय संस्कृति के प्रति वर्माजी की विशेष आस्था है। प्रकृति का सौन्दर्य भी वर्माजी को सदैव आकर्षित करता है। इनकी रचनाओं में प्रकृति के बड़े मार्मिक चित्र मिलते हैं। प्रकृति सौन्दर्य से इन्हें आध्यात्मिक साधना की प्रेरणा मिलती रही। इनके गीत संगीतात्मकता की और चरम सीमा पर पहुँचे भावों के आवेश से पूर्ण है। इनका अलंकार-विधान नवीन तथा भावानुकूल है। नवीन उपमाओं का प्रयोग, चित्रात्मकता, कोमलकान्त पदावली तथा भाषा की स्वच्छता एवं स्पष्टता इनकी कविता की प्रमुख विशेषताएँ हैं।

प्रश्न १८— श्री रामनरेश त्रिपाठी जी का साहित्यिक जीवन परिचय लिखिए।

उत्तर— श्री रामनरेश त्रिपाठी जी का जन्म सन्१८८६ ई० में जिला जौनपुर (उ० प्र०) के अन्तर्गत कोइरीपुर ग्राम में एक साधारण कृषक परिवार में हुआ था। केवल नवीं कक्षा तक स्कूल में पढ़ने के पश्चात् इनकी पढाई छूट गयी। बाद में इन्होंने स्वतंत्र रूप से अध्ययन किया तथा साहित्य-साधना को ही अपने जीवन का लक्ष्य बनाया। सन् १६६२ ई० में इनका स्वर्गवास हो गया।

त्रिपाठीजी मननशील, विद्वान् तथा परिश्रमी पुरुष थे। काव्य, कहानी, नाटक, निबन्ध, आलोचना तथा लोक-साहित्य आदि विषयों पर आपका पूर्ण अधिकार था। आपकी प्रमुख रचनाएँ हैं- **पथिक, मिलन और स्वप्न,** (खण्डकाव्य), **मानसी** (स्फुट कविता संग्रह), **कविता-कौमुदी, ग्राम्य-गीत,** (सम्पादित), **गोस्वामी तुलसीदास और उनकी कविता** (आलोचना)। त्रिपाठीजी आदर्शवादी कवि थे। इनकी रचनाओं में नवीन आदर्शों और नवयुग का संकेत है। इनके द्वारा रचित **'पथिक'** और

'मिलन' नामक खण्डकाव्य अत्यन्त लोकप्रिय हुए। इनकी रचनाओं की विशेषता यह है कि उनमें राष्ट्र-प्रेम तथा मानव-सेवा की उत्कृट भावनाऐं बड़े सुन्दर ढ़ंग से चिव्रित हुई हैं। इसके अतिरिक्त भारतवर्ष की प्राकृतिक सुषमा और पवित्र-प्रेम के सुन्दर चित्र भी इन्होंने अपनी कल्पनाओं में चित्रित किये है।

त्रिपाठीजी की भाषा सरल एवं सरस खड़ी बोली से सम्पन्न है। उसमें माधुर्य और ओज है। शैली अत्यन्त प्रवाहपूर्ण है।

प्रश्न १६— श्री माखनलाल चतुर्वेदी जी का साहित्यिक जीवन परिचय अपने शब्दों में लिखिये।

उत्तर— माखनलाल चतुर्वेदी का जन्म सन् १८८८ ई० में मध्य प्रदेश में हुआ था। इनके पिता का नाम पं० नन्दलाल चतुर्वेदी था। प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् आपने घर पर ही रहकर संस्कृत, बंगला, गुजराती, एवं अंग्रेजी, आदि विषयों का अध्ययन किया। इन्होंने कुछ दिन अध्यापन कार्य भी किया। सन् १६१३ ई० में ये सुप्रसिद्ध मासिक पत्रिका 'प्रभा' के सम्पादक नियुक्त हुए। श्री गणेश शंकर विद्यार्थी की प्रेरणा तथा साहचर्य के कारण आप राष्ट्रीय आन्दोलनों में भाग लेने लगे। आपको कई बार जेल यात्रा भी करनी पड़ी। पंडित जी सन् १६४३ ई० में हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के अध्यक्ष हुए। ८० वर्ष की अवस्था में ३० जनवरी, १६६८ को आपका स्वर्गवास हो गया।

पंडित जी के निम्नलिखित कविता-संग्रह हैं- हिम किरीटिनी, हिमतरंगिणी, माता, युगचरण, समर्पण, वेणु, लो गूंजे धरा, इत्यादि। इसके अतिरिक्त चतुर्वेदी जी ने नाटक कहानी, निबन्ध तथा संस्मरण भी लिखा है। इनके भाषणों के 'चिन्तक की लाचारी' तथा' आत्म दीक्षा' नामक संग्रह भी प्रकाशित हुए हैं।

चतुर्वेदी जी की प्रसिद्धि कवि के रूप में ही अधिक है, किन्तु ये एक पत्रकार, समर्थ निबन्धकार, और सिद्धहस्त सम्पादक भी थे। इनका 'साहित्य-देवता' गद्य-काव्य की एक अमर कृति है।

इनके काव्य का मूल स्वर राष्ट्रवादी है, जिसमें त्याग, बलिदान, कर्त्तव्य, भावना और समर्पण के भाव हैं। भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन को स्वर देने वालों में चतुर्वेदीजी का प्रमुख स्थान रहा है। इनकी कविता में यदि कहीं ज्वालामुखी की तरह धधकता हुआ अन्तर्मन है तो कहीं पौरुष की हुंकार और कहीं करुणा से भरी मनुहार। इनकी भाषा में बोल-चाल के शब्दों के साथ-साथ उर्दू-फारसी के शब्द भी हैं। उसमें एक विचित्र प्रकार की मिठास है। इनकी छन्द-योजना में भी नवीनता है। चतुर्वेदी जी की कविता में भाव-पक्ष पूर्ण रूप से विद्यमान है।

हिन्दी की साहित्य-सेवा के उपलक्ष्य में सागर, विश्वविद्यालय ने इन्हें मानद डी० लिट् तथा भारत-सरकार ने 'पद्मभूषण' की उपाधियों से इन्हें अलंकृत किया। □

आधुनिक हिन्दी कहानियाँ

प्रश्न १— बूढ़ी काकी नामक कहानी का शारांश लिखिये।

उत्तर— मुन्शी प्रेमचन्द्र द्वारा लिखित कहानियों में 'बूढ़ी काकी' कहानी का विशिष्ट स्थान है। इस कहानी में प्रेमचन्द्र जी ने बूढ़ी काकी का बड़ा ही सुन्दर चरित्र चित्रित किया है। बूढ़ी काकी पुत्र और पति विहीन हैं वे अपने भतीजे बुद्धिराम को सम्पूर्ण सम्पत्ति देकर उन्हीं के अधीन अपना जीवन यापन कर रही है बुद्धिराम ने भी उनके रक्षण का झूठा भरोसा दिला रखा है। वस्तुतः बूढ़ी काकी को भर पेट भोजन भी नसीब नहीं होता। इसलिए वे कभी-कभी चिल्ला कर रोने लगती हैं। वे भर पेट भोजन के लिए तरसती हैं। उनकी दशा देखकर न तो बुद्धिराम को तरस आती, और न उनकी पत्नी रूपा ही उन पर दया करती थी। ये दोनों उन्हे प्रताड़ित करते थे। घर की छोटी बच्ची लाड़ली ही बूढ़ी काकी का ध्यान रखती थी। वह अपने हिस्से का भी भोजन बूढ़ी काकी को दे दिया करती थी।

एक दिन बुद्धिराम के पुत्र सुखराम का तिलक चढ़ने वाला था। घर में उत्सव मनाया जा रहा था, अनेक प्रकार के पकवान पक रहे थे, और बूढ़ी काकी मन-ही-मन यह सोच कर कि मुझे आज भर पेट भोजन खाने को मिलेगा, प्रसन्न होती थीं। कि वे आशा लगाये पड़ी थीं कि अब मुझे भोजन अवश्य मिलेगा, लेकिन परिस्थिति कुछ दूसरी ही थी।

घर में मेहमान आये, सबों ने भोजन करना प्रारम्भ कर दिया और उनके भोजन करने की आहट भी बूढ़ी काकी को लग रही थी। किन्तु वे चुप-चाप अपने बिस्तर पर पड़ी रहने के लिए बाध्य थीं, क्योंकि मेहमानों के भोजन करने से पहले ही एक बार वे किसी तरह खिसक कर कड़ाही के सन्निकट तक पहुँच गयी थीं जहाँ पर पूड़ियाँ छन रही थीं। उनको इस तरह आये देखकर बुद्धिराम की पत्नी क्रोध से लाल हो गयी और वह अनेक प्रकार से बूढ़ी काकी को जली कटी सुनाने लगी। रूपा की उन बातों को सुनकर बूढ़ी काकी अपनी कोठरी में चली गयीं और भोजन पाने का इन्तजार करने लगीं, किन्तु कोई भी उन्हें भोजन देने नहीं आया।

सभी मेहमान भोजन कर चुके थे। घर में सब लोग अब सो रहे थे। बूढ़ी काकी भूख से परेशान थीं। उन्होंने जब यह जान लिया कि अब मुझे कोई भोजन

देने नहीं आयेगा, वे किसी तरह से उठीं और घिसकर उस स्थान पर चली गये जहाँ पर कुत्ते जूठे पत्तलों को चाट रहे थे। बूढ़ी काकी भी उन्हीं पत्तलों में से जूठा अन्न निकाल कर खाने लगीं। उसी समय अचानक बुद्धिराम की पत्नी रूपा की नींद खुल गयी और उसने देखा की जिस बूढ़ी काकी के सम्पत्ति के बदौलत हम आज धनी माने जाते हैं सभी लोग हमारी इज्जत करते हैं, वही बूढ़ी काकी आज जूठे पत्तलों से भोजन निकाल कर खा रही हैं। एक बार रूपा का हृदय द्रवित हो उठा। वह दौड़ कर आयी, और बूढ़ी काकी को अपने विस्तर पर ले गयी। वह बार-बार बूढ़ी काकी से क्षमा मांगने लग गयी। उसने भोजन की सारी चीजें लाकर बूढ़ी काकी के सामने रख दिया; और कहने लगी- काकी मुझसे बड़ी भूल हुई, उठो भोजन करो और परमात्मा से प्रार्थना करो कि मेरे अपराध को वह क्षमा कर दें।'

जिस तरह छोटे बच्चे मार खाकर और तिरस्कृत होकर भी मिठाई पाकर प्रसन्न हो जाते हैं, अपना तिरस्कार भूल जाते हैं, उसी प्रकार बूढ़ी काकी भी सब कुछ भूल गयीं और खुशी-खुशी प्रसन्न मन से भोजन करने लगीं। उस समय उनका रोम-रोम आनन्द से पुलकित हो रहा था, और वो हृदय से रूपा और उसके परिवार को आर्शीवाद दे रही थी।

विशेष— इस कहानी में मुंशी प्रेमचन्द ने एक असहाय विधवा का हृदय-द्रावक चित्र उपस्थित किया है। उन्होंने समाज में लोगो की बेईमानी की प्रवृत्ति का बढ़िया उल्लेख किया है। इस कहानी के कथोपकथन और संवाद की शैली अत्यन्त आकर्षक है, भाषा सरल और सुबोध है। इस कहानी के माध्यम से उन्होंने बूढ़ों के प्रति समाज की उपेक्षा की भावना का सफल चित्रण किया है।

प्रश्न २— ममता नामक कहानी का सारांश लिखिये ?

उत्तर— हिन्दी साहित्य के कवि, निबन्धकार, नाटककार, तथा कहानी लेखकों में श्री जयंशकरप्रसाद का महत्त्वपूर्ण स्थान है। उनकी कहानी 'ममता' एक बालविधवा की कहानी है, जो आमोद-प्रमोद के सम्पूर्ण साधनों के बीच भी निरीह और अकेली है। वह मन से भारतीय संस्कृति की सजग प्रहरी है, रोहतास दुर्ग के प्रधानामात्य चूड़ामणि की पुत्री एक बाल-विधवा ब्राह्मणी है। वह अपने पिता के साथ रोहतास दुर्ग में ही निवास कर रही है। वह पूर्ण युवती और सुन्दरी है, किन्तु उसका मन पूर्ण शान्त और सजग है। एक दिन जब वह अपने कक्ष में बैठी थी कि उसके पिता चूड़ामणि कुछ भृत्यों के साथ उसके कमरे में प्रवेश किये, और

नौकरों को इशारे से ही बतला दिया, कि वे उन सम्पूर्ण थालों को ममता के समक्ष रख दें, जिसे ममता के बदले में मुगल सम्राट शेरशाह ने भेजा था। उन बहुमूल्य आभूषणों को देखकर ममता ने उनके विषय में जानना चाहा तो चूड़ामणि ने बतलाया कि कल रोहतास दुर्ग पर मुगलों का आक्रमण होगा, और यह दुर्ग मुगलों के अधिकार में होगा। ममता चूड़ामणि का अभिप्राय समझ गयी। उसने कहा– 'पिता जी ! अपनी छोटी सी जिन्दगी के लिये इन अनर्थकारी धनों को लेकर मैं क्या करूँगी ? इसे ले जाइये। रोहतास दुर्ग के अमात्य उन धनपपूर्ण थालों को लेकर लौट गये। दूसरे दिन मुगलों का दुर्ग पर आक्रमण हुआ। अमात्य चुड़ामणि मारे गये और मुगल सिपाहियों ने रोहतास दुर्ग के चप्पे-चप्पे को छान डाला, किन्तु ममता का कहीं भी पता नहीं था। ममता उस दुर्ग को छोड़कर कहीं अज्ञात स्थान में चली जा चुकी थी। किसी तरह घूमती हुई वह वाराणसी के सन्निकट सारनाथ के बौद्ध विहार के एक खण्डहर में निवास करने लगी। वह अपनी जिन्दगी के दिन बौद्ध स्तूप के नीचे बिताने लगी। इस तरह उसके जीवन के कुछ वर्ष बीत चुके थे। एक दिन ममता जब अपने भग्नावशेष निवास के मलिन प्रकाश में पढ़ रही थी–

अनन्याश्चिन्तयन्तो माम् ये जनः पर्युपासते
...................योगक्षेमम् वहाम्यहम्

कि उसने कमरे में किसी अज्ञात व्यक्ति के प्रवेश करने की आहट सुनी। दरवाजा बन्द था; किन्तु आगन्तुक ने प्रार्थना पूर्वक कहा– माँ मुझे आश्रय चाहिये, मैं मुगल हूँ। चौसा युद्ध में शेरशाह से विपन्न होकर विश्राम चाहता हूँ। ममता ने सुना कि यह भी मुगल है, उसे शेरशाह की क्रूरता याद आ गयी और उसने कहा– कि मैं तुझे आश्रय नहीं दे सकती। किन्तु मुगल ने कहा– मेरा गला सूख रहा है, मेरे साथी छूट चुके हैं, घोड़ा मर गया है, अत्यन्त थका हूँ, अब मैं चल नहीं सकता, और यह कह कर वह वहीं बैठ गया। थोड़ी देर बाद मुगल ने फिर कहा– माँ मैं चला जाऊँ ? मेरा नाम हुमायूँ है। ममता ने मन में सोचा– अतिथि का सत्कार प्राण देकर भी करना चाहिए। यह कौन सा दुर्ग है कि कोई इसे जीत लेगा। उसने कहा– पथिक ! तुम भीतर जाओ, विश्राम करो, बहुत थके हो। हुमायूँ ममता के कमरे में जाकर विश्राम करने लग गया, और ममता ने पूरी रात किसी दूसरे खण्डहर में बिताया।

सबेरा हुआ, अनेक मुगल सिपाही उस भग्नावशेष के इर्द-गिर्द घूमने लग

गये। हुमायूँ ने देखा कि वे उसके ही सिपाही है। उसने अपने मन्त्री से कहा– मिर्जा ! इस खण्डहर में मैने रात बितायी है। इसको तुम बनवा देना। यह कह कर वह अपने सिपाहियों के साथ चला गया।

ममता के जीवन का यह अन्तिम समय था। वह अस्वस्थ थी। इर्द-गिर्द की नारियाँ उसकी सेवा में लगी थीं। उसी समय ममता ने देखा कि कुछ मुगल सिपाही उसके निवास स्थान के इर्द-गिर्द में घूम रहे हैं। एक ने कहा– यह वही स्थान होना चाहिए, जहाँ पर सम्राट हुमायूँ ने आश्रय पाया था। इसी स्थान को उन्होंने भव्य भवन बनाने का आदेश अपने मन्त्री मिर्जा को दिया था। ममता ने भी उनकी आवाज सुनी। उसने उन सिपाहियों को अपने पास बुलाया और कहा– अब मैं सदा-सदा के लिए जा रहीं हूँ। इसे तुम मन्दिर बनाओ या राजमहल, यह कह कर ममता सदा के लिए सो गयी।

कुछ दिनों के बाद उसी स्थान पर एक भव्य भवन बना, और उस पर लिखा था सातों देश के सम्राट् अकबर ने अपने पितामह की याद में इसे बनवाया, किन्तु उस पर ममता का नाम नहीं था।

विशेष– प्रस्तुत कहानी आकार की दृष्टि से छोटी, किन्तु प्रभाव की दृष्टि से सशक्त है। इसमें कथोपकथन तथा चरित्र-चित्रण के तत्त्व विद्यमान हैं।

प्रश्न ३– 'हार की जीत' नामक कहानी का सारांश लिखिये।

उत्तर– श्री सुर्दशन सिंह द्वारा लिखित 'हार की जीत' कहानी एक मौलिक महत्त्व रखती है। त्याग तथा वैराग्य की भावना से परिपूर्ण बाबा भारती के पास एक सुल्ताना नामक घोड़ा था। उसके चाल की प्रख्याति पूरे इर्द-गिर्द में फैली हुई थी। बाबा भारती को भी इस घोड़े से बड़ा प्रेम था। वे जब इस घोड़े को देखते थे तो आनन्द से फूल जाते थे। जिस तरह किसान अपने हरे-भरे खेतों को देखकर प्रसन्न होता है, उसी तरह बाबा भारती हमेशा उस घोड़े को देखा करते थे ।

खड्गसिंह नाम का डाकू उसी इलाके में रहता था, जहाँ बाबा भारती रहते थे। उसने भी सुल्ताना की प्रसिद्धि सुनी और वह बाबा भारती के सिन्नकट गया। उसने सुल्ताना को देखने की इच्छा प्रकट की। बाबा भारती बड़े प्रेम से खड्गसिंह को अपना घोड़ा दिखाये और उसकी चाल भी दिखाये। घोड़े को देखकर खड्गसिंह का मन मोहित हो गया। उसने बाबा भारती से कहा– बाबा इस घोड़े को अब आप के पास नहीं रहने दूँगा। यह कह कर खड्गसिंह चला गया। बाबा भारती हमेशा इस शंका में पड़े रहते थे कि रात को कहीं खड्गसिंह आकर सुल्ताना को

न जाय। इसलिये वे रात को बार-बार जागकर घोड़े को देखा करते थे।

एक दिन बाबा भारती जब अपने घोड़े पर सवार होकर सायंकाल की बेला कहीं घूमने जा रहे थे, कि उन्होंने एक करुण आवाज सुनी। 'बाबा, हम कंगले भी बात सुनते जाना'। वे बाबा भारती उसके सन्निकट गये और उसे अपाहिज झ कर पूछे कि उसे क्या कष्ट है ? अपाहिज ने उत्तर दिया– 'मैं बहुत दुखी दुर्गा वैद्य का सौतेला भाई हूँ' मुझे वहाँ पहुँचा दीजिए।

बाबा भारती ने अपाहिज को घोड़े पर बैठा दिया और स्वयं घोड़े की लगाम ड़ कर धीरे-धीरे चलने लगे। अचानक बाबा भारती ने एक झटका महसूस या। उनके हाथ से लगाम छूट गयी थी, उन्होंने देखा अपाहिज घोड़े को तेजी से ये हुए जा रहा है। बाबा आश्चर्य चकित हो गये, उन्होंने जान लिया कि यह खड्गसिंह है जो घोड़े को देखने के लिये आया था।

बाबा भारती ने जोर से आवाज दी; खड्गसिंह जरा रूकं जाओ खड्गसिंह क गया और उसने कहा– 'बाबा मैं अब इस घोड़े को नहीं दूँगा।' बाबा भारती कहा– 'इसकी बात न करो, घोड़ा तुम्हारा हो चुका है इसे तुम ले जाओ, किन्तु घटना को किसी दूसरे से कहना मत' क्योंकि इस घटना को सुनकर कोई रा व्यक्ति किसी अपाहिज अथवा असहाय की सहायता नहीं करेगा। यह हकर बाबा भारती उस स्थान से उसी तरह लौट गये, जैसे उनका घोड़ा हो ही हीं, और अब वे अपने आश्रम में आराम से सो रहे थे। उन्हें सुल्ताना की याद नहीं आती थी।

एक दिन बाबा भारती अचानक रात में जगे और अपने पूर्वाभ्यास के नुसार अचानक उस घोड़े के अस्तबल की ओर आये जहाँ पर वे सुल्ताना को घते थे। लेकिन वे देखकर आश्चर्यचकित हो गये कि अस्तबल में सुल्ताना बँधा । बाबा भारती को देखकर घोड़ा जोर से हिनहिनाया। बाबा भारती भी तेजी से ल्ताना के पास पहुँचे और उसके गले से लिपट कर रोने लगे, और उनके मुख निकल पड़ा अब कोई गरीबों की सहायता से मुख नहीं मोड़ेगा।

विशेष– इस कहानी की कथावस्तु अत्यन्त आकर्षक है। कथोपकथन की भावपूर्ण शैली है, तथा इसमें चरित्र-चित्रण, कहानी के तत्त्वों आदि का सद्भाव है। यह अपने आप में एक सफल कहानी है। इसमें बाबा भारती के त्याग तथा वैराग्य का सफल चित्रण है। कहानी के माध्यम से बतलाया गया है कि त्याग के द्वारा हृदय-हीनता को सहृदयता में बदला जा सकता है।

प्रश्न ४— डॉ० शिवप्रसाद सिंह की कर्ज नामक कहानी का सारांश लिखिए।

उत्तर— डॉ० सिंह की कहानियों में कर्ज नामक कहानी का विशेष महत्त्व है। इस कहानी में डॉ० सिंह ने एक ऐसे परिवार की कहानी को चित्रित किया है जिसका सदस्य अपनी वंश की परम्परा के अनुसार कर्ज लिया करता था; किन्तु आजीवन प्रयास करके भी उस कर्ज को नहीं चुका पाता था। देवला काकी के दो जुड़वे बच्चे थे— जगपती और रामपती। ये दोनों जब कुछ बड़े हुए तो पिता का स्वर्गवास हो गया, और देवला काकी विधवा हो गयी। उन्होंने किसी तरह दोनों बच्चों को पाला-पोसा और इसी में उनकी दो बीघा जमीन भी गिरवी हो गयी। बड़ा होकर जगपती ने उस खेत को छुड़ाया। उसे अपने छोटे भाई रामपती से बड़ा ही प्रेम था।

जगपती ने अपनी माँ से कहा कि— अब मैं तो बूढ़ा हो गया हूँ। इसलिए अपने छोटे भाई की ही शादी करवा देता हूँ। उसने चुपके से अपने हिस्से का खेत बेच दिया और पाँच सौ रूपया महाजन से कर्ज लेकर लड़की खरीद कर अपने छोटे भाई रामपती की शादी कर दी। उसने अमनी माँ को यह कहकर समझा दिया कि घर में जब कोई रहेगा ही नहीं तो जमीन रहकर क्या करेगी। खानदान चलता रहेगा तो जमीन फिर हो जायेगी। वंश के लिए लोग न जाने क्या-क्या करते हैं। अन्त में रामपती की शादी हो गयी, घर में बहू आ गयी, बड़ा ही उत्सव मनाया गया। एक दिन जगपती ने बड़ा परिश्रम किया। उस दिन उसे मजदूरी के दस रूपये मिले। उसने सोचा कि आज तो मुझे अपने छोटे भाई की बहू के हाथ का भोजन करना है। थाली छेकाई में कुछ देना होगा। उसने उस पैसे से चांदी का पछुवा बनवा कर लाया। उसके मन में विचार आया कि बहू कहीं यह न समझे कि मैं अत्यन्त गरीब परिवार में आ गयी हूँ, इस घर के लोग बहू-बेटी को रखना ही नहीं जानते हैं।

जगपती ने और अधिक परिश्रम करना प्रारम्भ किया। मजदूरी और अधिक मिलने लगी। एक दिन बरसा हुई और वह बहुत भींग गया। जगपती बिमार पड़ गया। उसको अंतदियाज्वर आने लगा। किन्तु जगपती को इसकी परवाह न थी। उसका स्वास्थ्य अधिक बिगड़ गया। इसी बींच रामपती को पुत्र हुआ। इस खबर को सुनकर जगपती के आनन्द का ठिकाना न रहा। वह बड़ा ही प्रसन्न हुआ।

जगपती के घर में पुत्र जन्तोत्सव मनाया गया। बरही के दिन बच्चे को जगपती की गोद में रखा गया। जगपती का स्वास्थ्य सुधरने लगा। इसको देखकर

के सभी लोग प्रसन्न थे। जगपती के सुधरते हुए स्वास्थ को देखकर बच्चे का भग्गू रखा गया। वह चलने-फिरने लगा। अपने रसिक स्वभाव के कारण भी किसी से मजाक भी कर लेता था।

अब जगपती खाट पर पड़ा नहीं रह सकता था। वह फिर मजदूरी करने ा। उसे कर्ज चुकाने की चिन्ता थी। वह कठिन परिश्रम करने लगा। इस तरह दूरी करते-करते उसकी सारी जिन्दगी बीत गयी किन्तु उसका कर्ज नहीं ा। कर्ज का बोझ बना ही रहा।

विशेष— इस कहानी की कथावस्तु आकर्षक है। कहानी का कलेवर इतना टा है कि एक ही बैठक में इसे आसानी से पढ़ा जा सकता है। कथोपकथन तथा रित्र-चित्रण आदि कहानी के तत्त्व इसमें विद्यमान हैं। इसमें एक गरीब परिवार बड़ा ही रोचक वर्णन है।

प्रश्न ५— डॉ० श्रीप्रसाद द्वारा लिखित 'एक काली शाम' का सारांश खिए।

उत्तर— डॉ०श्री प्रसाद द्वारा लिखित कहानियों में एक 'काली शाम' का शिष्ट स्थान है। यह एक प्रतीकात्मक कहानी है। चाची एक विधवा नारी थीं। नका चरित्र नियमित एवं संयमित था। एक बार चाची के जीवन को कलंकित रने वाली अफवाह उठी। उसको सुनकर चाची ने अपने जीवन का अंत एक एँ में गिरकर कर दिया। इस दुर्घटना से विषाद चारो फैल गया। मानों वह घटना क काली शाम बनकर चारो ओर फैल गयी हो।

चाची के चरित्र को अंकित करते हुए लेखक ने बतलाया है कि उनकी उम्र स समय लगभग तीस वर्ष की थी, वे एक विधवा नारी थी, वे गोरी तथा शरीर स्वस्थ्य थीं, वे अत्यन्त सात्त्विक ढंग से अपना समय बिताती थीं, उनकी ाल-चलन, परिश्रम, बच्चों से स्नेह पूर्ण बातें; स्नान करके पूजा-पाठ करना था धार्मिकता में ही अपना अधिक समय व्यतीत करना सबके-सब बच्चों के आकर्षण का साधन था। उनको अपने एकलौते पुत्र रामधनी से अगाध स्नेह था। वे भोजन बनाकर अपने बेटे के ही साथ बैठकर भोजन करती थीं। उनको कोई भी लौकिक वासना छू तक नहीं पायी थी।

एक दिन जाड़े के समय में शाम को कुछ लोग बैठकर आग तपा रहे थे। उन गाँव को लोगों में पंडित रामबाबू भी थे। वे एक प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। उन्होंने चाची के चरित्र के विषय में झूठी बातें की। चाची ने उन गल्त बातों को सुन लिया। उन्हें

कलंक के विषय में चिन्ता हो गयी। वे उस सद्‌मे को सहने में समर्थ न हो सकीं पास के ही कुएँ में गिर कर उन्होंने अपनी जान दे दी।

दूसरे दिन प्रातःकाल सबों के घर खुले, किन्तु चाची का घर बन्द ही रहा प्रतिदिन चाची का घर सबसे पहले खुलता था, किन्तु आज बन्द है। इससे सबों को बड़ा आश्चर्य हुआ। किसी ने चाची का दवाजा खटखटाया; किन्तु दरवाजा भीतर से बन्द नहीं था। वह अपने-आप खुल गया। कोई जाकर चाची के लड़के को बुला लाया। रामधन ने बतलाया कि खाना खाकर जब मैं खेत गया तो माँ घर में ही थी चाची को उनके नैहर में भी खोजा गया, किन्तु वे वहाँ गयी ही नहीं थीं।

किसी ने उनके कुएँ में गिरने की शंका की। सभी कुओं में उनको खोजा गया। अन्त में सन्निकट के ही कुएँ में जब काँट डाला गया तो उसी में उनका शव मिला। उस समय सायंकाल की बेला थी। भगवान् सूर्य अस्ताचल की ओर जा रहे थे। चाची के मृत्युजन्य विषाद की काली रेखा एक काली शाम बनकर मानों चारों ओर फैल गयी।

विशेष– इस कहानी की कथावस्तु अत्यन्त आकर्षक है। इसमें कथोपकथन चरित्र-चित्रण आदि कहानी के तत्त्व विद्यमान हैं।

प्रश्न ६– 'परदा' नामक कहानी का सारांश लिखिए।

उत्तर– यशपाल की कहानियों में 'परदा' शीर्षक कहानी का एक विशेष स्थान है। इसमें लेखक ने एक निर्धन चौधरी परिवार का चरित्र चित्रित किया है चौधरी पीरबख्श सरयू पाण्डेय के मकान में किरायेदार थे। उनका परिवार बड़ा था, और आर्थिक स्थिति अत्यन्त दयनीय थी। उनके इर्द-गिर्द में मोची तथा दर्जी रहते थे। वे सबके-सब अशिक्षित थे। चौधरी ही केवल पढ़े-लिखे थे। इसीलिए सब उन्हें चौधरी कहते थे। उनके दरवाजे पर पड़ा हुआ पर्दा ही उनकी मर्यादा को बचाने वाला था। चौधरी साहब अपने घर में परिवार की बढ़ोत्तरी देखकर कहते थे, खुदा जब बरक्कत देता है तो वह आदि-औलाद के ही रूप में देता है, रुपये पैसों के रूप में नहीं।

चौधरी नौकरी करते थे। उनको अठारह रूपये वेतन मिलता था। उनकी वह छोटी आय उस बड़े परिवार के लिए अत्यन्त कम थी। अधिक बाल-बच्चों वाले परिवार में अनेक प्रकर का खर्च बढ़ा रहता था। कपड़े लत्ते दवा-दारू आदि अनेक प्रकार के खर्च थे। इसके लिए चौधरी ने घर के आभूषण, बर्तन आदि को गिरवी रखा और छुड़ा नहीं पाये। एक दिन घर का दरवाजा गिर पड़ा। मकान

मालिक ने उसे बनवाया नहीं। चौधरी ने किसी तरह दरवाजे को दिवाल के सहारे खड़ा कर दिया। उनको भय बना रहता था कि कहीं चोर घुस कर घर में चोरी न कर लें, यद्यपि घर में चोरी करने के लिए कोई वस्तु नहीं थी। वे रात भर जागते रहते थे।

एक दिन चौधरी जी के दरवाजे का पर्दा फ़ट गया। चौधरी के पास आठ आना पैसा नहीं था कि टाट का परदा लगा सकें। उन्होंने घर की पुरानी दरी का ही पर्दा लगा दिया। पीरबख्श ने पंजाबी खान से चार रुपये उधार सूद पर ले लिया। आठ मास में उन्होंने उसे अदा करने का वचन दिया। किन्तु वे समय से रुपया लौटा न सके। खान आया तो चौधरी घर में छिप गये। खान आकर गुस्से में भरकर चौधरी को गालियाँ बकने लगा और पर्दे को डंडे से पीटने लगा। फिर वह आने की धमकी देकर चला गया। दूसरी बार जब रुपया लेने के लिए खान आया तो चौधरी घर में छिप गया। खान ने पर्दे को उठाकर बाहर फेंक दिया। पर्दे को गिरते देखकर चौधरी बेहोश होकर गिर पड़े। घर की औरतें सिकुड़ सी गयीं। उन औरतों के वस्त्र का काम वह पर्दा ही करता था। उस घर की इस हालत को देखकर खान चुप-चाप वहाँ से चला गया।

प्रश्न ७— प्रायश्चित्त नामक कहानी का सारांश लिखिये, तथा उसका उद्देश्य बताइये।

उत्तर— भगवतीचरण वर्मा द्वारा लिखित प्रायश्चित कहानी एक महत्त्वपूर्ण कहानी है। इस कहानी का उद्देश्य समाज में व्याप्त अन्धविश्वास पर व्यंग्य करना है। अल्पज्ञ तथा मक्कार लोगों से सावधान रहने की आवश्यकता है, इस बात पर इस कहानी में बल दिया गया हैं। अल्पज्ञ तथा लोलुप पुरोहित सामान्य जानता को गुमराह करके अपने स्वार्थ की सिद्धि किया करते हैं, इस बात को लेखक ने बड़े ही प्रभावपूर्ण ढंग से उपस्थित किया है।

कहानी का सारांश— कहानी को प्रारम्भ करते हुए लेखक कहते हैं कि कबरी बिल्ली रामू की बहू से प्रेम करती थी और रामू की बहू कबरी से बहुत घृणा करती थी। रामू की बहू की उम्र चौदह वर्ष की थी। वह अपने पति तथा सासु को प्यारी और दुलारी थी। ससुराल आते ही वह घर की मालकिन बन गयी। वह नौकरों पर हुक्म चलाती थी। किन्तु घर को सम्भालन। आसान काम नहीं था। कभी भण्डार-घर खुला छोड़ देती थी तो कभी बैठे-बैठे सो जाती थी। इतने में अवसर पाकर कबरी कभी दूध पी जाती थी तो कभी रामू की रबड़ी ही खा

जाती थी। इस तरह बहू को प्रतिदिन रामू की उलाहना सुननी पड़ती थी। एक दिन बहू ने रामू कें लिए अच्छी खीर बनायी और उसे कटोरें में सजाकर इतने ऊँचे रखा कि जहाँ कबरी पहुँच न सके। बहू सासुजी को पान देने के लिए चली गयी। इतने में कबरी ने अवसर पाया और खीर के कटोरें पर छलांग लगाया। पंजा का स्पर्श होते ही कटोरा फर्श पर गिर कर चूर-चूर हो गया। खीर फर्श पर फैल गयी। यह देखकर बहू ने बिल्ली को मारने का पक्का इरादा बनाया। उसने दूध का कटोरा ऐसी जगह रखा कि कबरी उसे आसानी से पा ले और स्वयं हाथ में पटाखा लेकर कबरी के ताक में बैठ गयी। कबरी आयी और दूध पीने लगी। बहू ने मौका देखकर कबरी पर पटाखा चला दिया। पटाखा लगते ही कबरी गिरकर बेहोश हो गयी।

घर के सब लोग पटाखे की आवाज सुनकर वहाँ दौड़ आये, और सबों ने समझा बिल्ली मर गयी। सब लोग कहने लगे कि बहू ने तो बहुत बड़ा पाप कर दिया। अन्त में पास-पड़ोस की औरतों ने मिलकर पंडित परम सुख राम के यहाँ यह खबर भेज दिया। खबर सुनकर पंडित जी ने पत्नी से कहा– घासीराम की बहू ने बिल्ली मार दी है; उसका वहाँ प्रायश्चित होगा। पकवान खाने को मिलेंगे। मेरा भोजन मत बनाना।

पंडित जी पोथी-पत्रा लेकर घासीराम कें घर पहुँचे। इधर-उधर उलटकर बतलाया कि बिल्ली की हत्या ब्रह्ममुहुर्त में हुयी है, अतएव बिल्ली को बराबर सोने की बिल्ली बनाकर दान करना चाहिए। किन्तु इतना न करके आप इक्कीस तोले सोने की बिल्ली बनवाकर बहू के हाथ से दान करवा दीजिये और पूजा-पाठ, ब्राह्मण भोजन करवाइये। अन्त में ग्यारह तोले सोने की बिल्ली-बनवाकर दान करवाने की बात तय हुई। पंडित जी ने कहा– मैं ही दोनों शाम भोजन कर लिया करूँगा। अन्य ब्राह्मण को बुलाने की कोई आवश्यकता नहीं।

इतने में दौड़कर महरिन आयी और उसने पंडित जी कें सामने ही बतलाया कि माँ जी बिल्ली तो उठकर भाग गयी। यह सुनते ही पंडित जी की आशा पर पानी फिर गया। वे अपना पोथी पत्रा समेटकर अपने घर चले गये।

विशेष– इस कहानी की कथावस्तु अत्यन्त आकर्षक है। इसका आकार इतना छोटा है कि एक ही बार बैठकर इसको आसानी से पढ़ा जा सकता है। इसकी शैली इतनी प्रभावपूर्ण है कि कहीं भी पाठक को उबन नहीं होती। इसमें समाज में व्याप्त अन्धविश्वास पर कुठाराघात किया गया है।

प्रश्न ८— पूर्ति शीर्षक कहानी का सारांश लिखिए।

उत्तर— इस कहानी के लेखक द्विजेन्द्र नाथ मिश्र 'निर्गुण' हैं। जिस समय भारत गुलामी की जंजीर में जकड़ा था, उस समय स्वतन्त्रता के पुजारी देश-भक्तों ने असहयोग आन्दोलन छेड़ दिया। जिस समय शहर में जुलूस आ रहा था उस समय शहर 'अली बन्धुओं के माता की जय' के नारे से गूंज गया। इस नारे को दो बालकों ने भी सुना और उन दोनों ने सोचा कि इसी तरह हमारी माता की भी जय बोली जाय। वे दोनों भी कांग्रेस के जुलूस में शामिल हो गये और शहीद हो गये। उनकी भी माता के जय के नारे से एक बार शहर गूंज गया।

कहानी का प्रारम्भ करते हुए 'निर्गुण' जी ने बतलाया है कि पति की मृत्यु होते ही विधवा माता के दोनों बच्चे अनाथ हो गये। वे न तो पढ़ते-लिखते थे और न तो उनमें कोई गुण ही था। वे आवारा हो गये। वे बच्चों को पीटते थे, झगड़ा करते थे। इससे सारा मोहल्ला परेशान था। माँ भी परेशान होती थी। किसी तरह विधवा माता को सेक्रेटरी साहब के घर भोजन बनाने का काम मिल गया। चार रुपये मिलता था। बच्चे भी सेक्रेटरी साहब के यहाँ ही काम करने लगे। वे अब कुछ सभ्य होने लगे थे।

उस समय असहयोग आन्दोलन का प्रारम्भिक काल था। लोगों को सम्बोधित करने के लिए अली बन्धुओं की माँ शहर में आ रही थीं। सारा शहरा माता की जय के नारे से गूँज उठा। ये दोनों भाई भी उस सभा में सम्मिलित हुए। अली बन्धुओं की माता ने बतलाया— हमारा झण्डा कभी झुकना नहीं चाहिए। झण्डा ही हमारी शान है। अब हम गुलाम नहीं रहेंगे। इस तरह सभा दस बजे रात में समाप्त हुई तो देर रात गये दोनों बच्चे घर आये। माँ बहुत नाराज हुयी; किन्तु जब बच्चों ने बतलाया कि वकील साहब ने अली बन्धुओं की माता का पैर छू लिया तो माँ ने कहा कि एक वे बच्चे हैं। इस तरह सबों के बच्चे हों।

बच्चों ने कहा कि माँ अली बन्धुओं की माँ ने कहा है कि नौकरी करना गुलामी है, क्या हम लोग नौकरी छोड़ दें। माँ ने कहा; सबों के तो दूसरे अवलम्ब हैं। नौकरी छोड़ दोगे तो गुजारा कैसे होगा ?

दूसरे दिन पता चला कि महात्मा गाँधी गिरफ्तार हो गये। शहर में चारो ओर सभी तरफ हड़ताल का प्रचार होने लगा। बड़े भाई ने छोटे भाई से कहा कि कल हमलोग भी सभा में सम्मिलित होंगे। काँग्रेस का काम करेंगे। सब लोग हमारी भी माँ की जय जयकार मनायेंगे।

प्रातः काल जबर्दस्त हड़ताल हुई। हिन्दू मुसलमान सबों ने हड़ताल में भाग लिया। सभी अंग्रेज अफसर घबरा गये। ऊपर से कड़ा आदेश था कि सभा न हो, किन्तु अपने समय पर जुलूस निकला। दोनों भाई उस जुलूस में शामिल थे। बड़ा भाई झंडा लेकर आगे-आगे चल रहा था। छोटा भी झंडा लेकर चलना चाहता था; किन्तु बड़े भाई ने कहा— तुम छोटे हो, झंडा मुझे लेकर चलने दो। जुलूस सभा स्थल के सन्निकट पहुँच गया। सिपाहियों ने पीछे हटने का आदेश दिया, किन्तु भीड़ पीछे नहीं हटी। कलक्टर और एस० पी० ने मिलकर पहले लाठीचार्ज कराया और बाद में गोली चार्ज करवाया। बड़े भाई को लाठी लगी, उसका सिर फट गया, छोटे को गोली लगी; दोनों भाई शहीद हो गये; किन्तु उनके हाथ का झण्डा ज्यों का त्यों लहरा रहा था। वह झुका नहीं।

बच्चों की माँ हताश बैठी थी। अमर शहीद बच्चों की फूल मालाओं से लदी हुई अर्थी जा रही थी। असंख्य नर-नारी अम्मा की जय-जयकार मना रहे थे। माँ ने मन ही मन कहा-माँ की जय। उसने आँचल का फूल अंजली में लेकर बिखेर दिया।

विशेष— इस कहानी में देशभक्ति की भावना को जागृत किया गया है। इसमें कथोपकथन कथावस्तु आदि कहानी के सभी तत्त्व विद्यमान हैं।

प्रश्न ९— शरणागत शीर्षक कहानी का सारांश लिखिये।

उत्तर— शरणागत शीर्षक कहानी के लेखक श्री वृन्दावनलाल वर्मा हैं। इस कहानी में लेखक ने शरणागत की रक्षा पर विशेष बल दिया है।

ललितपुर का कसाई अपना रोजगार करके अपने गाँव लौट रहा था। उसके साथ उसकी पत्नी थी। वह बिमार हो गयी थी। उसके पास दो तीन सौ रुपये थे। गाँव दूर था। बीच में बीहड़ पड़ता था। अतएव बीच में कहीं विश्राम करना आवश्यक था। रज्जब ने मढेपुर गाँव में रात बिताने का निश्चय किया। उस गाँव में उसके कई परिचित थे; किन्तु रज्जब की खोट कमाई के पैसे के कारण किसी ने उसको रहने का शरण नहीं दिया।

उस गाँव में एक गरीब ठाकुर का घर था। लोग उसके घर को 'गढ़ी' कहते थे और ठाकुर को राजा कहते थे। चारो ओर से निराश होकर रज्जब ठाकुर के दरवाजे पर आया और रातभर रहने के लिए आश्रय माँगा। किन्तु ठाकुर ने पूछकर जब यह जाना कि वह कसाई है, तो क्रुद्ध होकर उन्होंने पूछा— तुम्हारी यहाँ आने की हिम्मत कैसे हुई ? रज्जब ने कहा यह राजा का घर है, यहाँ शरण

पाने के लिए आया हूँ। ठाकुर को दया आ गयी। कसाई को रात भर रहने की जगह उन्होंने दे दी। रज्जब ने रात्रि में वहाँ विश्राम किया।

ठाकुर लुटेरों का सरदार था। जब रात्रि में रज्जब वहाँ विश्राम कर रहा था तो कुछ डकैत आये। उन सबों ने ने ठाकुर से कहा कि आज तो हम खाली हाथ लौट आये हैं, कल का सगुन ठीक रहेगा। एक कसाई इधर आया है। कहीं खिसक गया है। उसके पास बहुत पैसे थे। ठाकुर ने बाहर आकर यह कहकर टाल दिया कि हम कसाई का पैसा नहीं छूते हैं।

दूसरे दिन ठाकुर ने सबेरे ही कसाई को वहाँ से चले जाने के लिए कहा; किन्तु उसकी पत्नी बीमार थी। वह जाना नहीं चाहता था। किन्तु अपयश के भय से ठाकुर ने उसे जल्दी वहाँ से चले जाने के लिए डाँटकर कहा। कसाई अपनी पत्नी के साथ एक पेड़ के नीचे कुछ देर तक विश्राम किया। फिर उसने एक चमार की गाड़ी ठीक की। चमार ने अधिक पैसा माँगा तो वह भी दे दिया। किन्तु उस समय उसकी पत्नी को तेज बुखार था। वह ज्वर से थर-थर काँप रही थी। कुछ देर रुककर जब वह चला तो बीच में ही शाम हो गयी। चमार ने कहा— आज कहीं पेड़ के नीचे विश्राम करूँगा और कल सबेरे ललितपुर पहुँचूँगा।

पहले तो रज्जब बतलाना नहीं चाहता था, किन्तु गाड़ीवान की मनःस्थिति देखकर उसने डाँटकर कहा-तुम मुझे जानते नहीं हो, मैं रज्जब कसाई हूँ। यदि जल्दी नहीं चलोगे तो इसी छूरी से काट कर तुम्हें कहीं फैंक दूँगा। गाड़ीवान डर गया था। वह धीरे-धीरे गाड़ी चला जा रहा था। रात हो गयी थी। अचानक बैल रुक गये। सामने कुछ लोग लाठी लिए खड़े थे। उन सबों ने डाँटकर कहा खबरदार जो आगे बढ़ा।

रज्जब ने कहा— बाबूजी मैं गरीब कसाई हूँ। मेरी पत्नी बीमार है। ललितपुर अपने गाँव जा रहा हूँ। ठाकुर ने उसे पहचान लिया। उन्होंने अपने साथियों से कहा— जाने दो कसाई है। इसका पैसा हम नहीं लेंगे।

एक ने उसको मारने की सलाह दी तो ठाकुर ने कहा— यह मेरे यहाँ शरणागत रह चुका है। खबरदार यदि किसी ने इसे हाथ लगाया तो।

□

रस, छन्द, अलंकार

प्रश्न १— रस निष्पत्ति का प्रकार बतलाइये ?

स्थायी भाव के साथ विभाव, अनुभाव और व्यभिचारी भावों का संयोग होने से रस की निष्पत्ति होती हैं। 'रस' ही काव्य की आत्मा है। आचार्य विश्वनाथ कहते हैं—

विभावेनानुभावेन व्यक्तः संचारिणा तथा।
रसतामेति रत्यादिः स्थायिभावः सचेतसाम्

इस कारिका से स्पष्ट है कि सहृदयों के हृदय में स्थित स्थायी भांव ही रस के रूप में अभिव्यक्त होता हैं।

प्रश्न २— रस कितने प्रकार के होते हैं ?

रस नव प्रकार के होते हैं। १. शृंगार, २. हास्य, ३. वीर, ४. रौद्र, ५. भयानक, ६. वीभत्स, ७. करुण, ८. अद्भुत और, ९. शान्त रस।

कुछ विद्वान् वात्सल्य को भी दसवें रस की संज्ञा देते हैं।

प्रश्न ३— स्थायी भाव किसे कहते हैं ?

उत्तर- स्थायी भाव उस भाव को कहते हैं, जो न तो किसी अनुकूल भाव से तिरोहित होता है और न तो किसी प्रतिकूल भाव से अभिभूत होता है। यह अपने आश्रय में आदि से अन्त तक बना रहता है। उसी की रस के रूप में परिणति होती है।

प्रश्न ४— स्थायी भाव के कितने भेद होते हैं ?

उत्तर— स्थायी भाव के नौ भेद होते हैं- रति, हास, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, जुगुत्सा, विस्मय और शम।

प्रश्न ५— विभाव किसे कहते हैं ?

उत्तर— लोक में मानव के अन्तःकरण में सुषुप्त रति आदि स्थायी भांव को जागृत करने वाले जो कारण हैं काव्य तथा नाट्य में उसे 'विभाव' कहते हैं। वह दो प्रकार का होता है। १. आलम्बन विभाव, और २. उद्दीपन विभाव। जिस वस्तु या व्यक्ति को देखकर मन में स्थायी भाव जागृत हो उसे आलम्बन विभाव कहते हैं। जो कारण अन्तःकरण के स्थायी भावों को जागृत करे या उत्तेजित करे वह उद्दीपन विभाव कहलाता है, काव्य के नायक-नायिका आदि आलम्बन विभाव हैं। तथा उद्यान आदि उद्दीपन विभाव हैं।

प्रश्न ६— अनुभाव किसे कहते हैं?

उत्तर— विभिन्न कारणों से हृदय में जगने वाले रति आदि भावों को बाहर से प्रकाशित करने वाला चुम्बनादि व्यापारों का नाम अनुभाव है। लोकजीवन में तो वे व्यापार रति आदि के कार्य स्वरूप होते हैं, किन्तु काव्य तथा नाट्य में वे अनुभाव कहलाते हैं।

प्रश्न ७— संचारी भाव किसे कहते हैं?

उत्तर— जो भाव कुछ देर के लिए हृदय में उत्पन्न हो कर स्थायी भाव की पुष्टि करके समाप्त हो जाय या रह-रहकर याद आये उसे ही संचारी भाव कहते हैं।

प्रश्न ८— शृंगार रस के लक्षण तथा भेद बतलाइये।

शृंगार रस— शृंगार रस के दो भेद होते हैं १. संयोग या सम्भोग शृंगार,

और २. वियोग या विप्रलम्भ शृंगार।

१. संयोग या सम्भोग शृंगार— इसका स्थायी भाव-रति होती है। इसका आलम्बन विभाव- नायक या नायिका होती हैं। इसके उद्दीपन विभाव-नायक नायिका की चेष्टायें, उपवन, नदी तट, चाँदनी रात, एकान्त स्थल आदि होते हैं। इस रस के अनुभाव-चुम्बन, कम्पन, प्यासे नेत्रों से देखना आदि होते हैं तथा संचारी भाव,-उत्सुकता, प्रसन्नता आदि होते हैं।

हौं मिसहा सोयो समुझि मुख चूम्यो ढिंग जाय
हस्यो, खिसानी, गर गह्यो, रही गले लपटाय।

२. वियोग या विप्रलम्भ शृंगार— इसके स्थायी भाव-रति, आलम्बन विभाव प्रेमी-प्रेमिका, नायक-नायिका, सखा आदि तथा उद्दीपन विभाव स्थान विशेष, गाँव, गली, उपवन, तथा चित्र आदि होते हैं। इस शृंगार के अनुभाव-अश्रुपात, खिन्नता आदि तथा संचारी भाव- स्मृति या स्थान विशेष, होते हैं।

उदाहरण—

कत बिन वासर बसन्त जागे अन्तक में,
तीर ऐसे विविध समीर लागे लहकन।
सान धरे सार से चन्दन घनसार लगे,
खेद लागे खरे मृगमद लागे महकन।
फांसी से फूले लागे-गासी से गुलाब अस,
गाज अरगजा लागे, चोबा लागे चहकन।
अंग-अंग आगि ऐसे केसरि के चीर लागे।
चीर लागे जरन अंबरि लागे दहकन।

प्रश्न ९— हास्य रस का सोदाहरण निरूपण कीजिए।

३. हास्य रस— इस रस का स्थायी भव-हास, आलम्बन विभाव व्यक्ति की विचित्र चेष्टायें, बौना, कुबड़ा आदि के हाव-भाव, मुँह बनाना आदि, तथा उद्दीपन विभाव-विचित्र वेश-भूषा, हास्यस्पद चेष्टायें आदि होती हैं। इस रस के अनुभाव-अंगों का स्फुटित होना, व्यंग्यात्मक वाक्य आदि, तथा संचारीभाव-रोमांच, कम्पन, हर्ष, एवं चंचलता आदि होते हैं।

उदाहरण—

जुते का औ सर का सम्बन्ध पुराना है।
सबने इसे देखा है सबने इसे जाना है।
रूठा हुआ दुल्हा गर जूता दो इक पायेगा।
सिकड़ी के बिना ही खिचड़ी चुपचाप वो खायेगा।

प्रश्न १०— वीर रस का सोदाहरण निरूपण कीजिए

४. वीर रस— इस रस का स्थायीभाव- उत्साह, आलम्बन विभाव- शत्रु

आदि, तथा उद्दीपनविभाव- शत्रु के कार्य, युद्ध भूमि में रणभेरी को ध्वनि आदि होते हैं। इस रस के अनुभाव-वीरतापूर्ण कथन, ओजस्वी भाषण, हाथ चलाना आदि, और संचारी भाव-गर्व, धृति आवेग, हर्ष, एवं स्मृति आदि होते हैं।

उदाहरण—

हिमाद्रि तुंग शृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती
स्वयं प्रभा समुज्ज्वला स्वतन्त्रता पुकारती
अराति सैन्य सिन्धु में सुवाडवाग्नि से जलो
प्रवीर हो जयी बनो बढ़े चलो; बढ़े चलो।।

प्रश्न ११— रौद्र रस का सोदाहरण निरूपण कीजिए।

५. रौद्र रस— इस रस के स्थायी भाव- क्रोध, आलम्बन विभाव- अपमानजनित वाक्य, अशिष्टता करने वाला व्यक्ति, तथा उद्दीपन विभाव- अशिष्ट व्यक्तियों के कार्य होते हैं। इस रस के अनुभाव- मुख एवं नेत्र का लाल होना, होंठ चबाना, गर्जना, अस्त्रों को उठाना आदि है।

उदाहरण—

माखे लखन कुटिल भई भौहें।
रदपुट फरकत नयन रिसौहें।।

प्रश्न १२— भयानक रस का सोदाहरण निरूपण कीजिए।

६. भयानक रस— इस रस के स्थायी भाव-भय, आलम्बन विभाव- सर्प, सिंह, डाकू, शत्रु, आदि, तथा उद्दीपन विभाव- भयानक जन्तु आदि होते हैं। इस रस के अनुभाव-चीख, पुकार, हृदय की धड़कन का तीव्र होना, मूर्छित होना आदि, तथा संचारी भाव-त्रास, शंका, चिन्ता आदि होते हैं।

उदाहरण-

समस्त सर्पों संग श्याम जो कढ़े
कलिन्द की नन्दिनी के सुअंक से
खड़े किनारे जितने मनुष्य थे
सभी महाशंकित भीत होके उठे।

प्रश्न १३— वीभत्स रस का सोदाहरण निरूपण कीजिए।

७-वीभत्स रस— इस रस के स्थायी भाव-जुगुप्सा या घृणा, आलम्बन विभाव- घृणित व्यक्ति या दृश्य, तथा उद्दीपन विभाव- कुरूपता, दुर्गन्ध, गन्दगी, कीड़े-मकोड़े, नाक मुँह सिकोड़ना, चर्बी दिखायी देना उस पर गिद्ध का चोंच चलाना आदि होते हैं। इस रस के संचारीभाव- विषाद, त्रास, ग्लानि, मूर्छा अपस्मार आदि होते हैं।

उदाहरण—

विविध रंग की उठती ज्वाला दुर्गन्ध महकति।
कहू चरबी सी चटचटाती, कहू दह दह दहकति।
कहू शृंगाल कोउ मृतक अंग पर घात लगावत।
कहू कोउ शव पर बैठि गिद्ध पर चोंच चलावत।

प्रश्न १४— करुण रस का सोदाहरण निरूपण कीजिए।

८. **करुण रस**— इस रस के स्थायी भाव-शोक, आलम्बन विभाव- पति आदि या व्यक्ति विशेष का विनष्ट होना, उद्दीपनविभाव-विनष्ट वस्तु या व्यक्ति का चित्र, वस्त्र, सम्पर्क आदि का दृष्टिगोचर होना होता है। इस रस के अनुभाव-रोना, विलाप करना, छाती या माथा पीटना आदि तथा संचारीभाव-उन्माद या जड़ता, चिन्ता, आवेग आदि होते हैं।

उदाहरण—

प्रिय वह मेरा प्राण प्यारा कहाँ है?
दुःख जलनिधि डूबी का सहारा कहाँ है?
लख मुख जिसका है आज लौ जी सकी हूँ
वह हृदय हमारा नयन तारा कहाँ है?

प्रश्न १५— अद्भुत रस का सोदाहरण निरूपण कीजिए।

अद्भुत रस— इस रस के स्थायी भाव-विस्मय, आलम्बन विभाव-अलौकिक या आश्चर्य युक्त वस्तु, तथा उद्दीपन विभाव-आश्चर्ययुक्त वस्तुओं के दर्शन या श्रवण होते हैं। इस रस के अनुभाव- होंठ चबाना, दाँतों तले अंगुलि दबाना, तथा विस्फारित नेत्रों से देखना आदि, तथा संचारी भाव- जड़ता, वितर्क आदि होते हैं।

उदाहरण—

जौं तुम्हार अनुशासन पावौं। कन्दुक इव ब्रह्माण्ड उठावौ।।
काचे घट जिमि डारौं फोरी। सकौं मेरु मूलक इव तोरी।।

प्रश्न १६— शान्त रस का सोदाहरण निरूपण कीजिए।

शान्त रस— स्थायी भाव-निर्वेद, शम, आलम्बन विभाव-सांसारिक नश्वरता का ज्ञान, या ईश्वरीय ज्ञान उद्दीपन विभाव-सत्संग, धार्मिक या दार्शनिक ग्रन्थों का अध्ययन तथा अनुभाव-पुलकित होना, अश्रुपात, सांसारिक भीरुता आदि होते हैं। इस रस के संचारी भाव- स्मृति, धृति, निर्वेद, आदि होते हैं।

उदाहरण—

मन पछितैहें अवसर बीते।
दुर्लभ देह पाइ पद भजु प्रभु, करम वचन अरु ही ते।

प्रश्न १७— वात्सल्य रस का सोदाहरण निरूपण कीजिए।

वात्सल्य रस— इस रस के स्थायीभाव-वात्सल्य, आलम्बनविभाव-शिशु आदि, उद्दीपनविभाव-शिशु का सौन्दर्य, उसकी चेष्टायें आदि, तथा अनुभाव- रोमांच, चुम्बन, गोद लेना आदि, एवं संचारी भाव-मोह, चपलता. हर्ष, उत्कण्ठा आदि होते हैं।

उदाहरण—

किलकत कान्ह घुटुरुअन आवत।
मनिमय कनक नन्द के आँगन, बिंब पकरिबै धावत।

प्रश्न १८— छन्द को परिभाषित कीजिए।

उत्तर— छन्द की परिभाषा— छन्द उस रचना को कहा जाता है जिसमें वर्ण, मात्रा, पद, यति और तुक आदि का ध्यान रखकर रचना की जाती है। छन्द, रचना विधान को (नियम) में बाँधता है।

प्रश्न १९— छन्द के अंग का निरूप०. कीजिए।

छन्द के अंग— वर्ण, मात्रा, पाद, यति और तुक,। ये छन्द के अंग हैं।

वर्ण— वर्ण (अक्षरों) को कहते हैं। इनकी संख्या छप्पन के लगभग होती है। ये दो प्रकार के होते हैं- स्वर वर्ण एवं व्यंजन वर्ण। स्वर वर्ण भी दो तरह के होते हैं, ह्रस्व स्वर एवं दीर्घ स्वर। जिन स्वरों के उच्चारण में कम समय लगता है वे ह्रस्व स्वर होते हैं। जैसे- अ, उ आदि। जिन स्वरों के उच्चारण में देर लगती है वे दीर्घ स्वर होते हैं जैसे- आ, ई, ऊ आदि।

मात्रा— लघु वर्ण की एक मात्रा और दीर्घ वर्ण की दो मात्रा मानी जाती है।

पाद— प्रत्येक छन्द में कम से कम चार पाद होते हैं उन्हें चरण भी कहते हैं। छप्पय छन्द में छह चरण होते हैं।

यति— छन्द पाठ के समय पाठकर्ता जहाँ पर कुछ देर के लिए रुकता है, उसे यति कहते हैं।

तुक— छन्द के अन्तिम भाग में पायी जाने वाली ध्वनि की समानता को तुक कहते हैं।

प्रश्न २०— छन्द शास्त्र के आठ गणों तथा गुरु लघु का निरूपण कीजिए।

उत्तर— छन्द शास्त्र में आठ गण होते हैं। इनमें प्रत्येक गण में तीन वर्ण होते हैं। इसका सूत्र है—

यमाताराजभानसलगा

इस सूत्र में यगण, मगण, तगण, रगण, जगण, भगण, नगण, एवं सगण गुरु एवं लघु का निर्देश हैं।

इन गणों का रूप इस प्रकार है।

१. यगण=यमाता = । ऽ ऽ सजाना

२. मगण=मातारा =ऽ ऽ ऽ बाबा जी
३. तगण=ताराज=ऽ ऽ । आकाश
४. रगण=रा ज भा=ऽ । ऽ आरती
५. जगण=ज भा न=। ऽ । जहाज
६. भगण=भा न स=ऽ । । भारत
७. नगण=नसल=। । । नगर
८. सगण=सलगा । । ऽ ललना

प्रश्न २१— छन्दों के मुख्य भेदों का निरूपण कीजिए।

छन्दों के भेद— छन्दों के मुख्य रूप से दो भेद होते हैं। वार्णिक छन्द एवं मात्रिक छन्द।

वार्णिक छन्द— जिस छन्द में वर्णोंकी गणना होती है उसे वार्णिक छन्द कहते हैं। उस छन्द में मात्राओं का कोई महत्त्व नहीं होता। उस छन्द में वर्णों की संख्या और गणों का महत्त्व होता है।

मात्रिक छन्द— जिस छन्द में केवल मात्राओं की गणना होती है उसे मात्रिक छन्द कहते हैं।

प्रश्न २२— प्रधान-मात्रिक छन्दों का निरूपण कीजिए।

मात्रिक छन्द— मात्रिक छन्द में चौपाई, सोरठा, दोहा, शिखरिणी मन्दाक्रान्ता आदि आते हैं।

प्रश्न २३— चौपाई का निरूपण कीजिए।

चोपाई— चौपाई में चार चरण होते हैं। प्रत्येक ऊर्धाली में १६ मात्रायें होती हैं और अन्त के अक्षर या तो दो गुरु होते हैं अथवा दो लघु हो सकते हैं।

उदाहरण—

दीन दयाल विरद सम्भारी
ऽ । । ऽ । । । । । ऽ ऽ
हरहू नाथ मम संकट भारी
। । । ऽ । । । ऽ । । ऽ ऽ

प्रश्न २४— रोला छन्द का निरूपण कीजिए।

रोला— रोला छन्द के प्रत्येक चरण में २४ मात्रायें होती हैं। इस छन्द में चार चरण होते हैं। ११वीं एवं १३वीं मात्रा पर यति होती है।

उदाहरण—

नव उज्ज्वल जलधार; हार हीरक सौ सोहत।
विच-विच छहरति बूंद, मध्य मुक्तामनि पोहति।।

प्रश्न २५— हरिगीतिका छन्द का निरूपण कीजिए।

हरिगीतिका— इस छन्द में चार चरण होते हैं। प्रत्येक चरण में २८ मात्रायें

होती हैं। १६ एवं १२ मात्राओं के बाद यति तथा अन्त में लघु अथवा गुरु होता है।

उदाहरण—

मैं सत्य कहता हूँ सखे! सुकुमार मत जानो मुझे।
यमराज से भी युद्ध में प्रस्तुत सदा मानों मुझे।।
है और की तो बात ही क्या गर्व मैं करता नहीं।
मामा तथा निज तात से भी समर में डरता नहीं।

प्रश्न २६— बरवै छन्द का सोदाहरण निरूपण कीजिए।

बरवै— बरवै छन्द में चार चरण होते हैं। प्रथम तथा तृतीय चरण में १२-१२ मात्राएँ होती हैं। द्वितीय एवं चतुर्थ चरण में ७-७ मात्राएँ तथा चरण के अन्त में लघु वर्ण होता है।

उदाहरण—

अवधि शिला का उर पर, था गुरु भार।
तिल तिल काट रही थी दृग जल धार।।

प्रश्न २७— दोहा का सोदाहरण निरूपण कीजिए।

दोहा— दोहा के अन्तर्गत चार चरण होते हैं। प्रथम व तृतीय चरण में १३-१३ मात्राएँ और द्वितीय एवं चतुर्थ चरण में ११-११ मात्राएँ होती हैं। चरण के अन्त में लघु वर्ण होता है।

उदाहरण—

मेरी भव बाधा हरौ, राधा नागरि सोइ।
जा तन की झाईं परे, श्याम हरित दुति होइ।।

प्रश्न २८— सोरठा का सोदाहरण निरूपण कीजिये।

सोरठा— सोरठा छन्द में चार चरण होते हैं। यह दोहा छन्द के बिलकुल उलटा होता है। प्रथम तथा तृतीय चरण में ११-११ मात्राएँ एवं द्वितीय एवं चतुर्थ चरण में १३-१३ मात्राएँ होती हैं।

उदाहरण—

मूक होइ वाचाल पंगु, चढ़ै गिरिवर गहन।
जासु कृपा सुदयाल, द्रवहु सकल कलिमल दहन।।

प्रश्न २९— कुण्डलिया छन्द का निरूपण कीजिए।

कुण्डलिया— कुण्डलिया के अन्तर्गत छः चरण होते हैं। पहले दो चरण दोहा छन्द के और चार चरण रोला का होता है। प्रत्येक चरण २४ मात्राओं के होत हैं। पहले दो चरण में १३-११ तथा तृतीय एवं चतुर्थ चरणों में ११-१३ मात्राएँ होती हैं। इस छन्द की विशेषता यह है कि जिस शब्द से इसका आरम्भ होता है उसी शब्द से अन्त भी होता है।

उदहारण—

नाहीं भली गुलाब तू, मुनि मधुकर गुञ्जार।
यह दिन चार बहार की बहुरि कटीली तार।।
बहुरि कटीली तार, हों पगी श्रीराम आये।
लुवै चलैंगी संग, अंग सब जैंहैं लाये।
बरनै दीन दयालु फूल लों जौतो पाही।
रहे घेरि चहू अलि ऐसे नाहीं।

प्रश्न ३०— इन्द्रवज्रा छन्द का निरूपण कीजिए।

इन्द्र वज्रा— इन्द्र वज्रा छन्द के चार चरण होते हैं। प्रत्येक चरण में दो तगण, एक जगण और अन्त में दो गुरू होते हैं। इस छन्द के प्रत्येक चरण में ग्यारह होते हैं।

उदाहरण—

मैं राज्य की चाह नहीं करूँगा
है जो तुम्हें इष्ट वही करूँगा
सन्तान जो सत्यवती जानेगी
राज्याधिकारी वह ही बनेगा
S S । S S । । S । S S

प्रश्न— उपेन्द्रवज्रा छन्द के उदाहरण और लक्षण लिखिए।

उपेन्द्रवज्रा— इस छन्द के चार चरण होते हैं। प्रत्येक चरण में क्रमशः जगण, तगण, जगण, तथा अन्त में दो गुरू होते हैं। प्रत्येक चरण में ११ वर्ण होते हैं।

उदाहरण—

पखारते हैं पद पद्म कोई
चढ़ा रहे हैं फल पुष्प-कोई
करा रहे हैं पय पान कोई
उतारते श्रीधर आरती हैं।
। S । S S ।। S । S S

प्रश्न ३२— बसन्ततिलका छन्द का सोदाहरण निरूपण कीजिए।

बसन्ततिलिका— इस छन्द में चार चरण होते हैं तथा प्रत्येक चरण में १४ वर्ण होते हैं। ज्ञेया वसन्ततिलका तभजा जगौ गः। यह बसन्ततिलका छन्द का लक्षण है। वर्णों का क्रम तगण, भगण, जगण, जगण और दो गुरु युक्त होता है।

उदाहरण—

न्यारी छटा निरखना दृग चाहते हैं
है कान को प्रिय सुयश भी श्याम ही का

गा के सदा सगुण है रसना अघाती
सर्वत्र रोम तक में हरि ही रमा है।

प्रश्न ३३— मदाक्रान्ता छन्द का सोदाहरण निरूपण कीजिए।

मन्दाक्रान्ता— इस छन्द के सत्रह वर्णों से युक्त प्रत्येक चरण में क्रमशः मगण, भगण, नगण, तगण, तगण, तथा दो गुरु होते हैं।

उदाहरण।—

तारे डूबे रात ढल गया, छा गई व्योम लाली।
पंक्षी बोले तमचुर जगे, ज्योति फैली दिशा में।
शाखा डोली सफल तरु की कुञ्ज फूले सरों में
धीरे-धीरे दिनकर कढ़े तामसी रात बीती।।

प्रश्न ३४— मत्तगयन्द सवैया का सोदाहरण निरूपण कीजिए।

मत्तगयन्द-सवैया— चार चरण वाले इस सवैया छ्न्द के प्रत्येक पाद में २३ वर्ण होते हैं। प्रत्येक पाद में सात भगण तथा दो गुरु वर्ण होते हैं।

उदाहरण—

सेस महेश दिनेश गनेश सुरेसहु जाहि निरन्तर गावें।
जाहिं अनादि अनन्त अखण्ड अछेद अभेद सुवेद बतावें।
नारद से सुक व्यास रटैं पचि हारे तऊ पुनि पार न पावें।
ताहि अहीर की छोहरिया छछिया भरि छाछ पै नाच नचावैं।।

प्रश्न ३५— सवैया छन्द का सोदाहरण निरूपण कीजिए।

सवैया— चार चरण वाले इस सवैया छन्द के प्रत्येक चरण में २५ वर्ण होते हैं। इसके प्रत्येक पाद में आठ सगण एवं अन्तिम वर्ण गुरू होता है।

उदाहरण—

सुख शान्ति रहे सब ओर सदा, अविवेक तथा अध पास न आवै।
गुण शील तथा बल बुद्धि बढ़ै, हर बैर विरोध घटै मिट जावै।
सब उन्नति के पथ पर विचरे-रति पूर्ण परस्पर पुण्य कमावै।
दृढ़ निश्चय और निरापद होकर, निर्भय जीवन में जय पावै।

प्रश्न ३६— कवित्त छन्द का सोदाहरण निरूपण कीजिए।

कवित्त— कवित्त वार्णिक छन्द है। इसके चार चरण होते हैं। प्रत्येक चरण में ३१ वर्ण होते हैं। १६ एवं १५ वर्णों पर यति होती है। चरण का अन्तिम वर्ण गुरु होता है।

उदाहरण-

पात भरी सहरी सुत बारे-बारे,
केवट की जाति कछु वेद न पढाइहौ।
सब परिवार मेरो पाठि लागो राजा जू,

दीन वित्तहीन कैसे दूसरी गढ़ाइहौ।
गौतम की घरनी ज्यों तरनी तरंगी मेरी,
प्रभु से निषाद होइके बात न बढ़ाइहौ
तुलसी के ईस राम रावरे सो साँची कहौ,
बिना पग धोये नाथ नाव न चढ़ाइहौं।

प्रश्न- ३७ अलंकार का लक्षण लिखिये।

उत्तर- अलंकरोतीति अलंकार- यह अलंकार शब्द की व्युत्पत्ति है। किसी भी वस्तु, प्राणी, या काव्य को अलंकृत करने वाले अवयव का नाम अलंकार है। ये मुख्यतः तीन प्रकार के होते हैं।

शब्दालंकार, अर्थालंकार, और उभयालंकार अर्थात् (शब्दार्थालंकार)।

प्रश्न ३८- शब्दालंकार किसे कहते हैं?

उत्तर- जिस काव्य में शब्दों का चमत्कार होता है, वहाँ शब्दालंकार होता है। शब्दालंकार के अन्तर्गत अनुप्रास; यमक और श्लेष आदि अलंकार आते हैं।

प्रश्न ३९- अनुप्रास अलंकार तथा उसके भेदों का निरूपण कीजिए।

अनुप्रास- जिस काव्य में कोई वर्ण या शब्द बार-बार आता है; उस में अनुप्रास अलंकार होता है।

उदाहरण-'तरनि तनूजा तट तमाल तरूवर बहु छाये' इस पंक्ति में 'त' की कई बार आवृत्ति हुई है, अतएव इसमें अनुप्रास अलंकार है।

प्रश्न ४०- शब्दालंकार और अर्थालंकार में भेद बतलाइये।

उत्तर- जब शब्द के दूसरे पर्यायवाची शब्द के प्रयोग कर देने से अलंकार बदल जाय तो वहाँ शब्दालंकार ही होता है, शब्द के बदल देने पर भी अलंकार में कोई परिवर्तन न हो तो अर्थालंकार होता है।

अनुप्रास अलंकार पाँच प्रकार के होते हैं। (१) छेकानुप्रास, (२) वृत्यनुप्रास, (३) अन्त्यानुप्रास, (४) श्रुत्यनुप्रास, और (५) लाटानुप्रास।

१. छेकानुप्रास- कविता में एक या अनेक वर्णों की आवृत्ति जब केवल एक बार होती है तो छेकानुप्रास अलंकार होता है।

२. वृत्यनुप्रास- जब कविता में किसी वर्ण की एक से अधिक बार आवृत्ति होती है तो वहां वृत्यनुप्रास माना जाता है।

उदाहरण-

'चारु चन्द्र की चंचल किरणें खेल रही हैं जल-थल में'।

३. अन्त्यानुप्रास- कविता के चरण के अन्त में जब समान वर्णों की आवृत्ति होती है, तो वहाँ अन्त्यानुप्रास नामक अलंकार होता है।

उदाहरण—

मँगलु भवन अमगल हारी।
द्रवऊ सो दशरथ अजिर विहारी।।

४. श्रुत्यनुप्रास— जब काव्य के किसी चरण मे एक ही उच्चारण स्थान से उच्चारण होने वाले वर्णों की आवृत्ति होती है, तो वहाँ श्रुत्यनुप्रास होता है।

उदाहरण—

कंकन किंकिनि नूपुर धुनि सुनि।
कहत लखन सन राम हृदय गुनि।

लाटानुप्रास— जहाँ पर एक ही शब्द की कई बार आवृत्ति होती है और अर्थ वही बना रहे, परन्तु अन्वय करने पर अर्थ बदल जाय, वहाँ लाटानुप्रास होता है।

उदाहरण—

राम भजन जो करत नर, नहिं भव बन्धन ताहि।
राम भजन जो करत नर, नहिं भव बन्धन ताहि।।

प्रश्न ४१— यमक अलंकार का सोदाहरण निरूपण कीजिए।

यमक अलंकार— जहाँ एक ही शब्द प्रयुक्त होते हैं, किन्तु अर्थ भिन्न-भिन्न होते है, अथवा दोनों में से एक शब्द निरर्थक होता है वहाँ यमक अलंकार होता है।

उदाहरण—

कनक-कनक तै सौ गुनी, मादकता अधिकाय।
या पाये बौराय जग, वा खाये बौराय।।

प्रश्न ४२— उपमा अलंकार के तत्त्वों की विवेचना कीजिए?

उत्तर— उपमा अलंकार के चार तत्त्व मुख्यतः माने जाते हैं। १. उपमेय २. उपमान ३. साधारण धर्म ४. वाचक शब्द।

उपमेय उसे कहते हैं जिससे तुलन की जाती है।

उपमान उसे कहते हैं जिसके साथ तुलना की जाती है।

साधारण धर्म— वह गुण है जो उपमेय व उपमान दोनों में हो।

वाचक— सादृश्य बोधक शब्द को कहते हैं।

उपमा का उदाहरण—

प्रेम अगम, अनुपम, अमित, सागर सरिस बखान।
जो आवत इहि ढिग बहुरि जात नहीं रसखान।।

प्रश्न ४३— निम्नांकित अलंकारों का सोदाहरण निरूपण कीजिए-

(१) रूपक, (२) उत्प्रेक्षा, (३) सन्देह, (४) दृष्टान्त, (५) अनन्वय और, (६) अतिशयोक्ति।

रूपक अलंकार— जहाँ उपमेय ही उपमान के रूप में उपस्थित हो, वहाँ पर रूपक अलंकार होता है।

उदहारण—

चरण कमल बंदौ हरि राई।

उत्प्रेक्षा— जहाँ पर उपमेंय में ही उपमान की सम्भावना की जाय, वहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार होता है।

उदाहरण—

सोहत ओढ़े पीत पट, श्याम सलोने गात।
मनौ नील मणि सैल पर, आतप पर्‍यौ प्रभात।।

सन्देह— जब किसी वस्तु में समानता के कारण किसी अन्य वस्तु की सम्भावना जान पड़े, किन्तु विचारों में दृढ़ता न हो तो वहाँ सन्देह अलंकार माना जाता है।

उदाहरण—

विकच जलज कैंधो मधुर, कैंधो मंजु मयंक।
कैंधो हरि के चारु यह, मुख कोमल निकलंक।।

कृष्ण के मुख को देखकर कमल, चन्द्र और कृष्ण के मुख की सम्भावना की गयी है किन्तु किसी भी पक्ष में निश्चितता नहीं है, अतः सन्देह अलंकार है।

दृष्टांत— उपमेय और उपमान के साधारण धर्म का विम्ब-प्रतिविम्ब भाव दिखाया जाय और बाचक शब्द का उल्लेख न हो, तो दृष्टांत अलंकार होता है।

उदाहरण—

सठ सुधरहिं सत् संगति पाई।
पारस परसि कुधातु सुहाई।।

अनन्वय— जहाँ पर एक ही वाक्य में एक ही वस्तु को उपमेय तथा उपमान दोनों रूपों से वर्णन किया जाय वहाँ पर अनन्वय अलंकार होता है।

उदाहरण— हरि को मुख सखि, हरि मुख जैसो।

अतिशयोक्ति— जब किसी बात को आवश्यकता से अधिक बढ़ा-चढ़ाकर प्रस्तुत किया जाये, तो वहाँ अतिशयोक्ति अलंकार होता है।

उदाहरण—

जौ तुम्हार अनुशासन पावौ।
कन्दुक इव ब्रह्माण्ड उठावौं।।

❑

सफलता सोपान

गद्य संकलन व्याख्यात्मक भाग

बात

(१) सच पूछिए तो इस बात--------------------बात की बड़ी बात है।

संन्दर्भ एवं प्रसंग— यह गद्यांश गद्यसंकलन के 'बात शीषर्क से उद्धृत है। इसके लेखक श्री प्रतापनारायण मिश्रजी हैं। इस शीर्षक में मिश्रजी ने बात के विषय में विस्तृत चर्चा की।

व्याख्या— बात का अर्थ है वाणी। वाणी के महत्त्व का प्रतिपादन करते हुए इस गद्यांश में श्री मिश्रजी कहते हैं कि संसार के जितने भी जीव हैं उन सबों में मानव का सबसे अधिक महत्त्व इसलिए है कि वह सार्थक वाणी बोलना जानता है। जो पुरुष जितनी ही सार्थक वाणी बोलता है, उसका उतना ही अधिक महत्त्व होता है। वाणी के ही प्रभाव से मनुष्य बड़ा विद्वान्, वक्ता तथा श्रेष्ठ समझा जाता है। बड़े-बड़े नेताओं की वाणी का समाज पर दीर्घकालिक प्रभाव पड़ता है। सारी प्रतिष्ठाओं का मूल वाणी है। लेखक बतलाते हैं कि शुक, सारिका आदि भी कुछ सार्थक बातों को बोलते हैं, इसीलिए उन पक्षियों का महत्त्व अन्य पक्षियों की अपेक्षा अधिक स्वीकार किया जाता है। इसीलिए सबों को बात का महत्त्व स्वीकार करना चाहिए।

साहित्यिक विशेषताएँ— इस गद्यांश के वाक्य मुहावरेदार तथा अनुप्रास की छटा से परिपूर्ण हैं।

(२) हाँ बात की बात इतनी बड़ी है कि---मनाने पर कटिबद्ध रहते हैं।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह गद्यांश गद्यसंकलन के 'बात' शीर्षक से उद्धृत है। इस शीर्षक के लेखक श्री प्रतापनारायण मिश्र जी हैं।

व्याख्या— इस गद्यांश में बात के महत्त्व का प्रतिपादन करते हुए श्री मिश्र जी बतलाते हैं कि विभिन्न धर्मावलम्बी भी बात का महत्त्व देते हैं। यदि वे बात के

महत्त्व को नहीं स्वीकार करें तो सम्भवतः वे अपनी मान्यता की प्रतिष्ठा भी समाज में नहीं कर सकते। विभिन्न धर्मावलम्बी इस बात को स्वीकार करते हैं कि ईश्वर निराकार है, उसका कोई भी आकार नहीं है। कुछ मुस्लिम तथा इसाई सब के सब ईश्वर को निराकार मानते हैं। किन्तु निराकारवादी हिन्दू कहते हैं कि वेद ईश्वर का वचन है। अतएव उसमें बतलाए गये समस्त अर्थों को स्वीकार करना चाहिए। मुसलमानों का कहना है कि कुरान शरीफ अल्ला का कलाम है। इसाइयों का मानना है कि पवित्र बाइबिल गॉड का वर्ड है।

मिश्रजी कहते हैं कि बर्ड, कलाम तथा वचन ये सब के सब बात के ही पर्याय हैं। बात उसी की हो सकती है जो बोल सके। बोल तो वही सकता है जिसका मुख हो। मुखवाले को निराकार कैसे कहा जा सकता है? तो इस पर कुछ लोगों का कहना है कि ईश्वर सर्वशक्तिमान है। वह बिना वाणी (जीभ) के ही सबसे बड़ा वक्ता है। अतएव ईश्वर या अल्ला या गॉड का बात से संबन्ध है। वह बोलता है।

इन धार्मिकों की बातों को यदि कोई अस्वीकार करना चाहता है तो वे अनेक प्रकार की बातें बनाते हैं और उससे अपनी बात मनवाने की कोशिश करते हैं। अतएव बात के महत्त्व का कोई भी अपलाप नहीं कर सकता है।

(३) यहाँ तक कि प्रेमसिद्धान्ती---------अपने को वंचित न रहने देंगे।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग– यह गद्यांशगद्य संकलन के 'बात' शीर्षक से उद्धृत है। इस शीर्षक के लेखक श्री प्रतापनारायण मिश्रजी हैं।

व्याख्या– बात के महत्त्व का प्रतिपादन करते हुए लेखक इस गद्यांश में सगुण साकार वादियों पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं कि जो लोग प्रेमसिद्धान्ती हैं, उन लोगों के अनुसार ईश्वर निर्गुण नहीं अपितु सगुण साकार है। उसके एक-एक अंगों के समक्ष करोड़ों कामदेव की शोभी फीकी है। '**अंग-अंग पर बारई, कोटि-कोटि सत काम।**' उनका ईश्वर '**कोटि मनोज लजावनि हारे**' है। वे कहते हैं हम लूले लंगड़े ईश्वर को नहीं स्वीकारते। ईश्वर तो सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापक है।

निराकार का अर्थ श्याम वर्ण का शालग्राम है। अतएव निराकार शब्द भी ईश्वर की श्यामता को ही घोषित करता है। कहने का अभिप्राय यह है कि जो ईश्वर रूप रंग से रहित है उसको भी वे सम्पूर्ण रूपों से सम्पन्न बतलाते हैं। उस परमात्मा की प्रेम रस से परिपूर्ण वाणी उन प्रेमियों को आप्यायित करती है तथा उनके हृदय को आनन्द से परिपूर्ण बना देती है। वे सभी प्रेम सिद्धान्ती परमात्मा की बात, अथवा उसकी वाणी वेद के पीछे पागल हैं। अतएव बात की पहुँच बड़ी

लम्बी है। वेद परमात्मा की बात है। यदि बात न हो तो सम्भवतः परमात्मा की भी सत्ता स्वीकारना मुश्किल होगा। महर्षि वादरायण ने कहा भी 'शास्त्रयोनित्वात्; अर्थात् परमात्मा है इसमें प्रमाण शास्त्र है। शास्त्र से ही परमात्मा को सिद्ध किया जा सकता है। वेद शास्त्र भी तो वाणी (बात) स्वरूप ही है। अतएव बात का महत्त्व बहुत ही अधिक है।।

(४) जब परमेश्वर तक बात का--------------इत्यादि सब बात ही तो हैं।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत गद्यांश 'गद्यसंकलन' के 'बात' शीर्षक से उद्धृत है। इसके लेखक श्री प्रतापनारायण मिश्रजी हैं।

व्याख्या— इस गद्यांश में लेखक इस बात का प्रतिपादन करते हैं कि बात की महत्ता सर्वव्यापक है। बात के बिना कोई बात हो ही नहीं सकती है। साक्षात् ईश्वर भी बात के प्रभाव में है। हम मनुष्यों की तो कोई बात ही नहीं है। यदि देखा जाय तो बात की ईश्वर से बिलकुल समानता है। ईश्वर निराकार है तो बात भी निराकार है। उसका कोई भी रूपरंग नही है। ईश्वर के अनेक रूप बतलाये जाते हैं, तो बात के भी अनेक रूप हैं। वेद, शास्त्र, काव्य, कोश इत्यादि सब के सब बात के ही रूप माने जाते हैं। ऐसे भी अच्छी बात, बुरी बात, टेढ़ी बात, सीध ी बात इत्यादि बात के विविध रूप लोक में पाये जाते हैं।

बात की इस व्यापकता को शास्त्रकारों ने बहुत पहले ही पहचान लिया था। वैयाकरणों ने इसीलिए शब्दब्रह्म की स्थापना की है। उनका स्फोट सिद्धान्त इसी पर टिका हुआ है। ध्वनिवादियों की भी प्रायः इसी तरह की मान्यता है। भर्तृहरिने तो वाक्यपदीयम् में शब्दब्रह्म से ही सम्पूर्ण जगत् की सृष्टि का प्रतिपादन किया है। अतएव शब्द अथवा बात की व्यापकता एवं विविधरूपता के विषय में किसी का भी मतभेद नहीं होना चाहिए।

(५) बात के काम भी इसी भाँति-----------कुराही इत्यादि बन जाते हैं।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह गद्यांश 'गद्यसंकलन' के 'बात' शीर्षक से उद्धृत किया गया है। इसके लेखक श्री प्रतापनारायण मिश्रजी हैं।

व्याख्या— लेखक का अभिप्राय है कि बात के द्वारा अनेक प्रकार के काम होते हैं। किसी के मन में प्रेम या बैर की भावना? वह सुखी है या दुखी? उसकी किसी के प्रति श्रद्धा की भावना है अथवा घृणा की? वह किसी भी कार्य को सम्पादित करने के लिए उत्साहित है अथवा अनुत्साहित? इत्यादि समस्त बातों का पता बात से ही चलता है। किसी काम को करना उत्तम अथवा अधम है इस

बात को बात के ही द्वारा जाना जा सकता है। स्वयम् बात को इस बात के ही द्वारा जाना जा सकता है। बात को छोड़कर यदि किसी दूसरे माध्यम से इन सभी बातों का पता लगाने का प्रयास किया जाय तो उतनी सुविधा नहीं हो सकती है, जितनी सुविधा से इन समस्त बातों का पता बात के माध्यम से ही लगाया जा सकता है। हम चिट्ठी के माध्यम से अथवा सम्बाद प्रेषण के माध्यम से तार से घर बैठे ही सुदूर देश के समाचार को जान लेते हैं। तार अथवा पत्र भी तो लेखनी से निस्सृत बात के ही दूसरे रूप हैं।

इसी प्रकार से बात का अनेक प्रकार की क्रियाओं से भी संबन्ध होता है। उसी के कारण कभी बात बन जाती है, कभी बात बिगड़ जाती है, कभी बात उखड़ जाती है तो कभी बात जम जाती है। इसी तरह हम सभी लोगों के सभी प्रकार के काम भी बात पर ही निर्भर करते हैं। बात के ही प्रभाव में आकर पराये लोग भी अपने बन जाते हैं। वे बैर को छोड़कर स्नेह करने लगते हैं।

किसी की बात को ही सुनकर हम उसके स्वभाव का पता लगा पाते हैं। हम जान पाते हैं कि अमुक आदमी युद्धोत्साही है अथवा कायर? वह उदार है अथवा कंजूस? वह सन्मार्गगामी है अथवा कुमार्गगामी?

(६) बात का तत्त्व समझना हर एक---------- की बात का असर नहीं।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह गद्यांश 'गद्यसंकलन' के 'बात' शीर्षक से उद्धृत है। इसके लेखक श्री प्रतापनारायण मिश्रजी हैं।

व्याख्या— इस गद्यांश में लेखक बतलाते हैं कि किसी के भी किसी बात का क्या अभिप्राय है, इस बात को सभी लोग नहीं समझ पाते हैं। बात के अभिप्राय को ठीक ठीक समझ पाना तो किसी बड़े ही विज्ञ पुरुष का काम हो सकता है। यही नहीं कुछ लोग अपने बात को इतने प्रभावकारी ढ़ंग से प्रस्तुत करते हैं कि वे अपने श्रोताओं के विचारों पर अमिट छाप छोड़ जाते हैं। बड़े-बड़े विद्वान् अपना बहुत समय इसी में बिता देते हैं कि किसी महान् कवि का क्या अभिप्राय है? कोई सहृदय व्यक्ति जब अपनी मीठी-मीठी बात कहता है तो उसकी बातों के सामने सारे संसार की वस्तुएँ तुच्छ लगने लगती हैं।

ऐसा कोई देवता या पशु ही हो सकता है जिसके हृदय पर बालकों की तोतली बातों का, सुन्दरियों की रसीली और मीठी बातों का, किसी तात्त्विक वक्ता की बातों का प्रभाव न होता हो। सामान्य पुरुष के अन्तःकरण पर तो ऐसे लोगों की बातों का अमिट प्रभाव होता है। सामान्यतः कुत्ते तथा बिल्ली भी प्रेम

की भाषा को समझते हैं और स्नेह-पूर्वक बोलने वाले के प्रति अपना स्नेह प्रदर्शित करते हैं। जब पशुओं पर भी बातों का असर देखा जाता है तो मनुष्य के हृदय पर बातों की असर न हो वह मनुष्य तो पशुओं से भी गया गुजरा है।

कर्त्तव्य और सत्यता

(१) हम लोगों का जीवन सदा------------------------कोई चिन्ता नहीं।

सन्दर्भ एवं प्रसंग– प्रस्तुत गद्यांश गद्यसंकलन के 'कर्त्तव्य और सत्यता' शीर्षक से अवतीर्ण है। इस शीर्षक के लेखक श्री श्याम सुन्दर दास' जी हैं। इस गद्यांश में लेखक इस बात पर बल देते हैं कि हम सब लोगों को किसी भी कार्य को करने से पहले इस बात को निश्चित कर लेना चाहिए कि हम जिस कार्य को करने जा रहे हैं वह कार्य धर्मानुकूल है या नहीं हमें कभी भी धर्म के प्रतिकूल कार्यों को नहीं करना चाहिए।

व्याख्या– लेखक कहते हैं कि हम सभी लोगों को जीवन में कार्यों को करने की व्यस्तता बनी रहती है। सारा जीवन विभिन्न प्रकार के कार्यों को करते-करते बीत जाता है। हम जिन कार्यों को करते हैं वे कार्य दो प्रकार के होते हैं, धार्मिक एवं अधार्मिक। अतएव हम लोगों को सदा उन्हीं कार्यों को करना चाहिए जो धर्मानुकूलत हो। धर्मानुकूल कार्यों को करने में यदि किसी प्रकार की कठिनाई होती है तो भी, उससे घबराना नहीं चाहिए। धर्मानुकूल कार्यों को करने में यदि प्राणों की आहुति भी देनी पड़े तो उसकी परवाह नहीं करनी चाहिए। अपने धर्म पर मर मिटना लोक एवं परलोक दोनों के लिए कल्याणकारी होता है।

भगवान् श्री कृष्ण ने भी गीता में कहा भी है–

स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः।'

'अर्थात् अपने धर्म पर मर मिटना कल्याणकारी होता है। पर धर्म को अपनाना भयप्रद होता है।

(२) धर्मपालन करने के मार्ग में------------------------भय न रहेगा।

सन्दर्भ एवं प्रसंग– यह गद्यांश 'गद्यसंकलन' के 'कर्त्तव्य और सत्यता' शीर्षक से अवतीर्ण है। इस शीर्षक के लेखक श्री श्यामसुन्दर दास जी हैं। इस गद्यांश में लेखक धर्मपालन के मार्ग में आने वाली बाधाओं और उनसे बचने के साधनों की चर्चा करते हैं।

व्याख्या— इस गद्यांश में लेखक कहते हैं कि धर्मपालन के मार्ग में अनेक प्रकार की बाधाएं आती हैं इनमें चित्त की चंचलता, मन की निर्बलता और उद्देश्य की अस्थिरता आदि प्रधान हैं। मनुष्य के कर्तव्य के मार्ग में मानव के दो तरह की मानसिक स्थिति बनती है। भले एवं बुरे कर्मों का ज्ञान, तथा आत्मकल्याण के साधनों का ज्ञान तो एक तरफ काम करता है। इससे मनुष्य अपने कर्मों का पालन करने के लिए उत्सुक होता है, किन्तु दूसरी ओर आलस्य और स्वार्थपरायणता की भावना भी मन में आती है। इसी के कारण मनुष्य अपने कर्त्तव्य पालन के पथ से हटता है। मनुष्य इन्हीं दोनों प्रकार की भावनाओं के बीच में घिरा रहता है। जब उसका मन आत्मकल्याण के लिए पक्का हो जाता है तो वह निःस्वार्थ भावना से अपने कर्त्तव्य के पालन में प्रवृत्त हो जाता है। यदि उसकी भावना स्वार्थपरायणता की ओर गयी तो वह अपने आचरणों से ही अपने चरित्र को घृणास्पद बना लेता है।

अतएव आवश्यकता इस बात की है कि हम अपनी आत्मा की पुकार को सुनें। स्वार्थपरायणता के वशीभूत न हों। आत्मकल्याणकारी कर्त्तव्य के पथ पर प्रवृत्त हों। शुभ कार्यों को करने में शीघ्रता न करें। ऐसा करते-करते जब हमारी आत्मकल्याणकारी कार्यों को करने की आदत बन जायेगी तब हम कभी भी कुमार्गगामी नहीं होंगे और न तो किसी की घृणा के पात्र बनेंगे।

(३) बहुत से लोग नीति और-------के पाप से किसी प्रकार कम नहीं है।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत गद्यांश 'गद्यसंकलन' के **'कर्तव्य और सत्यता'** शीर्षक से उद्धृत है। इस गद्यांश में लेखक बतला रहे हैं कि झूठ की रक्षा करना झूठ बोलने से कम पापजनक नहीं है।

व्याख्या— लेखक कहते हैं कि कुछ लोग स्वयं झूठ न बोलकर झूठ की रक्षा करने का प्रयास नीति और आवश्यकता के बहाने करते हैं। वे लोग अपने प्रयास के समर्थन में कहते हैं कि इस झूठ की रक्षा करना नीति के अनुकूल है। अथवा वे यह कहते हैं कि इस समय इस झूठ की रक्षा करने की आवश्यकता है। अतएव इस को या तो किसी के समक्ष प्रकाशित नहीं किया जाय अथवा इसका रूप बदलकर समाज के समक्ष उपस्थित किया जाय यही उचित है। कुछ लोग उस झूठ को ही सत्य बलताने लगते हैं। उनके ऐसा करने में अभिप्राय यह रहता है कि लोग इस झूठ को ही सत्य मानने लग जायँ और इसके विपरीत जो बात है, जो वस्तुतः सत्य है, उसी को झूठ मानने लग जायँ।

लेखक का कहना है कि आवश्यकता अथवा नीति के तकाजे पर झूठ की रक्षा

कर, उसको समाज के समक्ष नहीं आने देना, अथवा उसका रूप बदलकर समाज के समक्ष उपस्थित करना, अथवा झूठ को ही सत्य बतलाना ये सब के सब उतने ही बड़े पाप हैं जितना बड़ा पाप झूठ बोलना होता है। अतएव मनुष्य को चाहिए कि वह कभी भी सत्य का अपलाप न करे और न तो झूठ की सुरक्षा ही करे।

(४) संसार में बहुत से ऐसे नीच और-----------और कुत्सित कर्म हैं।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत गद्यांश 'गद्यसंकलन' के **'कर्त्तव्य और सत्यता'** नामक शीर्षक से उद्धृत है। इस शीर्षक के लेखक श्री श्यामसुन्दर दास जी हैं। इस गद्यांश में लेखक इस बात का प्रतिपादन करते हैं कि जो लोग झूठ के सहारे किसी को धोखा देते हैं, ऐसे लोगों का समाज पर बहुत बुरा असर पड़ता है।

व्याख्या— संसार में ऐसे अनेक नीच और निन्दित प्रवृत्ति के लोग पाए जाते हैं जो झूठ बोलने में ही अपनी चतुराई समझते हैं। झूठ बोलकर ऐसे लोग सत्य का अपलाप करने का काम करते हैं और अपने ऊपर आने वाली विपदा से बचने का प्रयास करते हैं। दूसरों को धोखा देने में वे अपना गौरव समझते हैं। वे समझते हैं कि मैं सबसे अधिक चालाक ओर गौरव सम्पन्न व्यक्ति हूँ। किन्तु इस तरह के व्यवहार वाले लोगों का समाज पर बहुत बुरा असर पड़ता है। ऐसे लोगों से समाज में दुःख एवं संताप का सञ्चार होता है। लोगों में झूठ बोलने की प्रवृत्ति बढती है। वे लोग किसी भी बात को सच-सच न कहकर झूठ-झूठ की बातें बनाते हैं। किन्तु ऐसा करना बड़ा ही निन्दित कार्य है। ऐसा करने वाले वस्तुतः न तो अपना ही उपकार कर पाते हैं, और न तो वे किसी दूसरे की ही भलाई कर पाने में समर्थ होते हैं।

(५) इसीलिए हम सब लोगों का यह परम धर्म---------सुखी बने रहेंगे।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत गद्यांश 'गद्यसंकलन' के **'कर्त्तव्य और सत्यता'** शीर्षक से उद्धृत है। इस शीर्षक के लेखक डॉ० श्याम सुन्दर दास जी हैं। इस अनुच्छेद में लेखक इस बात पर बल देते हैं कि यद्यपि सत्य बोलने में कुछ कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है फिर भी हमें सत्य का त्याग नहीं करना चाहिए।

व्याख्या— लेखक कहते हैं कि असत्य भाषण चूकि समस्त अनर्थों का मूल है। असत्यभाषी समाज में निन्दित हो जाता है, सब लोग उससे घृणा करने लग जाते हैं। अतएव हमें सत्यभाषण को सर्वाधिक महत्त्व देना चाहिए। चाहे सत्य बोलने के लिए कितने ही कष्ट उठाना पड़े फिर भी हमें झूठ नहीं बोलना चाहिए।

जो लोग सत्यभाषी हैं, उनका समाज समादर करता है और अन्त समय तक ऐसे लोग आनन्दपूर्वक अपना समय बिताते हैं। उसे सब लोग चाहते हैं, कोई भी सत्य बोलने वाले व्यक्ति से घृणा नहीं करता है। जो सत्यभाषण को ही अपना कर्म मानते हैं, ऐसे लोगों को अपने कर्त्तव्य का पालन करने में किसी भी प्रकार का कष्ट नहीं होता है। वे लोग अपनी छोटी सी ही कमाई में सदा सन्तुष्ट रहा करते हैं और सन्तोष ही सुख की प्राप्ति का सर्वोत्तम साधन है। जो सन्तुष्ट नहीं होता उसे कभी भी सुख शान्ति एवं समृद्धि की प्राप्ति नहीं होती। अतएव मनस्तोष प्राप्त करने के लिए हमें सत्यभाषण करना चाहिए, और अपने कर्तव्य का पालन करना चाहिए।

मित्रता

(१) मित्रों के चुनाव की उपयुक्तता------------------------चाहे देवता।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत गद्यांश 'गद्यसंकलन' के 'मित्रता' शीर्षक से उद्धृत है। इस शीर्षक के लेखक आचार्य रामचन्द्रशुक्ल जी हैं। इस गद्यांश में लेखक इस बात की चर्चा कर रहे हैं कि हमें अपने मित्रों के चयन में अत्यन्त सावधान होना चाहिए। मित्रों की संगति का गुप्त प्रभाव मानव के चरित्र पर पड़ता रहता है।

व्याख्या— इस गद्यांश में लेखक का कहना है कि विशेष रूप से जब हम बाल्यकाल में मित्रों का चयन करते हैं उस समय हमें मित्रों के चुनाव की उपयुक्तता पर सर्वाधिक ध्यान देना चाहिए। उसी पर हमारे जीवन की सफलता तथा विफलता निर्भर होती है। मित्रों की संगति का गुप्तप्रभाव हमारे आचरण पर पड़ता है। जब हमलोग समाज में प्रवेश करते हैं, उस समय हमारा जीवन मृत्पिण्ड के समान होता है। जिसे अपनी इच्छा के अनुसार कुम्भकार कोई भी रूप प्रदान करता है। इस तरह प्रारम्भिक काल की संगति हमारे जीवन पर अपना अमिट प्रभाव छोड़ जाती है। इस अवस्था का मित्र यदि सन्मार्गगामी हुआ तो वह हमें देवता बना सकता है। यदि वह उन्मार्गगामी हुआ तो हमें वह राक्षस बना सकता है। बाल्यकाल की मैत्री के प्रभाव से मनुष्य समाज सुधारक बनाया जा सकता है। वह समय को एक नयी दिशा प्रदान कर सकता है, किन्तु यदि वह किसी उन्मार्गगामी की संगति में पड़ गया तो वह समाज का शत्रु बन जा सकता है। उससे समाज किसी भी

उपकार की आशा नहीं कर सकता।

(२) विश्वासपात्र मित्र से बड़ी भारी-----------तब हमें उत्साहित करेंगे।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत गद्यांश 'गद्यसंकलन' के 'मित्रता' शीर्षक से उद्धृत है। इसके लेखक आचार्य रामचन्द्रशुक्ल हैं। इस गद्यांश में लेखक विश्वास पात्र मित्र से होने वाले लाभ की चर्चा करते हैं।

व्याख्या— इस अनुच्छेद में लेखक एक विश्वासपात्र मित्र के गुणों की चर्चा करते हैं। वे बतलाते हैं कि किसी प्राचीन विद्वान् का कहना है कि विश्वासपात्र मित्र से बहुत बड़ी रक्षा होती है।

यदि किसी को किसी विश्वासपात्र मित्र की प्राप्ति हो गयी तो समझो उसे बहुत बड़े खजाने की प्राप्ति हो गयी। विश्वासपात्र मित्र उसी तरह से कल्याणकारी होता है, जिस तरह से औषधियाँ मानव के लिए कल्याणकारिणी होती हैं। हमें अपने मित्रों से इस बात की आशा रखनी चाहिए कि हमारा मित्र हमारे उत्तम संकल्पों में हमें सुदृढ़ बनायेगा। वह हमें ऐसे कार्यों को करने में प्रोत्साहन प्रदान करेगा। वह हमें गलतियों से बचायेगा, बुरा कार्य करने से रोकेगा। इस मित्र से हमारे सत्य, पवित्रता तथा मर्यादा के प्रति प्रेम-भाव सम्पुष्ट होंगे। यदि हम किसी भी प्रकार से उन्मार्ग-गामी हो जायेंगे। यदि किसी भी अच्छे कार्य को करने में हम हतोत्साहित हो जायेंगे तो हमारा मित्र हमें उस कार्य को करने के लिए प्रोत्साहित करेगा हमें निराश नहीं होने देगा।

अतएव मनुष्य को सर्वदा किसी विश्वासपात्र तथा सन्मार्गगामी मित्र को प्राप्त करने की कोशिश करनी चाहिए।

(३) मित्र केवल उसे नहीं कहते-----------दूसरा अपना हानि-लाभ समझे।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत गद्यांश 'गद्यसंकलन' के 'मित्रता' शीर्षक से उद्धृत है। इस शीर्षक के लेखक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हैं। इस अनुच्छेद में आचार्य इस अर्थ का प्रतिपादन कर रहे हैं कि-मित्र किसे कहा जा सकता है?

व्याख्या— लेखक का कहना है कि हम उस आदमी को अपना मित्र नहीं कह सकते हैं जिस व्यक्ति के गुणों की तो हम प्रशंसा करें, किन्तु उससे स्नेह नहीं कर सकें। जिससे हमारे छोटे-मोटे काम तो निकल जायँ किन्तु हम भीतर ही भीतर उस आदमी से घृणा करते रहें। मित्र को तो श्रद्धास्पद तथा स्नेहास्पद होना चाहिए। मित्र तो वह अच्छा होता है जो वस्तुतः पथप्रदर्शक हो। जिस पर पूरा-पूरा विश्वास किया जा सके। जिससे कभी भी किसी भी प्रकार की हानि होने की

संभावना न हो। मित्र किसी भी भाई से कम नहीं होता। सच्चा मित्र अपने मित्र की होने वाली क्षति और लाभ को ही अपनी क्षति एवं लाभ समझता है। उसका अपने मित्र से तादात्म्य होता है।

(४) मित्रता के लिए यह-------------------ही मित्रता हो सकती है।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग– प्रस्तुत गद्यांश 'गद्यसंकलन' के 'मित्रता' शीर्षक से उद्धृत है। इस शीर्षक के लेखक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हैं। इस गद्यांश में लेखक बतला रहे हैं कि यह कोई आवश्यक नहीं है कि दो मित्रों का स्वभाव तथा कार्यक्षेत्र एक समान हो। इतिहास के ऐसे अनेक उदाहरण हैं जिससे इस बात की सिद्धि होती है कि भिन्न स्वभाव वाले तथा भिन्न-भिन्न प्रकार के कार्य करने वाले लोगों में प्रगाढ़ मैत्री थी।

व्याख्या– लेखक इस अनुच्छेद में इस अर्थ का प्रतिपादन कर रहे हैं कि सामान्यतः लोगों की ऐसी धारणा होती है कि दो समान स्वभाव वाले तथा एक समान कार्य करने वाले लोगों में ही प्रगाढ़ मैत्री पायी जाती है। मित्रता के लिए प्रकृति तथा स्वभाव की समानता अनावश्यक है। इतिहास बतलाता है कि भिन्न प्रकृति तथा भिन्न आचरण वाले लोगों में भी मित्रता होती है। उदाहरणार्थ इतिहास के श्रीराम लक्ष्मण की मित्रता देखी जा सकती है। श्रीराम धीर और शान्त प्रकृति के पुरुष थे और लक्ष्मण उग्र प्रकृति के पुरुष। किन्तु दोनों में अपार स्नेह था। दोनों एक दूसरे को प्राण से भी प्रिय समझते थे। श्रीराम के लिए लक्ष्मण ने अपने जीवन के सम्पूर्ण सुख-सुविधाओं का उत्सर्ग कर दिया। इसी तरह से दुर्योधन और कर्ण की भी मित्रता का उदाहरण लिया जा सकता है। कर्ण एक उच्च आशयों वाला महापुरुष था उसकी मित्रता लोभी स्वभाव वाले उन्मार्गगामी दुर्योधन से थी। दोनों की मित्रता में किसी भी प्रकार की न्यूनता कभी नहीं आयी। दुर्योधन के लिए महात्मा कर्ण ने अपने जीवन का उत्सर्ग कर दिया।

अतएव मित्रता में स्वभाव, आचरण अथवा प्रकृति की भिन्नता को बाधक रूप से नहीं स्वीकार किया जा सकता है।

(५) मित्र का कर्त्तव्य इस प्रकार बतलाया-------प्रकार का धोखा न होगा।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग– प्रस्तुत गद्यांश 'गद्यसंकलन' के 'मित्रता' शीर्षक से उद्धृत है। इस शीर्षक के लेखक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हैं। इस अनुच्छेद में लेखक बतला रहे हैं कि किसी भी मित्र का कर्त्तव्य क्या होता है? उसमें कौन-कौन से गुण अपेक्षित होते हैं?

व्याख्या— इस अनुच्छेद में लेखक यह बतला रहे हैं कि जो सच्चा मित्र होता है वह अपने मित्र को अच्छे कार्यों में इतनी सहायता करता है कि वह अपने सामर्थ्य से भी अधिक कार्यो को कर जाता है। ऐसा मित्र वही हो सकता है जो दृढ़ संकल्प हो। उसका अन्तःकरण शुद्ध हो। अतएव हमें ऐसे मित्र का अन्वेषण करना चाहिए जिसमें हमारी अपेक्षा अधिक आत्मबल हो, वह अधिक मित्रनिष्ठ और सत्यसंकल्प हो। जो कभी भी मित्र के प्रति दूषित अन्तःकरण वाला न बने। उदाहरण के लिए श्रीराम और सुग्रीव की मित्रता। श्रीराम शुद्ध अन्तःकरण वाले ऐसे मित्र हैं, जिनके प्रोत्साहन को प्राप्त कर सुग्रीव बालि जैसे वीर से युद्ध करता है, अपना खोया हुआ साम्राज्य प्राप्त करता है, और अपने वानर वीरों को प्रेषित कर सीताजी का पता लगाता है। श्रीराम सुग्रीव की अपेक्षा अधिक आत्मबल वाले, और दृढ़ संकल्प वाले हैं। वे सुप्रतिष्ठित, शुद्ध हृदय वाले, मृदुस्वभाव वाले, पुरुषार्थी, शिष्ट और विश्वासपात्र मित्र हैं। हमें भी इसी प्रकार के सन्मित्र का अन्वेषण करना चाहिए।

(६) उनके लिए फूल पत्तियों में------------------------साधन करना चाहिए।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत गद्यांश 'गद्यसंकलन' के 'मित्रता' शीर्षक से उद्धृत है। इस शीर्षक के लेखक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हैं। इस अनुच्छेद में श्री शुक्ल बतला रहे हैं कि आजकल जिन शोहदों की संख्या बहुत अधिक बढ़ रही है, उन लोगों को तो कभी भूलकर भी अपना मित्र नहीं बनाना चाहिए।

व्याख्या— लेखक इस अनुच्छेद में बतला रहे हैं कि आजकल के शोहदों के जीवन का कोई भी लक्ष्य नहीं रह गया है, वे अमीरों की बुराइयों का नकल करते हैं। अहर्निश उनका समय बनाव और शृंगार में बितता जाता है। महफिलों में ओहो हो हो करना, गलियों में ठट्ठा मारना, और सिगरेट का धुआँ उड़ाते चलना, ही उनका काम है। ऐसे लोगों का जीवन शून्य और निस्सार होता हे। साधु-सन्त महात्माओं , वक्ताओं, महाकवियों, वीरों, तथा ग्रन्थकारों से उनका कोई भी सरोकार नहीं होता। उनको प्राकृतिक सौन्दर्य से कोई भी परिचय नहीं। उनके लिए फूल पत्तियों के सौन्दर्य, झरनों की कल-कल ध्वनि, तथा अनन्त सागर के अहर्निश गम्भीर घोष का कोई भी आकर्षण नहीं है। उनको अपने जीवन में सच्चे प्रयत्न और पुरुषार्थ को प्राप्त करने का अवसर ही नहीं मिलता है। उनको न तो कभी सच्ची प्रीति मिलती है, और न तो वास्तविक शान्ति ही। उन्होंने सच्चे सुख का कभी अनुभव ही नहीं किया। उनका सारा समय विषयोपभोग

का ही अनुभव करने में व्यतीत हो जाता है। उनका हृदय दूषित विचारों और निन्दित आशयों से कलुषित होता है। उनका प्रतिदिन पतन ही होता है, वे उन्नति के दरवाजे को कभी देख भी नहीं पाते हैं। अतएव ये नये युग के शोहदे वस्तुतः शोचनीय हैं। इनका भविष्य घोर अन्धकार में है।

कल्याणकामी मनुष्य को ऐसे मित्रों की संगति से सदा बचते रहना चाहिए। उनका साथ कभी भी नहीं करना चाहिए। ये स्वयम् तो विनष्ट होते ही हैं, जो लोग ऐसे लोगों के सम्पर्क में आ जाते हैं, उन लोगों के भी जीवन को ऐसे लोग बर्बाद कर देते हैं। ।

(७) कुसंग का ज्वर सबसे भयानक-------------------उठाती जायेगी।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग– प्रस्तुत गद्यांश 'गद्यसंकलन' के 'मित्रता' शीर्षक से उद्धृत है। इस शीर्षक के लेखक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हैं। इस अनुच्छेद में श्री शुक्ल जी कुसंग से होने वाली हानियों की चर्चा करते हैं। कुसंगति सम्पूर्ण अवनतियों का साधन है और सत्संगति सभी प्रकार की उन्नतियों का साधन है। इसी अर्थ का प्रतिपादन श्री शुक्ल जी इस अनुच्छेद में करते हैं।

व्याख्या– इस अनुच्छेद में लेखक कहते हैं कि कुसंगति से मानव को एक प्रकार का ज्वर हो जाता है। इस ज्वर से मनुष्य की नीति, सद्विचार, तथा सद्बुद्धि का नाश हो जाता है। इस ज्वर से मनुष्य बुरे संग को प्राप्त कर लेता है तो उसकी अनेक प्रकार की अवनति होती है। यदि उसकी संगति अच्छी हुई तो वह दिन प्रतिदिन विकास की ओर अग्रसर होता है। सत्संगति मनुष्य को सहारा देने वाली एक भुजा के समान होती है, जबकि कुसंगति पतन के गड्ढ़े में गिरा देने वाली पैर में बँधी चक्की के समान होती है। अतएव मनुष्य को सदा संगति के विषय में सावधान रहना चाहिए। उसे इस विषय में संग करने से पहले सोचना चाहिए कि वह जिससे मित्रता कर रहा है, वह आदमी कहीं ऐसा तो नहीं है, जिससे उसके पतन के मार्ग ही प्रशस्त हों, उन्नति उसकी समाप्त तो नहीं हो जायेगी।

मंत्र

(१) संसार में ऐसे मनुष्य भी होते हैं-------------सदैव तैयार रहते थे।

सन्दर्भ एवं प्रसंग– प्रस्तुत गद्यांश 'गद्यसंकलन' के 'मंत्र' शीर्षक से उद्धृत है। इस शीर्षक के लेखक मुन्शी प्रेमचन्द जी हैं। इस गद्यांश में श्री प्रेमचन्द जी ने

प्राचीन एवं नवीन विचारधाराओं का सजीव चित्रण किया है।

व्याख्या— इस गद्यांश में लेखक ने स्पष्ट किया है कि एक दीन-हीन बूढ़ा व्यक्ति तत्कालीन प्रख्यात डाक्टर चड्ढ़ा से अपने इकलौते बेटे की दवा कराने के लिए आया। लड़के की हालत अत्यन्त खराब थी; किन्तु उस समय डाक्टर के खेलने का समय हो गया था। बूढ़े ने बहुत प्रार्थना की कि डाक्टर उसके बेटे को देख ले, किन्तु डाक्टर उसकी एक भी नहीं सुना। उसकी ओर देखा भी नहीं। वह खेलने के लिए चला गया।

उस समय की उस बूढ़े की मानसिक भावना का वर्णन करते हुए लेखक कह रहे हैं कि इस संसार में ऐसे भी लोग रहते हैं, जो लोग अपने आमोद-प्रमोद के सामने किसी की जान की भी परवाह नहीं करते हैं। आज का यह संसार इतना निर्मम और कठोर है, इसका अनुभव इस बूढ़े के जीवन में कभी नहीं हुआ था।

वह स्वयं उस जमाने का जीव था जिस जमाने के लोग लगी हुई आग को बुझाने में, मुर्दे को मरघट तक पहुँचाने में, किसी के छप्पर को उठवाकर उसकी सहायता करने में और किसी कलह को शान्त करने में दिलचस्पी रखते थे।

उसने जीवन में पहली बार इतनी कठोरता डाक्टर चड्ढ़ा की देखी थी और उसका दुष्परिणाम हुआ कि उसी रात इस बूढ़े का सात साल का इकलौता बच्चा काल कवलित हो गया। उसका एकमात्र जीवन का सहारा समाप्त हो गया।

(२) वही हरा-भरा मैदान था--------------------------अश्रुप्रवाह था।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत गद्यांश 'गद्यसंकलन' के 'मंत्र' शीर्षक से उद्धृत है। इस शीर्षक के लेखक श्री प्रेमचन्द जी हैं। इस शीर्षक में मुन्शी प्रेमचन्द ने आधुनिक सभ्य समाज की नीचाशय से युक्त मनोवृत्ति का बड़ा ही सुन्दर चित्रण किया है। इस अनुच्छेद में लेखक क्षण भर में बंदलते हुए एक दृश्य का मार्मिक चित्रण करते हैं।

व्याख्या— लेखक इस अनुच्छेद में बतला रहे हैं कि अभी कुछ देर पहले जहाँ डाक्टर चड्ढा के घर पर आये हुए मेहमान डाक्टर के इकलौते बेटे कैलाश की बीसवीं वर्ष-गाँठ मना रहे थे। किन्तु साँपों के पालने के शौकिन कैलाश अपनी प्रेयसी मृणालिनी के आग्रह के वशीभूत होकर अपने मित्रों को साँपों की करामात दिखाते दिखाते किसी गेहुँअन साँप के काट लेने से मर सा गया। फलतः सारी खुशी खौफ में बदल गयी। सारा आनन्द शोक में परिवर्तित हो गया। अब भी वही हरा भरा मैदान था जहाँ लोग कुछ देर पहले अनेक प्रकार से अपने

आनन्द की अभिव्यक्ति कर रहे थे। सुनहरी चाँदनी का आनन्द उठा रहे थे। किन्तु अब यहाँ पर न तो कोई आनन्दाभिव्यक्ति है और न तो कोई संगीत। नीरवता और उदासी का यहाँ साम्राज्य था। कैलाश का मित्र समाज शोक सागर में डूब रहा था और मनोरंजन के सारे समान निस्तब्ध थे। यदि आ रही थी तो वहाँ करुण क्रन्दन की हृदयविदारक ध्वनि, बह रहा था आँसुओं का प्रवाह।

(३) मैं नहीं जाता मेरी बला जाय---------------------कई लड़के हैं?

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत गद्यांश 'गद्य संकलन' के 'मंत्र' शीर्षक से उद्धृत है। इस शीर्षक के लेखक मुन्शी प्रेमन्द जी हैं। प्रस्तुत अनुच्छेद में लेखक ने उस बूढ़े व्यक्ति के प्रतिकार की भावना को अभिव्यक्ति प्रदान की है, जिसके इकलौते मरणासन्न बेटे को डाक्टर चड्ढा ने लाख प्रार्थना करने पर भी नहीं देखा था, और खेलने के लिए चले गए थे। आज उन्हीं का बेटा साँप काटने से मर गया है और साँप के मंत्र को जानने वाला वह बूढा व्यक्ति अपनी प्रतिकार की भाषा में कह रहा है।

व्याख्या— बूढे भगत ने जब किसी के कहने पर यह जाना कि आज डाक्टर चड्ढा के लड़के को साँप ने काट लिया है, और हो सकता है कि उसके झाड़ने से वह ठीक हो जाय तो उसके हृदय में प्रतिशोध की भावना भड़क उठी। उसने कहा कि मैं उसके यहाँ नहीं जा सकता हूँ; यह वही चड्ढा है जिसने मेरे इकलौते मरणासन्न बेटे को नहीं देखा था। मेरी प्रार्थना सुनकर भी उसे दया नहीं आयी थी और वह खेलने के लिए चला गया था। उस समय मेरी बात भगवान सुन रहे थे। आज परमात्मा ने चड्ढा को उचित फल दिया है।

आज उन्हें मालूम पड़ता होगा कि पुत्र के मरने का शोक कैसा होता है ? कितना हृदयविदारक होता है वह कष्ट। उनके तो कई लड़के होंगे; हमारा तो इकलौता बेटा था। अब मैं उनके लड़के को देखने के लिए उनके घर नहीं जा सकता हूँ।

(४) पर उसके मन की--------------एक-एक पल का विलम्ब घातक था।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह गद्यांश 'गद्यसंकलन' के 'मंत्र' शीर्षक से उद्धृत है। इस शीर्षक के लेखक मुन्शी प्रेमचन्द जी हैं। इस अनुच्छेद में लेखक ने साँप के मंत्र के जानकार उस बूढे की मानसिक स्थित का चित्रण किया है जिसने जीवन में किसी का अनुपकार नहीं किया, जिसने जिन्दगी में सबों की भलाई ही की। कभी किसी की बुराई नहीं की।

व्याख्या— लेखक ने इस अनुच्छेद में बतलाया है कि बूढे भगत के मन में एक ओर तो चड्ढा की अतीत-कालिक निष्ठुरता की कसक थी तो दूसरी ओर उसके मन में कर्तव्य की भावना; उसे उचित कार्य करने के लिए प्रेरित कर रही थी। उस समय उसकी दशा श्रोता की थी जो उपदेशक के उपदेश सुनते हुए भी बाजे की आवाज सुनकर सहसा मन से उस आवाज की ओर आकर्षित हो जाता है। उसका मन बाजे की आवाज की ओर भले ही आकर्षित हो जाता है, किन्तु शर्म के मारे वह उपदेशक के उपदेश को सुनना छोड़कर बाजा सुनने के लिए नहीं जाता है। उसके मन में होता है कि यदि मैं उपदेश सुनना छोड़कर बाजा सुनने चला जाऊँ तो लोग मुझे क्या कहेंगे ? इसी तरह उस बूढे की मानसिक स्थिति थी। प्रतिशोध की भावना उसके लिए उपदेश के समान थी, किन्तु उस बूढे का मन उस नवयुवक की ओर लगा था। वह मन से चाहता था कि कोई भी न जाने और वह शीघ्र अपने मन्त्र की शक्ति से उस नवयुवक की जान बचा दे।

विश्व-मन्दिर

(१) वहाँ अनेक धर्मग्रन्थों——————————एकता की झलक दिखायेंगे।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह अनुच्छेद 'गद्यसंकलन' के **'विश्व-मन्दिर'** शीर्षक से उद्धृत है। इस शीर्षक के लेखक श्री वियोगी हरि हैं। आपने इस शीर्षक में विश्ववन्धुत्व की भावना को उजागर किया है। आपके अनुसार संसार के सभी धर्मों, सभी धार्मिक ग्रन्थों की भावना और लक्ष्य एक हैं। आवश्यकता है सबों में समन्वय करने की।

व्याख्या— श्रीवियोगी हरि जी बतला रहे हैं कि आज आवश्यकता है एक ऐसे विश्व मन्दिर के निर्माण की जिसमें विश्व के सभी मन्दिरों की विशेषताओं का समाहार हो। उसमें सभी धर्मगन्थों के समन्वयात्मक वाक्यों का अंकन होना आवश्यक है। इस मन्दिर में वेदों के मन्त्र, कुरान की आयतें, अवेस्ता की गाथाएँ, वौद्धों के सुत्त, इंजिल के सरमन, कनफ्यूसियस के सुन्दर वाक्य, कबीर के सबद तथा सूर के भजन का भी अंकन होना आवश्यक है। ऐसे विश्वमन्दिर में आकर संसार के सभी जीवों को शान्ति मिलेगी। उसमें ऊँच-नीच, गरीब-अमीर तथा पुण्यात्मा एवं पापी का कोई भी भेद-भाव नहीं होगा। सब लोग उस मन्दिर में प्रवेश करने के अधिकारी होंगे। सबों को उस मन्दिर में शान्ति मिलेगी। इस

मन्दिर में अनेकता में एकता की झलक मिलेगी। यहाँ पर सबों का समान रूप से समादर होगा। किसी को भी यहाँ निराशा नहीं मिलेगी।

(२) वहाँ की उपासना में पूर्व---------------की कुर्वानी भी की जायेगी।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत गद्यांश 'गद्यसंकलन' के 'विश्व मन्दिर' शीर्षक से उद्धृत है। इस शीर्षक के लेखक 'श्री वियोगी हरि' हैं। इस शीर्षक में लेखक ने एक ऐसे विश्वमन्दिर के निर्माण की बात की है, जिसमें विश्व के सभी मानवों का मन शान्ति प्राप्त कर सके। जहाँ दुनिया के सभी धार्मिक आकर अपने मनोनुकूल उपासना के साधनों को प्राप्त कर सकें। जिसमें सबों का अपनत्व हो। सब लोग जिसको अपना मन्दिर समझें।

व्याख्या— लेखक इस अनुच्छेद में बतला रहें हैं कि इस मन्दिर में पूर्व एवं पश्चिम का कोई भी विवाद नहीं होगा। सम्पूर्ण जगत् की सृष्टि करने वाला परमात्मा तो सर्वत्र व्याप्त है। वह सभी दिशाओं में है। उसकी उपासना प्रत्येक दिशा में की जा सकती है। उसी का सारा संसार है। उससे न तो कोई पृथक् है और न हो सकता है। इस विश्व मन्दिर में प्रत्येक पत्थर में तथा प्रत्येक ईंट में प्रेम का सन्देश होगा। उस मन्दिर में आकर सब धार्मिक अपनी-अपनी धारणा के अनुसार उसका समादर करेंगे। कोई उसके प्रत्येक पत्थर को चूमेगा तो कोई उसके प्रत्येक पत्थर को आनन्दमय होकर दण्डवत् प्रणाम करेगा। वहाँ सबों को एक साथ प्रेम का प्रसाद मिलेगा। किसी के साथ कोई भी भेद-भाव नहीं बरता जायेगा। सबों में सबों के प्रति समर्पण की भावना होगी। सब एक दूसरे से असीम स्नेह करेंगे।

(३) उस महान् समन्वय मन्दिर-------------------वही-वही होगा।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत गद्यांश 'गद्यसंकलन' के 'विश्व मन्दिर' शीर्षक से उद्धृत है। इस शीर्षक के लेखक श्री वियोगी हरि जी हैं। इस अनुच्छेद में लेखक अपने मनोभिलाषित विश्व मन्दिर के स्वरूप का निरूपण करते हैं।

व्याख्या— लेखक इस अनुच्छेद में बतलातें हैं कि यह जो विश्वमन्दिर होगा उसमें विश्व के सभी पूजास्थलों के चिह्न होंगे। सबों के अनुकूल मूर्तियाँ एवं वाक्य होंगे। लेखक का विश्वास है कि इस विश्वमन्दिर में आकर सभी साधक लोकसेवा तथा विश्वप्रेम का सन्देश प्राप्त कर सकते हैं। यहाँ पर किसी भी प्रकार का झगड़ा नहीं होगा। यहाँ पर किसी मजहब विशेष को महत्त्व नहीं दिया जायेगा मजहबी

झगड़ों से घबराये लोग यहाँ शान्ति का अनुभव कर सकेंगे। यहाँ पर सबों को दिव्य प्रेम की साधना के साधनों की प्राप्ति होगी। यहाँ पर बैठ कर सभी लोग अपने मनोनुकूल ढंग से अपने प्रिय परमात्मा की आराधना करेंगे तथा शान्ति एवं सन्तोष का अनुभव कर सकेंगे। सब लोग यही अनुभव करेंगे कि इस मन्दिर में उसी परमात्मा की प्रतिष्ठा है जिसकी मैं आराधना करता हूँ। सबों में वही परमात्मा व्याप्त है जिसकी मैं आराधना करता हूँ।

ममता

१. उसका यौवन शोण के समान....................कहाँ अन्त था।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत गद्यसंकलन के 'ममता' शीर्षक से उद्धृत है। इस शीर्षक के लेखक श्री जयशंकर प्रसाद जी हैं। इस गद्यांश में उन्होंने एक भारतीय युवती विधवा का सजीव चित्रण किया है।

व्याख्या— शोण नदी के तट पर अवस्थित रोहतास दुर्ग के स्वामी के मंत्री चूड़ामणि की पुत्री ममता विधवा थी। उसकी जवानी भरी अवस्था केवल दुःखों का साम्राज्य थी। उसका अन्तःकरण वेदना से आक्रान्त था। उसके लिए सम्पूर्ण संसार तुच्छ था। अपने वैधव्य जीवन के विषय में सोचते ही उसकी आँखों में आँसुओं की बरसात उमड़ पड़ती थी। उसके लिए सुख के सम्पूर्ण साधन कण्टक पूर्ण शय्या के समान दुःखद थे। वह उन साधनों से सुख नहीं केवल दुःख का ही अनुभव करती थी। उसके लिए साधनों का कभी अभाव नहीं हुआ, किन्तु सब कुछ के बावजूद वह विधवा थी।

भारतीय हिन्दू समाज में विधवा नारी को निराश्रित माना जाता है। उसका सम्पूर्ण सौभाग्य अपने पति के दिवंगत होने के साथ ही समाप्त हो जाता है। सब लोग उस को अशुभ मानते हैं और उसकी उपेक्षा करते हैं, क्योंकि वह अपने धव (पति) से रहित होती है। ऐसी स्थिति में उस युवती दुर्गाधिपति के अमात्य की इकलौती पुत्री सुख के सम्पूर्ण साधनों के बीच भी दुखी थी। उसके दुख का कोई अन्त नहीं था। उसके दुख का अन्त तो उसके जीवन के अन्त के साथ ही संभव था।

विशेष— इस गद्यांश में लेखक ने भारतीय विधवा के दुःखमय जीवन का सजीव वर्णन किया है। (२) इस गद्यांश में तत्सम शब्दों का प्रयोग किया गया है (३) उमड़ती हुई जवानी की शोण से समानता बतलाये जाने के कारण उपमा

अलंकार है। (४) सुख के साधनों को कन्टक की शय्या बतलाया गया है, अतएव विरोधाभास अलंकार है।

२. तो क्या आपने............................लेकर क्या करेंगे ?।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत गद्यांश गद्यसंकलन के श्री जयशंकर प्रसाद लिखित 'ममता' शीर्षक कहानी से उद्धृत है। इसमें लेखक ने भारतीय रमणी के स्वाभिमान का सजीव वर्णन किया है।

व्याख्या— रोहतास दुर्ग के मंत्री चूड़ामणि ने जान लिया था कि भविष्य में शेरशाह का आधिपत्य रोहतास दुर्ग पर होने वाला है। शेरशाह चूड़ामणि की इकलौती पुत्री को अपनी अंकशायिनी बनाना चाहता था। इसी उद्देश्य से उसने ममता के लिए सुवर्ण का विपुल उपहार भेजा था। चूड़ामणि ने उसे लेकर ममता के समक्ष रख दिये। सारी परिस्थिति जानकर ममता ने कहा—

पिता जी ! आपने मेरे लिए म्लेच्छ शेरशाह का उत्कोच स्वीकार किया है, यह आपने अर्थ नहीं लिया है यह अर्थ भयंकर अनर्थकारी है। इससे तो भारतीय ललना की उज्ज्वल संस्कृति पर अमिट कलंक का धब्बा लग जायेगा। आपने अपनी संस्कृति और जाति के महत्त्व को न देखकर मेरी सुरक्षा और समृद्ध भविष्य की कामना की; यही महा अनर्थ है। हम सब ब्राह्मण हैं। विपन्नता में ही जीना ब्राह्मणों का वैभव होता है। इतने सोने का हमारे यहाँ कोई उपयोग नहीं है।

विशेष— (१) इस अनुच्छेद में लेखक ने भारतीय ललना के गौरव और उसकी उदारवृत्ति का वर्णन किया है। (२) भाषा संस्कृतनिष्ठ एवं ओजस्विनी है।

३. हे भगवान् ! तब के लिए......................अंधा बना रही है।

सन्दर्भ एवं प्रसंग- प्रस्तुत अवतरण गद्यसंकलन के श्री जयशंकर प्रसाद लिखित 'ममता' शीर्षक से उद्धृत है। इस अनुच्छेद में रोहतास दुर्ग के आमात्य चूड़ामणि की युवती और विधवा पुत्री ममता के विचारों का वर्णन किया गया है।

व्याख्या- ममता अपने को भाग्य एवं परमात्मा के सहारे छोड़ देने में सन्तोष करने वाली एक भारतीय नारी है। वह जानती है कि विपत्ति में परमात्मा सबकी सहायता करता है। वह अपने पिता से कहती है कि आने वाली विपत्ति के भय से आप इतने आशंकित हैं कि आप उत्कोच के मूल्य पर मुझे म्लेच्छ के हाथों में सौंप देना चाहते हैं। मेरे सतीत्व पर धब्बा लगाने का यह उपक्रम। इसमें आपकी ममता ही प्रधान कारण है। किन्तु परमात्मा की इच्छा के विपरीत कुछ नहीं होता। अतएव ऐसा साहस आप न करें।

हो जाय शेरशाह का यहाँ आधिपत्य, किन्तु इतने मात्र से पृथिवी के समस्त हिन्दू तो नहीं विनष्ट हो जायेंगे। कोई तो बचा ही रहेगा, जो ब्राह्मण को भीख दे सकेगा। मैं परमात्मा की इच्छाओं पर अधिक आश्वस्त हूँ। आप इस समस्त उत्कोच राशि को लौटा दीजिए। इस सुवर्ण राशि की चमक मेरी आँखों को अच्छी नहीं लगती, अपितु इसकी चमक तो मेरी आँखों को दुःख दे रही है। मुझे नहीं चाहिए म्लेच्छ का यह अनर्थ भरा स्वर्ण राशि का उपहार।

विशेष— (१) इस अनुच्छेद में लेखक ने ममता के भाग्यवादी विचारों का सफल चित्रण किया है। (२) भाषा तत्सम शब्दनिष्ठ है।

४. ममता तो फिर मैं..............................करना है। तब ?

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत अनुच्छेद श्री जयशंकर प्रसाद प्रणीत गद्य संकलन के 'ममता' शीर्षक से उद्धृत है। इस अनुच्छेद में लेखक ने भारतीय संस्कृति की गरिमा और उसका एक नारी द्वारा पालन किए जाने का वर्णन किया है।

व्याख्या— चौसा के युद्ध में हुमायूँ शेरशाह से परास्त हो गया था। वह अपनी जान बचाने के लिए अश्व पर सवार होकर भगा था। दिनभर की यात्रा के पश्चात् वह काशी के मृगदाव तक पहुँच सका था, जहाँ भग्नावशेषों में ममता अपना भिक्षु जीवन व्यतीत कर रही थी। दिनभर का थका हुआ हुमायूँ अब खड़ा होने में भी असमर्थ था। उसने रातभर सोने के लिए ममता से शरण माँगा, किन्तु उसे मुगल जानकर ममता एक बार सहम गयी। उसने देखा कि यह अतिथि है। भारतीय संस्कृति की सर्वोत्तम निधि है, अतिथि सेवा। शिक्षा बल्ली कहती है- 'अतिथ देवो भव।' निस्सन्देह मुगल दया के पात्र नहीं है। आततायी शेरशाह ने मेरे पिता को मार दिया था। वह भी मुगल ही था। यह भी अपने को मुगल बतलाता है। किन्तु उसने जब यह कहा कि माँ क्या मैं यहाँ से जाऊँ, तो ममता की ममता उमड़ पड़ी उसने ईश्वर पर भरोसा किया। अपने कर्तव्य पालन को उसने सर्वोत्तम समझा। उसने निश्चित किया, अतिथि मुगल को मुझे शरण देनी ही चाहिए।

विशेष— (१) इस अनुच्छेद में 'अतिथ देवो भव' इस भारतीय संस्कृति की प्रधानतता बतलायी गयी है।

५. जाओ भीतर..............................छोड़ दूँ ?

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह गद्यांश गद्यसंकलन के श्री जयशंकर प्रसाद लिखित 'ममता' शीर्षक कहानी से संकलित है। इस गद्यांश में भारतीय नारी की आत्मा

का विशद विवेचन है।

व्याख्या— ममता जान गयी थी कि मेरे यहाँ आश्रय पाने के लिए परेशान पुरुष मुगल है। मुगलों ने मेरे पिता की हत्या कर दी थी। वे आततायी हैं। उनकी कञ्चन एवं कामिनी को पाने की हवस अपार है। उन्हें किसी प्रकार से अर्थ चाहिए। किन्तु मैं जहाँ हूँ वह तो प्राचीर है। इस भग्नावशेष को पाने का प्रयास कौन करेगा ? यह पथिक श्रान्त एवं भयभीत है। अब यह चल सकने में भी असमर्थ है। अतएव इसको रातभर विश्राम करने के लिए मुझे आश्रय अवश्यक दे देना चाहिए। उसने उस श्रान्त अतिथि से कहा- तुम थके हुए हो और भयभीत हो। तुम्हें विश्राम करना चाहिए। मैं अपने धर्म का परित्याग नहीं कर सकती हूँ। तुम कुटिया के भीतर जाओ और विश्राम करो। सब लोग भले ही अपना धर्म छोड़ दें किन्तु मेरा तो एक मात्र सहारा धर्म ही है। मैं अपने धर्म को नहीं छोड़ सकती। तुम विश्राम करो।

विशेष— (१) इस गद्यांश में ममता की भारतीय संस्कृति और धर्म के प्रति लगाव का मनोहर वर्णन किया गया है। (२)इसमें 'त्याज्यो न धर्मोऽपि विपत्ति काले।' 'धर्मो रक्षति रक्षितः' 'अतिथि देवो भव' इत्यादि भारतीय संस्कृति की सूक्तियों के सन्देश पालन के लिए दृढ़ संकल्प का निर्देश किया गया है।

६. अश्वारोही ही पास आया..........................में जाती हूँ।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत गद्यांश गद्यसंकलन के श्री जयशंकर प्रसाद लिखित 'ममता' शीर्षक से उद्धृत है। इस गद्यांश में ममता जो अपने जीवन के अंतिम क्षणों को गुजार रही थी, उसने अपने विचारों को अभिव्यक्त किया है।

व्याख्या- मुगल बादशाह हुमायूँ ने एक दिन 'ममता' की कुटिया में विश्राम प्राप्त किया था। उसने अपने मिरजा को आदेश दिया था कि बुढ़िया की कुटिया में मैंने विश्राम किया था, उसका मकान तुम बनवा देना। बहुत दिन बिता जाने के कारण अश्वारोही उस स्थान का पता नहीं लगा पा रहे थे, जहाँ पर हुमायूँ ने शरण प्राप्त की थी। अश्वारोही उस स्थान के अन्वेषण के लिए बातें कर रहे थे। ममता ने उसे बुलाया और उससे पूछा। इसके पश्चात् ममता ने अपनी अन्तिम श्वांसों को गिनते हुए कहा कि- जिस मुगल ने एक रात्रि को मेरी इस कुटिया में विश्राम किया था, मैं नहीं जानती हूँ कि वह शाहंशाह था अथवा सामान्य मुगल। किन्तु उसने एक दिन इसी झोपड़ी में निवास किया था। मैंने यह भी सुना है कि उसने मेरा घर बनवाने का आदेश दिया है। मैं जिन्दगी भर अपनी झोपड़ी

खोदवाने के भय से भयभीत रही। सोचती थी कहीं उसके अनुचर आकर मेरी इस झोंपड़ी को उजाड़ न दें और यहाँ पर मेरे लिए भवन बनवाने लगें। अब मेरी चिन्ता समाप्त हो चुकी है। मैं आज इस झोपड़ी को छोड़कर अपने चिर विश्राम गृह में जा रही हूँ। अब तुम लोग स्वतंत्र हो। अपनी मर्जी के अनुसार घर अथवा महल कुछ भी बनवा सकते हो। मेरा उससे कोई मतलब नहीं। जब तक मैं जीवित थी तब तक मेरी झोपड़ी सुरक्षित रही, यही मेरे जीवन की उपलब्धि थी।

मैं क्या लिखूँ ?

१. लिखने की एक विशेष मानसिक स्थिति..............विषय नहीं।

सन्दर्भ एवं प्रसंग– यह गद्यांश गद्यसंकलन के 'मैं क्या लिखूँ' शीर्षक से उद्धृत हैफ। इस शीर्षक के लेखक पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी' जी हैं। इस वाक्य को उन्होंने अपने निबन्धों में उदाहरण के रूप में उद्धृत किया। इन वाक्यों के मूल उद्भावक अंग्रेजी के प्रसिद्ध निबन्ध लेखक ए० जी० गार्डिनर हैं।

व्याख्या– ए० जी० गार्डिनर का मानना है कि लिखने के लिए विषयों के चयन अथवा निर्धारण की कोइ आवश्यकता नहीं होती है, अपितु आवश्यकता होती है, उस उत्साह की जिस उत्साह के उमंग में मनुष्य कुछ लिख डालने के लिए भावाविष्ट होता है। उस तरह की मानसिक स्थिति के बन जाने पर लेंखक अवश्य लिखता है और सुन्दर लिखता है। वह उस समय लेख लिखने के लिए बाध्य होता है। नहीं लिखना चाहकर भी वह रुक नहीं सकता है। वह किसी भी विषय पर लिख सकता है। वह जिस विषय पर लिखता है, उसमें अपने भावों के रंग को अवश्य भर देता है।

अपनी बात को स्पष्ट करने के लिए लेखक बतलाते हैं कि मान लिया जाय कि किसी को अपना हैट टाँगना है। उस हैट को टाँगने के लिए उसे खूँटी चाहिए। वह अपने हैट को किसी भी प्रकार खूँटी पर टाँग सकता है। हैट टाँगने के लिए किसी विशेष प्रकार की खूँटी की आवश्यकता नहीं होती। इसी तरह भावाविष्ट लेखक को अपने विचार रूपी हैट को टाँगने के लिए किसी विषय की आवश्यकता होती है। विषय कोई भी हो सकता है। विषय की प्रधानता नहीं होती है। प्रधानता होती है, विचारों की अभिव्यक्ति की। किसी भी विषय के विवेचना के माध्यम से लेखक अपने विचारों को अभिव्यक्ति कर सकता है; क्योंकि लेखक को तो अपने

मन के भावों को सबों के समझ उपस्थिति करना होता है। वास्तविकता मानसिक भावों की ही होती है, विषय की नहीं।

२. जो तरुण संसार..............................बना रहता है।

सन्दर्भ एवं प्रसंग– प्रस्तुत गद्यांश गद्यसंकलन के पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी लिखित 'मैं क्या लिखूँ' शीर्षक से उद्धृत है। इस गद्यांश में लेखक ने तरुणों एवं वृद्धों की मानसिक स्थिति की तुलना करते हुए बतला रहे हैं कि दोनों अपने वर्तमान के प्रति असन्तुष्ट रहते हैं; क्योंकि वर्तमान तो सदा सन्निकट में रहता है, उसके प्रति असन्तोष स्वाभाविक होता है।

व्याख्या– लेखक बतला रहे हैं कि यह जो कहा जाता है कि दूर के ढोल सुहावन होते हैं। इसका समन्वय सर्वत्र देखा जाता है। मानव जीवन के दो कालों का बड़ा ही महत्त्व होता है, तारुण्य काल और वार्द्धक्य काल। जीवन के ये दोनों काल परिपक्वता के काल माने जाते हैं। किन्तु इन दोनों कालों में मानव अपने वर्तमान के प्रति असन्तुष्ट रहता है। एक तरुण अपने उज्ज्वल भविष्य के प्रति लालायित रहता है। वह चाहता है कि उसका उज्ज्वल भविष्य का स्वप्न शीघ्रातिशीर्घ साकार हो जाय। वह उसकी बड़ी बेचैनी से प्रतीक्षा करता है। इस तरह एक वृद्ध पुरुष जो अपने जीवन के दीर्घकाल को व्यतीत कर चुका होता है, वह अपने अतीत की गौरवगाथा सुनाता है। उसके सुखप्रदत्व को सोच-सोच कर चाहता है, कि उसका अतीत फिर से लौट आये। इस तरह दोनों तरह के लोग अपने दूरस्थ कालीन परिस्थितियों के प्रति आश्वस्त होते हैं। वृद्ध का अतीत दूरस्थ होता है, और तरुण का भविष्य। दूरस्थ के प्रति आकर्षण मानव का स्वभाव होता है। वे दोनों अपने वर्तमान को सुधारना चाहते हैं। लेखक का कहना है कि वर्तमान हमेशा सुधार का काल होता है। समाज सुधारक इस वर्तमान को ही सुधारने का काम करते हैं। यह वर्तमान सुधारने की प्रक्रिया सुदीर्घ काल से चल रही है और सुदीर्घ काल तक चलती रहेगी। उसको सुधारने का एक मात्र उद्देश्य होता है कि वर्तमान भी उसी तरह से आकर्षक प्रतीत हो; जैसा कि भविष्य और अतीत प्रतीत होता है।

३. मनुष्य जाति के काल में कोई...........प्रगतिशील माना गया है।

सन्दर्भ एवं प्रसंग– प्रस्तुत अनुच्छेद गद्यसंकलन के 'क्या लिखू' शीर्षक से उद्धृत है। इस शीर्षक के लेखक पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी है।

व्याख्या— इस अनुच्छेद में लेखक का कहना है कि सभी कालों में सुधारों की आवश्यकता होती है। वर्तमान काल में जिस प्रचलन अथवा प्रथा को समाज दोष रूप से अनुभव करने लगता है, उसमें वह कुछ परिवर्तन करना चाहता है, अथवा उसका बिल्कुल त्याग करना चाहता है। उसके लिए समाज के कुछ प्रबुद्ध लोग आते हैं और अपने अदम्य उत्साह तथा प्रभाव के बल पर चलती आ रही पुरानी प्रथा में परिवर्तन करने के लिए समाज में एक क्रान्ति लाते हैं। तरह सती-प्रथा कभी गुण था; किन्तु कालान्तर में वही चलकर कुरीति और दोष माना जाने लगा। उसके लिए अनेक सामाजिक सुधारकों ने काम किया और उस प्रथा का समाज से उन्मूलन किया। यह समाज में सुधार दौर सुधारकों की सदा से आवश्यकता होती आयी है और होती रहेगी। इसीलिए बुद्ध, महावीर, नागार्जुन, महात्मा गाँधी ,राजा राममोहनराय आदि अनेक प्रख्यात समाज सुधारक हो चुके हैं। ये प्रख्यात सुधारक हैं। इनसे भिन्न वे सुधारक हैं जो गावों में रहते हैं, उनकी कोई प्रसिद्धि नहीं है, फिर भी वे समाज सुधर के कार्यों में सक्रिय योगदान किया करते हैं। जीवन में हमेशा नये-नये अपेक्षित सुधार भी होते रहे हैं। दोष अनन्त हैं और उन दोषो का सुधार भी अनन्त है। जब तक दोष रहेगा तब तक उनके सुधारक भी रहेंगे और उनका सुधार भी होता रहेगा। यही नहीं जो कभी सुधार कहलाता है वही कालान्तर मे दोष कहलाने लगता है और उन प्राचीन सुधारों का नवीन ढंग से पुनः सुधार होता है। यही जीवन की प्रगतिशीलता है। परिर्वतन का ही दूसरा नाम प्रगतिशीलता है।

विशेष— इस अनुच्छेद में लेखक ने यह स्पष्ट किया है कि यह संसार अनन्त है। उसके दोष भी अनन्त हैं और उन दोषों के सुधार भी अनन्त है। २. लेखक का मानना है कि कोई भी सुधार हमेशा सुधार नहीं होता है, वह कालान्तर में दोष के रूप में भी परिणत हो जाता है। ३.इस अनुच्छेद में लेखक ने यह भी बतलाया है कि सभी कालों में सुधारों की आवश्यकता होती है। कोई भी काल सुधार निरपेक्ष नहीं होता।

४. हिन्दी में.....................................सुहावन होते हैं।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत अनुच्छेद गद्य संकलन के 'मै क्या लिखूं' शीर्षक से उद्धृत है। इसके लेखक पदुमलाल, पुन्नालाल बख्शी जी हैं।

व्याख्या— इस अनुच्छेद में उन्होंने बतलाया है कि आज कल हिन्दी साहित्य की विधाओं में अनके परिवर्तन हो रहे हैं। इन परिवर्तन कर्ताओं के मन में हिन्दी

साहित्य के उज्ज्वल भविष्य के स्वर्णिम आकर्षण का व्यामोह है। वे समझते हैं कि इससे हिन्दी साहित्य का भविष्य सुधारेगा । उसका गौरव बढेगा। किन्तु उन्हें यह भी सोचना चाहिए कि कुछ दिनों के पश्चात् उन निर्माताओं द्वारा किया गया सुधार भविष्य का गौरव न रहकर अतीत का गौरव बन जायेगा। आज जो भविष्य है, कल वही वर्तमान होगा और उसके अगले दिन अतीत। किन्तु चाहे अतीत की बात हो या भविष्य की। इन दोनों का आकर्षण व्यामोह मात्र है वास्तविक नहीं।

आज जो तरुण है, वही कल वृद्ध होगा और वही अपने स्वर्णिम अतीत का स्वप्न देखेगा। अतीत के स्थान पर नवीन जो दल आयेगा वह वर्तमान-के निर्माताओं के समान भविष्य का स्वप्न देखेगा। अतीत की कल्पना और भविष्य के स्वप्न इसलिए आकर्षक होते हैं कि वे दूरस्थ हैं। दूरस्थ के आकर्षण का समर्थन यह कहावत भी करती है-दूर का ढोल सुहावन हो है।।

नर से नारायण

१. यदि वे रीतिकालीन काव्यों की..................पुलकित हुआ।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत गद्यांश गद्यसंकलन के बाबू गुलावराय लिखित 'नर से नारायण' शीर्षक से अवतीर्ण है। इसमें लेखक बतला रहे हैं कि सुखती खेती को वर्षा की कितनी उपयोगिता होती है। किन्तु लेखक का मन बादलों के सौन्दर्य के प्रति अधिक आकृष्ट है और उनकी उपयोगिता के प्रति कम।

व्याख्या— सितम्बर का महीना था वर्षा नहीं हो रही थी। किसानोंकी खेती सूखती जा रही थी। लेखक भी अपनी गाढी कमायी के बीस रुपयों को खर्च कर के चरी बो रखा था। वह अपनी सूखती हुई चरी को देखकर कभी-कभी दो चार आँसू भी बहा लेता था। आँसुओं के माध्यम से जल तो निकलता था; किन्तु उस जल का लेखक की चरी सींचने में कोई भी उपयोग नहीं हो सकता था। इस प्रसंग में लेखक को रीति कालीन कवियों के काव्यों मे आते हुए आँसुओं का प्रसंग याद आ जाता है। रीतिकालीन कवियों ने लिखा है कि श्रीकृष्ण की विरह से व्यथित गोपियों ने इतना रोया कि उससे समुद्र का सारा जल ही खारा हो गया। लेखक का कहना है कि यदि मेरे आँसू विपुल मात्रा में होते और खारे समुद्र के जल के समान खारा भी होते तो भी उनसे सिंचाई का काम संभव नही था। लेखक ने एक दिन अचानक देखा कि आसमान मे काले-काले बादल उठे हुए हैं। उन बादलों को

देखकर लेखक का मन-मयूर मत्त होकर नृत्य करने लगा। लेखक ने अनुभव कि परमात्मा ने गरीब किसानों की प्रार्थना सुन ली है। उन बादलों को देखकर संदेह होता है कि ये दिग्दाहों के धूम हैं अथवा काले-काले मेघ। वह निराश मन से सोचता कि इस वर्षा से अब क्या होने वाला है ? मेरी कृषि तो सुख चुकी है 'का बरखा जब कृषि सुखाने', किन्तु सबके बावजूद मेघों को देखकर लेखक का मन प्रसन्न था, वर्षा की नन्ही- नन्ही बूंदों के स्पर्श से उसको रोमांच होने लगा । वह बादलों की छटा निहारने के लिए घर से बाहर निकलकर घूम रहा था।

विशेष– १. समुद्र का पानी खारा हो गया। इस वाक्यांश में लेखक ने रीति कालीन काव्यों की कल्पनातिशयों की ओर संकेत किया है। उसने प्रसाद एवं कबीर की पंक्तियों की ओर भी संकेत अपने उदाहरण वाक्यों से किया है। मन मयूर मे रूपक अलंकार है। ३. इस गद्यांश मे व्यांयात्मक शैली का प्राचूर्य है। लोकोक्तियों तथा मुहावरों के प्रयोग से गद्य मे भी पद्य का सौन्दर्य दृष्टिगोचर होता है।

२. सायं काल तक..............................बनी हुई थी।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग– प्रस्तुत गद्यांश गद्यसंकलन के श्री गुलाबराय द्वारा लिखित 'नर से नारायण' शीर्षक से उद्धृत है। इसमें लेखक ने संयत तथा व्यंग्यात्मक शैली में देर से हो रही चिरकांक्षित विपुल वर्षा के दृश्य का वर्णन किया है।

व्याख्या– बहुत दिनों से अपनी सूखती खेती को देखकर किसान पानीं के लिए त्राहि- त्राहि मचाये हुए थे। अचानक ही एक दिन वर्षा होने लगी। वर्षा एवं बादल को देखकर लेखक का मन प्रसन्न था। वर्षा होते-होते शाम हो गयीं। चारो ओर की जमीन पानी से प्लावित हो गयी। सारा वातावरण रसमय हो गया था। रसमय शब्दों का प्रयोग लेखक ने दो अर्थों में किया है। आन्नदमय और जलमय। रस शब्द का अर्थ आन्नद और जल दोनों ही होता है। वर्षा चिरप्रतीक्षित थी; अत एव सब लोग प्रसन्न थे। पानी देर से पड़ रहा था। चारो ओर वर्षा का जल भर गया था। अत एव सारा दृश्य जलमय हो गया था। पानी की मात्रा को बढते हुए देखकर लोगों के मन में संभाव्य अनिष्ट की भी आशंका बढने लग गयी थी। किन्तु सायंकाल तक इतना ही पानी पड़ा था कि सब लोग उसे सुखद ही समझते थे। लेखक तो तुलसी दास की पंक्तियों को ही याद कर रहा था–

सिमिट सिमिट जल भरहिं तलावा।

जिमि सदगुन सज्जन पहिं आवा।।

वर्षा का जल उसी तरह चारो ओर से लेखक के घर के सन्निकट जमा होनें लगा था जिस तरह आधुनिक युग के बेकारों की अर्जियों से दफ्तर, प्रार्थनापत्र घर प्रतीत होने लगते हैं।

विशेष– १. इस गद्यांश में लेखक ने मुहावरेदार वाक्यों का प्रयोग किया है।

२. सिमिटि सिमिटि इत्यादि गोस्वामी जी के उद्धरण वाक्य में लोकोक्ति और उपमा लंकार का सदभाव है।

३. मै अपने तहखाने..............................उपस्थित हो गया।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग– यह गद्यांश गद्यसंकलन के श्री बाबू गुलाब राय लिखित 'नर से नारायण' शीर्षक से उद्धृत है। इस गद्यांश में लेखक ने अपने घर की झूठी प्रशंसा का वर्णन किया है।

व्याख्या– लेखक का कहना है कि उसके तहखाने में रोशनदान था। उस रोशनदान से मकान मे हवा आती जाती थी। रोशनदान के प्रकाश में बैठकर लेखक पढने-लिखने का भी काम किया करता था। कोई उसके मकान को देखने आता तो वह अपने स्वास्थ्य विज्ञान तथा अपने शान-शौकत का भी प्रदर्शन करता था। किन्तु यह सारा प्रदर्शन उसका दिखावा मात्र था। उसमें वास्तविकता बहुत कम थी; किन्तु उस दिन का दृश्य अनोखा था। पानी इतना बरसा कि तहखाने के रोशनदान से होकर पानी तहखाने मे आने लगा। इस समय लेखक की वर्षा की सौन्दर्य प्रियता समाप्त हो गयी थी। वह रोशनदान से गिरते हुए झरने के समान पानी की मोटी धार को भी वह प्रेम पूर्वक नही देख सका; क्योंकि उस समय एक बा एक बिजली भी चली गयी। लेखक का कहना है कि मैने सुना है कि कुछ लोग घर फूँक तमाशा देखते हैं। किन्तु उनको वह तमाशा देखने के लिए प्रकाश की कमी नहीं होती है। जलते हुए घर के प्रकाश मे वह तमाशा देखना चाहें तो खूब तमाशा देख ही सकता है, किन्तु लेखक के लिए तो यह भी संभव नहीं था। विद्युत् के अभाव में व्याप्त अन्धकार उपनिषद् की असूर्या नाम ते लोकाः अन्धेन तमसावृताः की सूक्ति को चरितार्थ कर रहा था। कुछ भी देंख पाना असंभव था।

विशेष– इस गद्यांश की भाषा व्यंग्यात्मक है और इसमें मुहावरों तथा उदाहरणों का प्रयोग किया गया है।

५ मनु की भांति..................................नारायण बना।।

संदर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत गद्यांश गद्यसंकलन के श्री बाबू गूलाब राय द्वारा लेखित 'नर से नारायण' शीर्षक से उद्धृत है। इस गद्यांश में लेखक ने उस प्रलयकालीन वर्षा के दृश्य के समान अपने समक्ष उपस्थित दृश्य का वर्णन किया है।

व्याख्या— सुदीर्घ काल के पश्चात् चिरप्रतीक्षित वर्षा हुई। इतनी वर्षा कि चारो ओर जल प्लावन हो गया; कोई भी स्थान खाली नहीं दिखता था। केवल पानी ही पानी दिखयी पड़ता था। चारो ओर पानी ही पानी था। घरों में पानी घुस गया था। लोग जलप्लावन की विभीषिक से त्रस्त हो गये थे। उसी समय लेखक अपने घर के चारो ओर एकत्रित जल को देखकर प्रलय काल की बेला की याद करने लगा। उसे याद आने लगी कामायनी की वह पंक्तिः—

नीचे जल था ऊपर हिम था एक सरल था एक सघन।
एक तत्त्व की ही प्रधनता कहो उसे जड़ या चेतन।।

अर्थात् प्रलय काल के पश्चात् हिमालय की ऊँची चोटी पर बैठकर अपने अश्रुपूरित नेत्रों से मनु प्रलय कालीन जल प्लावन को देख रहे थे। उनके नीचे तो प्रलय काल का चंचल समुद्र लहर रहा था ओर ऊपर हिमगिर की चोटियाँ हिमाच्छादित थीं। चाहे समुद्र का जल हो अथवा हिम दोनों में जल तत्त्व की ही प्रधानता थी। स्थिर हिम को जड़ भी कहा जा सकता है और चंचल समुद्र के जल को चेतन भी क्योंकि उसमें स्पन्दन था घोष था। चेतन में ही स्पन्दन और घोष सम्भव है।

लेखक भी आज इस जल प्लावन के दृश्य को देखकर मनु की ही मानसिक दशा को प्राप्त कर रहा था। किन्तु उसके नेत्र अश्रुपूरित नहीं थे अपितु उसमें एक करुण हँसी का सद्भाव था। वह अपने को कामायनी के मनु से भी अधिक उन्नत स्थिति में अनुभव करने लगा था। वह इस समय अपने को नारायण समझने लगा था। 'नारासु अयनं यस्य' यह नारायण शब्द की व्युत्पत्ति है। नारा शब्द जल का वाचक है। मनुस्मृतिकार ने कहा है- आपो नारा इति प्रोक्ताः।' अर्थात् नारा शब्द और आप (जल) शब्द दोनों एक ही अर्थ के बोधक हैं। भगवान को इसलिए नारायण कहते हैं कि उनका निवास स्थान सागर के भीतर है। लेखक का निवास स्थान जल के बीच मे हो गया था। अत एव उसको भी नारायण कहा जा सकता था। इसके निवास के चारो ओर पानी ही पानी भरा था। लगता था वह सागर के बीच में बसा हो।

विशेष— १- इस गद्यांश में लेखक ने प्रलय कालीन दृश्य की ओर संकेत किया है। २- वह कामायनी के मनु के जल प्लावन का संदर्भ निर्दिष्ट करता है ३-नारायण शब्द की यौगिक व्युत्पत्ति की ओर निर्देश किया है। ४- लेखक ने इस बात पर ध्यान नहीं दिया है कि नारायण शब्द में संज्ञा के ही अर्थ में पूर्वपदात संज्ञायामगः' सूत्र से'न' का 'ण' होता है। समाख्या मे न का ण नही हो सकता है। यह लेखक की एक मोटी भूल है।

भारतीय संस्कृति

१-यह केवल एक..............................ही हो जाता है।

संन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत गद्यांश गद्यसंकलन के डा० राजेन्द्र प्रसाद लिखित 'भारतीय संस्कृति' शीर्षक से उद्धृत है। इस गद्यांश मे लेखक ने भारतीय संस्कृति का निरूपण करते हुए बतलाया है कि अनेकता में एकता ही भरतीय संस्कृति का वास्तविक स्वरूप है।

व्याख्या— भारत में यदि देखा जाय तो भाषा-भाव, बोली, रहन-सहन, पहनावा, खान-पान, मौसम आदि सबों में सर्वत्र भिन्नता पायी जाती है। किन्तु यह सम्पूर्ण भिन्नता भारतीयता के नाम पर एक हो जाती है। जिस तरह भिन्न-भिन्न स्थानों से निकलने वाली नदियाँ समुद्र मे मिलकर एक हो जाती हैं, उसी तरह भारत में पाये जाने वाली समस्त विभिन्नताएँ भारतीय संस्कृति के विशाल अन्तराल में एक हो जाती हैं। भारत के भिन्न- भिन्न प्रदेश की धरती भिन्न-भिन्न प्रकार की वस्तुएँ पैदा करती है, किन्तु सर्वत्र उत्पन्न होने वाली वस्तुएँ भारतीय होती हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदि जातियों के धर्म परस्पर में अलग- अलग हो कर भी भारतीय धर्म हैं। यहां पाये जाने वाले शैव, शाक्त, वैष्णव, गाणपत्य, तथा सौर आदि सम्प्रदाय अन्ततोगत्वा भारतीय संस्कृत के अंग है। शंकर, रामानुज, बुद्ध, महावीर, दयानन्द आदि अपनी भिन्न-भिन्न अवधरणाओं को अभिव्यक्त करने वाले महान् विचारक भारतीय संस्कृति के देदीप्यमान रत्न हैं। भरतीय संस्कृति वह सुवर्ण तन्तु है, जो विभिन्न मणियों की अथवा विभिन्न पुष्पों की मनोज्ञ माला बनाती है। भारतीय संस्कृति भी एक माला के समान है जिसमें सभी पुष्पों की अलग-अलग सत्ता बरकरार रहकर भी समवेत सत्ता की महत्ता होती है। यह कोई काव्य की कल्पना नहीं है, अपितु ऐतिहासिक सत्य है।

२. जिन हालातों में..............................अधिक व्यापक है।

संन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत गद्यांश गद्यसंकलन के डॉ० राजेन्द्र प्रसाद लिखित 'भारतीय संस्कृति' शीर्षक से उद्धृत है। इस गद्यांश में लेखक ने भरतीय संस्कृति की सुदृढता का वर्णन किया है।

व्याख्या— भारतीय संस्कृति अत्यन्त प्रचीन संस्कृति है। इसने अपने अच्छे बुरे सब प्रकार के दिनों को देखा है। इसको विनष्ट करने के लिए अनेक प्रकार के प्रयास किए गये, किन्तु यह सुरक्षित रही । भारत में अनेक विदेशी प्रशासक आए। शक, हूण, मुगल, अंग्रेज आदि और सबों ने इस संस्कृति का समूलोन्मूलन करने का यथाशक्य प्रयास किया, किन्तु यह ज्यों की त्यों बनी रही। जिस बुरी परिस्थित में पड़कर संसार की संस्कृतियाँ विनष्ट हो गयीं उस परिस्थिति में भी पड़कर यह संस्कृति समुद्र के समान अक्षोभ्य और हिमालय के समान अडिग बनी रही। यहाँ के लोगों की धार्मिक, राजनैतिक, तथा वैचारिक सहिष्णुता के भाव बने रहे। यहाँ की सारी जातियाँ पूर्ववत् बनी रहीं और सबों का अपना गौरव भी सुरक्षित रहा।

लेखक का मानना है कि भारतीय संस्कृति की उस सुदृढ़ता का रहस्य है कि यह संस्कृति सामूहिक चेतना एवं नैतिकता के आधार पर टिकी हुई है। अनेक प्रकार की भिन्नता के पश्चात् भी भारत की समस्त जातियाँ, उनके व्यवहार, विचार,बोली, भाषा, मौसम, ऋतुएँ, नदियाँ, पर्वत आदि समस्त पदार्थ भारतीय हैं। भारतीय संस्कृति के धरोहर हैं, और इन सबों का समुचित संरक्षण प्रत्येक प्रवुद्ध भारतीय का कर्त्तव्य है। यही भावना इस संस्कृति को सुदृढ बनाये रखने में समर्थ रही है।।

चिर तारुण्य की साधना

१. खेल मे हम समभाव..............................होना चाहिए।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत गद्यांश गद्यसंकलन के 'विनोवा भावे' लिखित 'चिरतारुण्य की साधना' शीर्षक से उद्धृत है। इस गद्यांश में लेखक बतलाते हैं कि खेलों के अनेक उद्देश्य हैं। उनमें समभाव का स्थान प्रथम है।

व्याख्या— प्रायः सर्वत्र लोग खेल खेला करते हैं। उन खेलों का उद्देश्य शरीर को बलिष्ठ बनाना मात्र नहीं है। यह तो एक सामान्य उददेश्य है। इससे भिन्न ही

इसके विशेष उद्‌देश्य हैं। वे हैं समभाव, शिष्टता इत्यादि। खेल मे ऊँच, तथा नीच जातियों के भी बच्चे आते हैं। खेल के मैदान में न तो कोई ऊँच होता है और न तो कोई नीच, न तो कोई धनी होता है और न तो कोई गरीब। न कोई स्पृश्य होता है और न तो कोई अस्पृश्य। सबों के प्रति सबों का समान भाव होता है। सब के सब एक अनुशासन में रहकर खेल खेलते हैं। लेखक का मानना है कि खेल की कोई गणना नहीं है। यदि खेल उत्पादक बन जाये तो वह उन खेलों से अच्छा है जो खेल केवल मनोरंजक होता है। एक खेल है खेत खोदने का खेल। इसे कोई खेल नहीं मानता है। किन्तु दस लोग मिलकर खेत खोदें और सबों की कुदालियाँ एक साथ ऊपर उठें और एक साथ जमीन में घुसें तो वह कितना सुन्दर दृश्य होगा ? यह खेल मनोरंजक उत्पादक दोनों हो सकता है। इसमें बुद्धि का भी प्रयोग हो सकता है। अत एव यह खेल अन्य खेलों की अपेक्षा अधिक उपयोगी होगा। इसमें बल, बुद्धि, मनोरंजन और उत्पादन सबों का सन्निवेश होगा।

विशेष— इस अनुच्छेद मे बिनोवा भावे ने खेल का उद्‌देश्य समभाव और अनुशासन की भावना को बतलाया है।

२. उन्होंने कहा कि खेल का उद्‌देश्य केवल बल की ही वृद्धि नहीं, अपितु उत्पादन की भी वृद्धि होनी चाहिए।

३. इस अनुच्छेद की भाषा सरल एवं सुबोध है। ४. इस निबन्ध की शैली प्रवचनात्मक है।

२. यहाँ के खेलों..............................सहकारिता बढेगी।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत गद्यांश गद्यसंकलन के 'चिर तारुण्य की साधना' शीर्षक से उद्‌धृत है। इस शीर्षक के लेखक आचार्य 'बिनोवा भावे' हैं। इस गद्यांश में लेखक ने खेलों से होने वाले वैयक्तिक एवं सामाजिक लाभों का निर्देश किया है।

व्याख्या— इस अनुच्छेद में आचार्य बिनोवा भावे ने खेल प्रेमियों को बताया है कि खेल से तुम लोगों को दूहरा लाभ होगा। तुम्हारी शक्ति की वृद्धि होगी और तुम लोगों में परस्पर में प्रेम भी बढ़ेगा। जब सब तरह के सभी जातियों के लड़के एक साथ जुट कर खेल खेलते हैं तो इससे परस्पर में प्रेम का विकास होता है। भविष्य में तुम जब कभी भी एकत्र होओगे तो याद करोगे कि हम लोग एक साथ पढ़े थे, कुस्ती लड़े थे, शक्ति का अर्जन किए थे, इत्यादि- इत्यादि। इसी भावना के कारण तुम लोग एकत्रित होने का प्रयास करोगे और एक साथ मिलकर किसी भी काम को करने का प्रयास करोगे। इस तरह से तुम सबों के बीच सहकारिता की

भावना बढेगी। किसी भी कार्य को तुम सब लोग मिलकर करने का प्रयास करोगे। जानते हो संघ में बहुत बड़ी शक्ति होती है।

विशेष— इस अनुच्छेद मे आचार्य बिनोवा भावे ने बतलाया है कि एक साथ खेलने वालों का कभी संघ बन जाता है। वे बड़ी ही आसानी से किसी भी कार्य को कर डालने में समर्थ होते हैं। २. इस अनुच्छेद की भाषा सरल एवं सुबोध है तथा शैली प्रवचनात्मक है।

३. शरीर स्वच्छ रखो उसी प्रकार..........चिरतारुण हैं चिरंजीव हैं।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— यह गद्यांश गद्यसंकलन के श्री बिनोवा भावे लिखित **'चिरतारुण्य की साधना'** शीर्षक से लिया गया है।

व्याख्या— इस अनुच्छेद में लेखक बतलाते हैं कि खेलने वाले के शरीर एवं मन दोनों को निर्मल रखना होगा। खेल एक बाह्य क्रिया है, इसके द्वारा तो बाह्य शुचिता आती है। अत एव खेल के द्वारा शरीर निर्मल होता है। मन को निर्मल बनाने के लिए उपासना की आवश्यकता होती है। उपासना से आभ्यंतरिक शुचिता आती है। अत एव प्रत्येक खेल प्रेमी को आन्तर्बाह्य शुचि होना चाहिए। उदाहरण के लिए हनुमान जी को लेखक ने बतलाया। प्रत्येक अखाड़े पर खेल प्रेमी हनुमान जी की मूर्ति रखते हैं। क्यों ? इसलिए कि हनुमान जी खेल प्रेमी होने के कारण बलवान् हैं। वे साथ ही भक्तिमान् हैं। वे सदा अपने सेव्य की सेवा में तत्पर रहते हैं। तुम को भी भक्तिमान बलवान तथा सेवापरायण होना होगा। सेवा के लिए चपलता आवश्यक है। आलसी मनुष्य कभी सेवा नहीं कर सकता । जिस समय तुम्हारा मन किसी काम को सम्पादित करने के लिए सोचे उसके साथ ही उस कार्य को सम्पादित करने के लिए तुम्हारे शरीर को भी चंचल हो जाना चाहिए। शरीर में चपलता का सद्भाव बने रहना ही तारुण्य कहलाता है। यदि तरुण होकर भी तुम में आलस्य है, तो तुम तरुण्य नहीं बूढ़े हो तुम। सेवा करने लायक नहीं हो।

जिस मनुष्य के शरीर में वेग होता है; वही तरुण होता है। अवस्था से कुछ नहीं होता। यदि वृद्ध शरीर में भी वेग है तो वह वृद्ध व्यक्ति भी तरुण है। हनुमानजी को चिरंजीवी माना जाता है। उनके शरीर में आलस्य का नामो निशान भी नहीं था, हनुमान जी की आराधना करने वाले समस्त खेल प्रेमियों को चिर तरुण बनना होगा। वे चिरंजीव बनें यह आवश्यक है।

विशेष— इस अनुच्छेद में लेखक ने बतलाया है कि (१) जिस शरीर मे वेग है वही तरुण है, चाहे वह अवस्था से वृद्ध क्यों न हो। २. इस अनुच्छेद की भाषा

सरल एवं सुबोध है। (३) शैली प्रवचनात्मक है। ४. अपने कथन को स्पष्ट करने के लिए उदाहरण का सहारा लिया गया है।

गुरु नानक देव

१. गुरुनानक ने प्रेम.............................परम लक्ष्य है।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत पंक्तियाँ गद्यसंकलन के आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी लिखित 'गुरु नानकदेव' शीर्षक से लिया गया है। इस शीर्षक में आचार्य द्विवेदी ने बतलाया है कि गुरु नानक देव ने सम्पूर्ण जनजीवन को प्रेम का सन्देश दिया है।

व्याख्या— लेखक बतलाते हैं कि गुरु नानक देव परमात्मा के पूर्ण प्रेम मे मदमस्त रहने वाले एक सन्त थे। उन्होनें गुरुवाणी के माध्यम से जनता को प्रेम का संदेश दिया है। मानव जीवन के परम प्राप्य परमात्मा को स्वीकार किया जाता है। वह परमात्मा भी प्रेम स्वरूप है। जिससे वह प्रेम करता है, उसका जीवन धन्य हो जाता है। परमात्मा का स्वभाव प्रेम है, वह स्वभावतः अपने भक्तों से प्रेम करता है। शास्त्रों में परमात्मा की प्राप्ति के अनेक साधन बतलाये गये हैं, किन्तु वास्तविकता है कि परमात्मा को प्राप्त करने का सर्वोत्तम साधन प्रेम है। मीरा ने प्रेम के ही द्वारा परमात्मा को अपना चाकर बना लिया था। प्रेम के ही द्वारा गोपियों ने श्री कृष्ण को प्राप्त किया था। उपनिषदों की श्रुतियाँ भी कहती हैं- **'यमेवैष वृणुते तेन लभ्यः।'** किसी ने कहा भी है कि; **'परम प्रेम के पाले पड़कर प्रभु को नियम बदलते देखा'** जब मनुष्य परमात्मा से सच्चा प्रेम करने लगता है, तब उसके अन्तः करण के मल, मान, अभिमान आदि नष्ट हो जाते हैं। जब तक मनुष्य अहंकार की भावना से ग्रस्त रहता है; तब तक उसकी छोटाई बनी रहती है। निरभिमानी मनुष्य सर्वोच्च हो जाता है। वह सबों के ऊपर परमात्मा को प्राप्त करने की स्थिति में पहुँच जाता है। प्रेम की सच्ची साधना करने वाले को ही शिवत्त्व की प्राप्ति होती है। वह परम मंगलमय हो जाता है। उसी सच्चे प्रेम की साधना मानव-जीवन का परम लक्ष्य है।

विशेष— इन पंक्तियों में आचार्य द्विवेदी जी ने (१) सच्चे प्रेम को ही मानव जीवन का सर्वस्व बतलाया है। २. उन्होंने बतलाया है कि सच्ची प्रेम की साधना करने वाले के जीवन में अहंकार की कोई भी भूमिका नही होती है। ३. इन

पंक्तियों की भाषा संस्कृतनिष्ठ है। ४. आचार्य शैली के माध्यम से अपने कथ्य को स्पष्ट किया गया है।

२. बाह्य आडम्बरों को.........................बन्धन के हेतु हैं।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत पंक्तियाँ गद्यसंकलन के आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी लिखित **'गुरूनानक देव'** शीर्षक से उद्धृत है।

व्याख्या— इन पंक्तियों में लेखक ने बतलाया है कि सामान्य रूप से मनुष्य धर्माभासों को धर्म मानने लगता है। उसे उन धर्माभासों का त्याग करके वास्तविक धर्म को अपनाने की आवश्यकता है। बहुत से लोग धर्माडम्वरों को ही धर्म मान लेते हैं। वे अपने मूल संस्कारो में ही आस्था रखकर ब्राह्मण-धर्म, क्षत्रिय-धर्म, वैष्णव-धर्म, शैव-धर्म, शाक्त-धर्म इत्यादि को धर्म मानने लगते हैं, किन्तु वास्तविकता यह है कि ये सब के सब धर्माभास अथवा प्राथमिक धर्म है। इन सबों के ऊपर है प्रेम धर्म। सबों से प्रेम, सबों में परमात्मकता की प्रतीति। **'वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः'**। सम्पूर्ण जगत में वही परमात्मा व्याप्त है, जो मेरी परम आत्मा है। 'श्रुति कहती है— **'यस्यात्मा शरीरम्'** आत्मा भी परमात्मा का शरीर है और परमात्मा उस आत्मा की भी आत्मा है, इसीलिए वह परम आत्मा कहलाता है। वह सबों के भीतर विराजमान है। गोस्वामी तुलसी दास ने कहा- **'सब मँह प्रभु देखत फिरऊँ कासन करऊँ विरोध।'** किसी से भी विरोध नहीं सबों से प्रेम करना, यही परम धर्म है। प्रेम के ही माध्यम से मनुष्य परमात्मा की शरण प्राप्ति का अधिकारी होता है।

अतएव गुरु नानक देव ने गुरुग्रन्थ साहब के माध्यम से सबों को प्रेम का सन्देश दिया है। उन्होंने कहा है कि अपने इस मिथ्याभिमान का त्याग करो। इससे तुम्हें मुक्ति नही मिल सकती। यह तो बन्धन का साधन है। यदि मुक्त होना है तो अभिमान का त्याग करो। निरभिमानी बनो। सबों का सुहृद् बनो। परमात्मा भी सबों का सुहृद् है। ऐसा करके तुम संसार के बन्धनों से मुक्त हो जाओगे। तुम्हें शाश्वत शान्ति की प्राप्ति हो जायेगी। उसे ही मुक्ति कहते हैं।

३.भगवान जब अनुग्रह.................................कहते है।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत पंक्तियाँ गद्यसंकलन के **'गुरुनानक देव'** शीर्षक से उद्धृत हैं। इन पंक्तियों के लेखक आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी हैं। इस अनुच्छेद में लेखक बतला रहे हैं कि परमात्मा की कृपा से संसार में महापुरुषों का अवतार होता है।

व्याख्या— लेखक कह रहे हैं कि परमात्मा को जब संसारी जीवों पर कृपा करनी होती है तो वे अपनी दिव्य ज्योति को गुरुनानक जैसे सन्तों में उतार देते हैं। परमात्मा की दिव्य ज्योति जब संसार में अवतीर्ण हो जाती है; तो वह चुपचाप शान्त नहीं बैठती है । वह उन जीवों को भी परमात्मा के अनुग्रह योग्य बनना शुरू करती है। जो जीव संसार की वासना मे लिप्त रहते हैं। सांसारी जीव परमात्मा के अनुग्रह के योग्य स्वयम् नहीं होते, परमात्मा की दिव्य ज्योति तो स्वयम् इस संसार में नीचे उतरती है और वह संसार के जीवों के ऊपर उठाने का काम करती है। उनके जीवन को समुन्नत बनाती है। परमात्मा की इस दिव्य ज्योति के अवतीर्ण होने और सांसारिक जीवों के जीवन समुन्नयन की प्रक्रिया को परिभाषित करते हुए लेखक कहते हैं कि एक ओर तो परमात्मा की दिव्य ज्योति का सन्तों के रूप में अवतार होता है और दूसरी ओर सांसारी जीवों का उद्धार होता है। लेखक कहते हैं कि अवतार एवं उद्धार की यह लीला परमात्मा के प्रेम को संकेतित करती है। परमात्मा अपनी अहैतुकी कृपा जीव पर जब करते हैं तो वह संसार में सन्तो को अवतीर्ण करते हैं। इसी लीला को पुराने भक्तजन अनुग्रह कहते हैं।

विशेष— इस अनुच्छेद में लेखक ने बतलाया है कि जब परमात्मा जीवों पर अनुग्रह करता है तब वह अपने दिव्य ज्योति से सम्पन्न सन्तों को अवतीर्ण करता है। २. इस अनुच्छेद की भाषा संस्कृतनिष्ठ है और शैली शास्त्रीय है।

गिल्लू

१. सोनजुही में आज .... प्राणी की खोज।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत पंक्तियाँ गद्यसंकलन के 'गिल्लू' शीर्षक से ली गयी हैं। इस शीर्षक के लेखक महादेवी वर्मा जी हैं। इस शीर्षक में उन्होंने एक गिलहरी का रेखाचित्र खींचा है।

व्याख्या— लेखिका के उद्यान में सोनजुही की लता लगी हुई है। उस लता को देखकर लेखिका को एक छोटे प्राणी की याद आ जाती है। वह छोटा प्राणी गिल्लू था। जब गिल्लू जीवित था, उस समय लेखिका को सोनजुही की कली की खोज रहती थी, किन्तु आज लेखिका ने सोनजुही की कली को देखा तो उसे उस अतीत कालिक गिल्लू की याद आ गयी। वह गिल्लू इस सोनजुही की हरितिमा में

छिपकर बैठता था और जब लेखिका उस लता के पास पहुँचती थी तो वह दौड़कर लेखिका के कन्धों पर चढ जाता था। लेखिका ने सोनजुही की कली को अवश्य देखा है, किन्तु आज वह उस कली को नहीं खोज रही है, वह उस गिल्लू नामक अत्यन्त लघु प्राणी को खोज रही है।।

अचानक एक दिन..................................अवमानित।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत पंक्तियाँ गद्यसंकलन के 'गिल्लू' शीर्षक से अवतीर्ण हैं। इस शीर्षक की लेखिका श्री महादेवी वर्मा जी हैं।

व्याख्या— एक दिन लेखिका जब अपने कमरे से निकल कर बरामदे में आयी तो उसने दो कौओं को देखा। ये कौए गमले के चारो ओर अपनी चोंचों से छुवा-छुवौल जैसा कुछ खेल खेल रहे थे। उन कौओं को देखकर लेखिका का विचार शील मन काकत्व के विवेचन में व्यस्त हो गया। उन्होंने कौओं को काग भुसुण्डी शब्द से अभिहित किया। लेखिका ने सोचा यह काक भी एक विचित्र प्राणी है। किसी समय इसका सम्मान होता है तो कभी अपमान भी। यह समादर का भी पात्र बनता है और अनादर का भी। इस तरह इसमें परस्पर विरोधी गुण हैं। पितृपक्ष के समय लोग क़ौआ का समादर करते हैं; किन्तु जब अनुचित समय में उसकी कांव- कांव की कर्कश वाणी सुनायी देती है तो लोग उसको भगाना चाहते हैं। उसका अनादर और अपमान करते हैं।

३. हमारे बेचारे पुरुखे..............................प्रयुक्त करते हैं।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत पंक्तियाँ गद्यसंकलन के 'गिल्लू' शीर्षक से ली गयी है। इस शीर्षक की लेखिका श्रीमती महादेवी वर्मा जी हैं। इन पंक्तियों में लेखिका काक पक्षी के विषय मे चर्चा कर रही हैं।

व्याख्या— लेखिका अपने कमरे से निकलकर बरामदे आयी। उसने दो पिशिताशी काक पक्षियों को कुछ क्रीड़ा करते देखा और उसका मन काक तत्व के विवेचन में व्यस्त हो गया। उसे याद आ गयी पितृपक्ष की। पितृपक्ष में लोग काक बलि दिया करते हैं। लेखिका ने सुन रखा है कि पितृपक्ष में मनुष्यों के पितृगण कौओं का रूप धारण करके आते हैं। लेखिका कहती है कि पक्षी तो अनेक है। गरुड, मयूर हंस, आदि। किन्तु पितृगण इन रूपों में न आकर काक पक्षी के रूप में काक बलि स्वीकार करने के लिए आते हैं। अत एव काकों का यह रूप समादर के योग्य होता है। यही नहीं ऐसा भी माना जाता है; कि कौए अपनी कर्कश वाणी से ही हमारे प्रिय व्यक्तियों के आने का शुभ सन्देश देता है। ये तो कौओं के सम्माननीय रूप और

अवसर हैं; किन्तु कौओं की कर्कश कावँ-कावँ की ध्वनि का तो हमलोग अपमान ही करते हैं। अतएव कौऐ समादृत भी होते हैं और अनादृत भी।

नींव की ईंट

१. देश का शायद..................................ध्यान देना

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत पंक्तियाँ गद्यसंकलन के श्री राम वृक्ष वेनी पुरी लिखित 'नीव की ईंट' से उद्धृत है। इस गद्यांश में लेखक ने स्पष्ट किया है कि हम प्रायः देश के उन लोगों को देखते हैं जिनकी प्रख्याति हो गयी है; किन्तु जिन लोगों का सर्वधिक योगदान है देश के आजाद कराने में वे लोग अनाम ही चले गये। आज उनको कोई जानता भी नहीं। हमें उनकी भी खोज करनी चाहिए उनके भी प्रयास को प्रकाशित करना हमारा परम कर्तव्य है।

व्याख्या— जिस तरह कोई भी भवन अपनी नीव के ईंटों पर टिका हुआ होता है। उन ईटों के बल पर जो ईंट सर्वाधिक बलवान होते हैं। जिन ईंटों को कोई देख भी नहीं पाता और जिन ईंटों की कोई सराहना नहीं करता। लोग तो भवन की भव्यता की सराहना करते हैं उसकी चमक - दमक को देखते रह जाते हैं। उसी तरह इस देश को स्वतंत्र होने में उन लोगों का सर्वाधिक योगदान समझना चाहिए जो लोग आजादी की लड़ाई में अपना बलिदान कर दिये। वे लोग उन दधीचि के समान हैं; जिन्होंने देवासुर संग्राम में अपनी हड्डियों तक का दान कर दिया। स्वयं का बलिदान कर दिया,स्वर्ग की सत्ता सुख की देखने तक की भी लालसा नहीं की। परोपकार ही जिनके जीवन का सर्वस्व था। यदि उस दधीचि की हड्डी का वज्र नहीं बनता तो इन्द्र किसी भी हालत मे वृत्रासुर का वध नहीं कर पाते; किन्तु इतिहासकारों ने इन्द्र को ही वुत्रासुर का विनाशक बतलाया। दधीचि की उपेक्षा कर दी।

इसी तरह इस विशल भारत वर्ष की आजादी की लड़ाई में उन लोगों ने ही सब कुछ नही किया है। जिन लोगों का इतिहास में अंकित है। दो दिन भी जेल जाकर स्वतंत्रता सेनानी कहलाने लगे उनसे अधिक योगदान तो उन हुतात्माओं का है जो विना किसी लालच के, केवल देश की स्वतंत्रता के लिए विदेशी वृत्रासुर से अपने देश को आजाद कराने के लिए मिट गए। ऐसे दधीचियों की संख्या असंख्य है, जो देश के कोने कोने से अपना निष्काम उत्सर्ग कर दिये जिनकी कोई

चर्चा भी नहीं करता, जिन्हें हम देख भी नहीं सके। किन्तु यदि हम सचमुच देशभक्त हैं तो उन लोगों का हमें अन्वेषण करना चाहिए। हमें सत्य की गवेषणा करनी होगीऔर ऐसे बलिदानियों के नाम और काम को सबों के समक्ष प्रकाशित करना होगा।

स्मृति

१. दृढ़ संकल्प से.................................पर निर्भर है।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग– ये पंक्तियाँ गद्यसंकलन के 'श्री राम शर्मा' द्वारा लिखित 'स्मृति' शीर्षक से ली गयी है। इस गद्यांश में लेखक बतलाते हैं कि जब व्यक्ति किसी काम को करने के लिए दृढ संकल्प कर लेता है; तो वह बड़ी आसानी से बड़ा से बड़ा भी काम कर डालता है। आवश्यकता होती है उसके दृढ संकल्प की और दुविधा राहित्य की।

व्याख्या– इन पंक्तियो में लेखक अपने उन दिनों की चर्चा कर रहे हैं जब कि वे छोटे थे। अपने बड़े भाई के पत्रों को दूसरे गाँव में छोड़ने जाते समय बाल सुलभ चपलता के कारण उनकी चिट्ठियाँ उस कुएँ में गिर गयी जिसमें भयंकर विषैला साँप पड़ा था। पहले तो लेखक किंकर्तव्यविमूढ़ हो गये और अपने छोटे भाई के साथ रो रहे थे, फिर उन्होंने दृढ़ निश्चय किया कि वे कुएँ में घुसकर पहले साँप को मार देंगे और चिट्ठियाँ निकाल लायेंगे।

इस दृढ संकल्प के कारण लेखक की दुविधा समाप्त हो गयी। उनका वह भयंकर निश्चय काल से जूझने के समान था। कुएँ मे घुसकर साँप को मार कर चिट्ठियों को निकाल लाने का निश्चय। लेखक का कहना है कि यदि कोई यह निश्चय कर ले कि मुझे इस काम को करना ही है; चाहे इसके लिए मुझे मरना ही क्यों न पड़े तो ऐसा निश्चय करने वाला व्यक्ति बड़ा से बड़ा कार्य करने में सफल होता है। उसे मौत का भय नहीं सता पाता है। उसे अपने काम की धुन होती है। इस तरह का निश्चय चाहे मूर्खता पूर्ण हो अथवा बुद्धिमानी पूर्वक, किन्तु दृढ़ निश्चय कर्ता को यह समस्त संशयों से रहित बनाकर उसे सफलता के मार्ग पर चलने के लिए मार्ग प्रशस्त अवश्य कर देता है।

अब प्रश्न यह आता है कि साहसिक कार्यों में किये गये निश्चयों का परिणाम भयंकर भी हो सकता है। उसे विफलता भी मिल सकती है। तो उसके उत्तर में

लेखक का कहना है कि फल तो अपने हाथ में है नही। फल तो किसी दूसरी शक्ति के हाथ में होता है। गीता मे भगवान् ने कहा कि–

कर्मण्येवाधिकारस्ते, मा फलेषु कदाचन।

तुम्हारा कर्म करने में अधिकार है। दृढ निश्चय करके सफलता प्राप्ति के लिए कर्म करो, फल मिलना और नही मिलना तो परमात्मा के हाथ में है। फल प्राप्ति पर तुम्हारा अधिकार नहीं है।

आँखें चार हुई..............................आकाशकुसुम था।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग– प्रस्तुत पंक्तियाँ गद्यसंकलन के 'स्मृति' शीर्षक से ली गयी हैं। इस शीर्षक के लेखक श्री राम शर्मा जी हैं।

व्याख्या– लेखक अपने भाई को विश्वास दिलाकर कुएँ में घुसे थे कि कुएँ में पहुँचते ही वे पहले साँप को मार देंगे और उसके बाद चिट्ठियाँ उठा लेंगे। किन्तु कुएँ में जाकर उन्होंने उस भयंकर विषैले साँप को देखा तो किंकर्तव्यविमूढ़ रह गये। उस कच्चे कुएँ के अन्दर न तो लाठी घुमाई जा सकती थी न तो सर्प से अधिक दूर रहा जा सकता था क्योंकि वहाँ जगह बहुत कम थी। किसी तरह से लेखक कुएँ में उतर गये और साँप ने अपने दुश्मन लेखक को देखा ओर लेखक ने सर्प को दोनों एक दूसरे को देख रहे थे।

लेखक कहते हैं कि साँप को चक्षुःश्रवा कहते हैं। इसलिए कि वह आँख से ही सुनने का भी काम करता है, उसके कान नहीं होते। लेखक कहते हैं कि वे भी उस समय चक्षुःश्रवा हो गये थे। समस्त कार्यों को चक्षुरिन्द्रिय ही कर रही थी। अन्य इन्द्रियों की भी उनकी आँखों को सहानुभूति पूर्वक शक्ति प्राप्त हो गयी थी। लेखक बड़ी ही सावधनी से सर्प के फन की ओर देख रहे थे कि वह किस ओर आक्रमण करता है। किन्तु सर्प संभवतः लेखक के आक्रमण की प्रतीक्षा कर रहा था; उसने पहले आक्रमण नहीं किया।

सब कुछ के बावजूद लेखक की आशा पर मानो पानी फिरने वाला था। साँप को कुएँ के भीतर मारना अत्यन्त कठिन कार्य था।

विशेषता– लेखक ने सर्प को चक्षुःश्रवा बतलाकर उसके आँखों से ही सुनने की बात बतलायी है। २. आकाशकुसुम जैसे मुहावरेदार वाक्यों का प्रयोग किया गया है।

निष्ठामूर्ति कस्तूरबा

१. शुद्ध और रोचक..............................सुना देतीं।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत पक्तियाँ गद्यसंकलन के काका कालेलकर लिखित 'निष्ठामूर्ति कस्तूर बा' शीर्षक से उद्धृत है। इस शीर्षक में लेखक ने राष्ट्र पिता महात्मा गाँधी की पत्नी की कर्तव्यनिष्ठा की चर्चा कुछ संस्मरणों के माध्यम से की है।

व्याख्या— लेखक का मानना है कि जगत् में सफल जीवन जीने के दो साधन हैं, शब्दज्ञान और कर्तव्यनिष्ठा। बहुत अधिक विद्वान् व्यक्ति शब्द शास्त्र में पारंगत हो सकता है, किन्तु कर्तव्यनिष्ठा में बहुत अधिक वैदुष्य अर्जन की अनिवार्यता नहीं होती है। उपनिषद् में भी कहा गया है— 'क्रियावान् ब्रह्मविदा वरिष्ठः' अर्थात् अनुष्ठान परायण पुरुष ही सर्वश्रेष्ठ ब्रह्मज्ञानी होता है। केवल सिद्धान्त बघारने अथवा पर उपदेश कुशल होने मात्र से मनुष्य समाज को बहुत कुछ नही दे पाता है। साहित्य का अम्बार कर्तव्य परायणता के समक्ष फीका होता है। शास्त्रीय ज्ञान सम्पन्न व्यक्तियों को कर्त्तव्य का निश्चय नही होता है। उन्हें सन्देह ही बना रहता है। किन्तु कर्तव्य परायण व्यक्ति को इस प्रकार की विचिकित्सा नहीं सताती है। कस्तूर बा को अपने कर्तव्य का ठीक-ठीक ज्ञान था। वे एक कर्तव्यपरायण महिला थीं। किसी भी चर्चा में तथा किसी भी कार्य के सम्पादन के प्रश्न पर अपने संक्षिप्ततम निर्णय में वे यही कहती थीं 'मुझसे इतना ही होगा' इतना काम नहीं होगा। किन्तु उनका यह जो निर्णय होता था- ध्रुव होता था, उसमें प्रायः कोई कमीवेशी नहीं होती थी।

विशेष— १- इन पंक्तियों में लेखक ने शास्त्रीय ज्ञान की अपेक्षा कर्तव्यनिष्ठा को अधिक महत्त्व दिया है।

२. उन्होंने बतलाया कि केवल ज्ञानी का संदेह, निवृत नहीं होता और कर्तव्यनिष्ठ को संदेह होता ही नहीं है।

३. इन पंक्तियो की भाषा सरल एवं सुबोध है। आबदार उर्दू के शब्द प्रयुक्त हैं।

२. वह भले ही..............................कर लेती थीं।।

संन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत पंक्तियाँ गद्यसंकलन के काका कालेलकर लिखित 'निष्ठामूर्ति कस्तूर बा' से लिया गया है। इन पंक्तियों में लेखक ने कस्तूरबा की बुद्धि की तीव्रता की चर्चा की है।

व्याख्या— लेखक बतला रहें हैं कि कस्तूरबा बहुत कम पढ़ी लिखी महिला

थीं उनकी शिक्षा-दीक्षा नहीं के बराबर थी, किन्तु उनके संस्कार और खानदानी असर अत्यन्त प्रबल थे। उनमें लोकोत्तर प्रतिभा थी। कभी भी किसी संस्थान को चलाने की महत्वकांक्षा उनमें उदित ही नहीं हुई। इतना होने पर भी वे देश के भीतर कहाँ पर क्या हो रहा है। कैसे हो रहा है इस बात तक की जानकारी वे प्राप्त ही कर लेती थीं। इस जानकारी के लिए वे दो प्रकार के साधनों को प्रायः अपनाती थीं। (१) लोगों से बार बार प्रश्न पूछ कर जानना और (२) अखबार के पन्नों को पढ़कर जानना। इन दोनों माध्यम से वे देश की सूक्ष्म से सूक्ष्म गतिविधि । को बडी आसानी से जान लेती थीं।

विशेषता— इन पंक्तियों में लेखक ने देश के भीतर घटने वाली घटना की जानकारी के लिए कस्तूरबा द्वारा अपनाये जाने वाले दो साधनों की चर्चा की है। इन पंक्तियों की भाषा सरल एवं सुबोध है।

३. अध्यक्षीयभाषण किसी........................सिद्ध होता था।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत पंक्तियाँ गद्यसंकलन के काका कालेलकर लिखित **'निष्ठामूर्ति कस्तूर बा'** शीर्षक से ली गयी हैं। इन पंक्तियों में कस्तूर बा के द्वारा किसी भी परिषद के उपसंहार भाषण की निपुणता की चर्चा की गयी है।

व्याख्या— कस्तूर बा एक अशिक्षित महिला थीं, वे गाँधी जी की धर्मपत्नी थीं। इसलिए जब कभी गाँधी जी जेल में होते थे उस समय कुछ प रिषदों की अध्यक्षता कस्तूरबा को ही करना पड़ता था। अपना अध्यक्षीय भाषण तो प्रायः दूसरों से वे लिखवा लेती थीं, किन्तु भाषण का उपसंहार जो भाषण का सर्वस्व होता है; उसे तो वे स्वयं ही करती थीं। किसी भी भाषण कर्त्ता को भाषण का उपसंहार अपने प्रत्युत्पन्नमतित्त्व पर निर्भर करता है। कस्तूरबा भी अपने अध्यक्षी भाषण का उपसंहार अपने प्रत्युत्पन्नमत्ति के बल पर करती थीं। उस समय उनकी भाषण की भाषा अत्यन्त सरल एवं सुबोध होती थी। पूरी सभा का सारांश अपने छोटे से भाषण में कह करके कस्तूरबा अपने उपसंहार भाषण को परिपूर्ण करती थीं, उसमें कहीं भी किसी प्रकार की कमी नही प्रतीत होती थी।

ईर्ष्या तू न गयी मेरे मन से

१. इर्ष्या का यही..............................भोगनी पड़ती है।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत पंक्तियाँ गद्यसंकलन के 'ईर्ष्या तु न गयी मेरे

न से' शीर्षक से ली गयी है। इस शीर्षक के लेखक श्री रामधारी सिंह दिनकर ।। इस शीर्षक में लेखक ने ईर्ष्या के स्वरूप आदि पर विचार किया है।

व्याख्या— ईर्ष्या मानव के अनेक धर्मों में से एक है। जिस तरह मनुष्य अपने ज्ञान, शक्ति, बल, ऐश्वर्य आदि के द्वारा कुछ प्राप्त करता है, उसी तरह र्ष्या नामक गुण से भी वह कुछ पाता है; किन्तु इस गुण से वह सुख नहीं दुःख ाप्त करता है। उसे सुख के साधन भी दुख देने लग जाते हैं। जिस मनुष्य के अन्तः करण में ईर्ष्या अपना घर बना लेती है, वह आदमी अपने पास विद्यमान सुख प्राप्ति के साधनों से सुख नहीं प्राप्त कर पाता है। वह जिसके प्रति ईर्ष्या की भावना रखता है उस व्यक्ति के पास विद्यमान वस्तुओं को देख-देख कर जलता रहता है। वह दूसरे की वस्तुओं से दुःख प्राप्त करता है। वह अपनी तुलना दूसरे व्यक्ति से करता है और उस तुलना में उसके पास जिन-जिन वस्तुओं की कमी होती है, वह उस अभाव के द्वारा दुखी होता है। वे अभाव उसके हृदय को जलाने लगते हैं। यद्यपि इस तरह से ईर्ष्या के अभाव में जलते रहना अच्छी बात नहीं होती है, किन्तु समस्या इस बात की होती है वह व्यक्ति उसके विपरीत कुछ भी इसलिए नहीं कर पाता है कि उसका जलने का स्वभाव बन जाता है। वह अपनी आदत से लाचार रहता है और दुःख भोगता रहता है।

२. ईर्ष्या के बड़ी..............................दिया जाऊँगा।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— ये पंक्तियाँ गद्यसंकलन के श्री रामधारी सिंह दिनकर लिखित **'ईर्ष्या तू न गयी मेरे मन से'** शीर्षक से उद्धृत है। इन पंक्तियों में लेखक ने ईर्ष्या और निन्दा में घनिष्ठ संबन्ध बताकर यह बतलाया है कि ईर्ष्यालु मनुष्य ही घोर निन्दक होता है।

व्याख्या— इन पंक्तियों में लेखक ने बतलाया है कि यदि विचार किया जाय तो ईर्ष्या और निन्दा में माता एवं पुत्री का संबन्ध है। यदि ईर्ष्या माँ है तो निन्दा उसकी पुत्री। अर्थात् जब कोई व्यक्ति किसी से ईर्ष्या करता है तो वह उसकी कटु निन्दा करता है। उस निन्दक पुरुष का एक मात्र उद्देश्य यह होता है कि वह जिसकी निन्दा कर रहा है,वह व्यक्ति समाज कि दृष्टि में गिर जय। लोग उसकी निन्दा करने लग जायँ। उसकी मान-प्रतिष्ठा जो समाज मे बनी हुई है वह समाप्त हो जाय। लोग उसके स्थान पर मुझे मान लें। वह स्थान मैं प्राप्त करूँ। यह निन्दक व्यक्ति के निन्दा करने का लक्ष्य होता है। किन्तु उस ईर्ष्यालु व्यक्ति की ऐसी धरणा विलकुल गल्त होती है। किसी की निन्दा कर के कोई भी समाज में उन्नत

स्थान नहीं प्राप्त कर सकता है और न तो लोग उसकी इज्जत कर सकते हैं। वह स्वयम् विपरीत दिशा में सोचकर किसी भी व्यक्ति से ईर्ष्या कर सकता है।

३. ईर्ष्या मनुष्य का..............................योग्य ही न हों।।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत पंक्तियाँ गद्यसंकलन के श्री रामधारी सिंह 'दिनकर' लिखित 'ईर्ष्या तू न गयी मेरे मन से' शीर्षक से उद्धृत है। इन पंक्तियों में लेखक ने बतलाया है कि ईर्ष्या मनुष्य के चारित्रिक दोष होने के साथ-साथ मनुष्य के अनन्दानुभव करने में भी बाधक बनती है।

व्याख्या— लेखक कहते हैं ईर्ष्या को विषय में लोग मानते हैं कि वह मनुष्य के चारित्रिक दोष स्वरूप है। वह ईर्ष्यालु व्यक्ति को निन्दक बनाकर लोगों की दृष्टि से उसे गिरा देती है। उसके साथ-साथ ईर्ष्यालु मनुष्य अपने पास उपलब्ध वस्तुओं से सम्प्राप्य आनन्द के अनुभव में बाधा भी प्राप्त करता है। जिस मनुष्य के हृदय में ईर्ष्या की आग जलने लग जाती है, वह अपने पास विद्यमान आनन्द का भी बहुत कम अनुभव कर पाता है। वह तो ईर्ष्या की आग मे ही हमेशा जलता रहता है। वह न तो पक्षियों के कलरव को सुनकर सुख की अनुभूति कर पाता है और न तो वह विकसित पुष्पों के स्वाभाविक सौन्दर्य को देखकर खुश होता है। वह फूलों को देखना भी नहीं चाहता है। उसको सुन्दर वस्तु भी कष्टप्रद प्रतीत होने लगती है।

४. आप कहेंगे कि..............................आनन्द होता है।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— ये पंक्तियाँ गद्यसंकलन के रामधारी सिंह 'दिनकर' लिखित 'ईर्ष्या तू न गयी मेरे मन से' शीर्षक से ली गयी है। इन पंक्तियों में लेखक ने ईर्ष्यालु व्यक्ति को होने वाले आनन्द को निन्दनीय बतलाया है। उसके आनन्द में और दैत्यों के आनन्द में कोई भी अन्तर नहीं होता। इर्ष्यालु मनुष्य स्वभाव से इर्ष्यालु हो जाता है।

व्याख्या— इन पंक्तियों में लेखक ने बतलाया कि कोई यदि यह कहे कि ईर्ष्यालु व्यक्ति को भी आनन्द की अनुभूति होती है। जब वह व्यक्ति अपनी निन्दा की बाणों से अपने ईर्ष्या के पात्र को बेध डालता है, उस समय उसको एक उद्दाम आनन्द की अनुभूति होती है। यह आनन्द कीं अनुभूति ही उसके लिए सबसे बड़ा पुरस्कार होता है। तो इस तर्क का खण्डन करते हुए दिनकर जी कह रहें है कि निन्दा के माध्यम से अपने प्रतिद्वन्दी को परास्त करके आनन्द का अनुभव करने वाले मनुष्य और किसी राक्षस में कोई भी विषमता नहीं होती है। वह भी राक्षसों

की कोटि में सन्निविष्ट हो जाता है। उसकी वह हँसी राक्षस की हँसी होती और उसको प्राप्त होने वाला आनन्द किसी दैत्य का आनन्द होता है।

ईर्ष्या का संबन्ध..हरकुलिस से।

सन्दर्भ एवं प्रसंग— प्रस्तुत पंक्तियाँ गद्यसंकलन के श्री रामधारी सिंह दिनकर द्वारा लिखित है **'ईर्ष्या तु न गयी मेरे मन से'** शीर्षक से ली गयी है। इन पंक्तियों में लेखक ईर्ष्या के गुणात्मक पक्ष को उपन्यस्त करते हैं। वे कहते हैं कि ईर्ष्या यदि स्पर्धा का रूप धारण कर लेती है तो केवल हानिकारक ही न रह कर लाभ कारक भी हो सकती है।

व्याख्या— इस अनुच्छेद में लेखक बतलाते हैं कि ईर्ष्या का संम्बन्ध प्रतिद्वन्द्विता से होता है। जिस तरह एक प्रतिद्वन्द्वी अपने प्रयासों द्वारा अपने दूसरे प्रतिद्वन्द्वी से आगे बढ़ने की कोशिश करता है, उसी तरह ईर्ष्या करने वाला व्यक्ति यदि यह सोचता है कि मैं अपने जीवन में ऐसा प्रयास करूँ कि अपने प्रतिद्वन्द्वी से आगे निकल जाऊँ। वह वहीं का वहीं रह जाय और मुझे देखकर वह हक्का-बक्का रह जाय तो इस प्रकार की ईर्ष्या मनुष्य की उन्नति का साधन बनती है। उससे मनुष्य जलता बहुत कम है, और आगे बहुत अधिक बढ़ता है। उसका लक्ष्य ईर्ष्या पात्र की निन्दा करना अथवा उसके साधन सामग्री को देखकर जलना नहीं रहता है। उसका उद्देश्य होता है, ईर्ष्या के पात्र से आगे बढ़ जाने का। वह आगे बढ़ने का हर संभव प्रयास करता रहता है। उस भावना से उसका संसार-व्यापी सुयश बढ़ता है। रसेल के मतानुसार- मानव के भीतर स्पर्द्धा का होना अनिवार्य है। जिस मनुष्य के भीतर स्पर्धा की भावना नहीं होती है, वह यशस्वी नहीं हो सकता। नेपोलियन, सीजर, सिकन्दर आदि विश्व के प्रख्यात पुरुष अपने से बडे से हमेशा स्पर्धा रखे और उसी भावना के बल पर विश्व विख्यात बन गये। नेपोलियन ने सीजर को अपनी स्पर्धा का विषय बनाया फिर सीजर ने सिकन्दर को अपनी स्पर्धा का विषय बनाया और सिकन्दर ने हरकुलिस को। इस तरह की स्पर्धा की भावना मानव की अभ्युन्नति का साधन बनती है।

विषेष— १. इस अनुच्छेद में ईर्ष्या को प्रतिद्वन्द्विता से संवद्ध बतलाया गया है और उसके गुणात्मक पक्ष को उजागर किया गया है।

❑

परिचयात्मक भाग गद्य संकलन

प्रश्न १— प्रतापनारायण मिश्रजी का साहित्यिक जीवन परिचय लिखिए।

उत्तर— **जीवन परिचय**— हिन्दी साहित्य के मूर्धन्य विद्वान् श्री प्रतापनारायण मिश्र हिन्दी साहित्य के मूर्धन्य विद्वान् श्री प्रताप नारायण मिश्रजी का सं० १९१३ वि० में जिला उन्नाव के बैजे ग्राम में जन्म हुआ था। आपके पिता का नाम श्री संकटाप्रसाद था। वे संस्कृत के मूर्धन्य विद्वान् थे। उनकी इच्छा श्रीमिश्रजी को ज्योतिष सिखाने की थी, किन्तु श्री मिश्रजी की ज्योतिष विद्या में रूचि नहीं थी अतः आप ज्योतिष न पढ़ सके। पिता के बहुत प्रयत्न करने पर भी आप स्कूली शिक्षा प्राप्त नहीं कर सके। स्कूल के अध्यापक मिश्रजी से प्रायः नाराज रहा करते थे, अतः अन्त में घर पर ही आपने हिन्दी, संस्कृत तथा फारसी भाषाओं का समुचित ज्ञान प्राप्त किया। भारतेन्दुजी की 'कवि वचन सुधा नामक' पत्रिका का आपके ऊपर अधिक प्रभाव पड़ा। समाचार पत्रों के भी पढ़ने का चाव आपको था। किन्तु ठोस अध्ययन के अभाव में मिश्रजी की भावुकता का समुचित विकास न हो सका। श्री मिश्रजी को एक विशेष प्रकार के छन्द हिन्दी लावनी से अधिक स्नेह था। इसी के सहारे आपको कविता में रूचि बढी। मिश्रजी ने 'ब्राह्मण' नामक एक मासिक-पत्रिका के सम्पादक भी किया। बाद में आप 'हिन्दुस्तान' नामक पत्र के सम्पादक का कार्य किया किन्तु घाटे के कारण अन्त में उसको बन्द करना पड़ा। इस प्रकार साहित्य सेवा करते हुए आपका देहान्त ३८ वर्ष की आयु में ही हो गया।

रचनायें— मिश्रजी की गणना अपने काल अच्छे साहित्यकारों में की जाती है। कुल मिलाकर आपने ४० पुस्तकें लिखी है। उन सबों का विवरण इस प्रकार है—

निबन्ध— समय, हठी हमीर, कलि प्रभाव इत्यादि।

अनुवाद— राजसिंह, पंचामृत इत्यादि।

नाटक— भारत दुर्दशा, गौ संकट, कलि कौतुक, आदि।

काव्य— मन की लहर, मानस, विनोद आदि।

लावनी और प्रहसन संगीत-शकुन्तला, जुआरी इत्यादि।

इन रचनाओं के अतिरिक्त आपने कई विषयों पर अपनी लेखनी चलायी। जैसे स्वास्थ्य रक्षा साधन, शिशु विज्ञान इत्यादि। इस प्रकार आपने अनेक विषयों पर लिखने का कार्य किया है; परन्तु निबन्धकार के रूप में ही आपकी प्रख्याति है।

भाषा और शैली— मिश्रजी की भाषा में दुरूहता नहीं पायी जाती। आपने प्रयोग बड़े ही सरल तथा सुबोध रूप में किया है। उनकी भाषा में ग्रामीणता की मात्रा अधिक है। उनकी भाषा पर भारतेन्दु की भाषा के संस्कार स्पष्ट रूप से झलकते हैं, परन्तु नागरिकता से वह दूर रहा है। मिश्रजी की भाषा में घरेलू शब्दों, कहावतों एवं मुहावरों का प्रयोग बहुत खुलकर हुआ है। उनके कारण चयन में श्री मिश्रजी असंयत दिखाई पड़ते हैं। शब्दों को शुद्ध करके प्रयोग में लाने की बात आपने कभी नहीं सोचा। आपकी भाषा में अरबी-फारसी तथा अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में पाया जाता है, इस प्रकार वह बोल-चाल के अत्यन्त निकट की भाषा बन गयी है। आपकी भाषा चुटीलापन लेकर चलती है। उसका प्रभाव रोचक हो गया है। उदाहरण के लिए में कुछ शब्द देखे जा सकते हैं—

संस्कृत— अन्ततोगत्वा, प्रत्यक्षतया आदि।

अंग्रेजी— ड्यूटी, नेचर, जैन्टिलमैन आदि।

मिश्रजी बड़े ही विनोदी स्वभाव के व्यक्ति हैं। हास्य उन्हें बड़ा ही प्रिय है। उनका विनोदी स्वभाव उनकी रचनाओं में पूर्ण रूप से परिलक्षित होता है। उनके निबन्धों में तीखे व्यंग्य तथा वक्रता का प्रयोग बड़ी अच्छी तरह से प्रयुक्त हुए हैं। गम्भीर निबन्ध बहुत कम है। इस प्रकार आपकी रचनाओं में विनोद पूर्ण व्यंग्य तथा गम्भीर शैलियों के दर्शन होते हैं। उदाहरणार्थ—

"डाकखाने अथवा तारघर के सहारे बात की बात में चाहे जिसकी जो बात हो जान सकते हैं। इसके अतिरिक्त बात बनती है, बात बिगड़ती है, बात आ पड़ती है, बात खुलती है। बात पूजती है। बात चलती है।"

प्रश्न २— श्याम सुन्दर दास जी का साहित्यिक जीवन परिचय लिखिए।

उत्तर— जीवन परिचय— वाराणसी की नागरि-प्रचारिणी सभा के संस्थापक डा० श्याम सुन्दर दास का जन्म १९३२ वि० में काशी के एक खत्री परिवार में हुआ था। आपके पिता का नाम देवी प्रसाद तथा माता का नाम श्रीमती देवकी देवी था। आपके पूर्वज लाहौर में रहते थे। यज्ञोपवीत संस्कार होने के बाद श्री श्याम सुन्दर दास जी ने संस्कृत व्याकरण तथा धर्मशास्त्र का विधिवत् अध्ययन

किया तथा अंग्रेजी का समुचित ज्ञान प्राप्त किया। जब आप इण्टर कक्षा के छात्र थे तभी से आपकी रुचि हिन्दी के प्रति विशेष रूप से उन्मुख हो गयी। विश्व विख्यात हिन्दी संस्था काशी नागरी प्रचारिणी की स्थापना अपने कुछ सहयोगियों के सहयोग से किया और अपना सारा जीवन उसके विकास के लिए सहर्ष समर्पित कर दिया। १८९८ में बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् आर्थिक कठिनाई के कारण आप आगे पढ़ न सके। आपने सेन्ट्रल हिन्दू कालेज काशी में कुछ समय तक अध्यापन का कार्य भी किया और बाद में मालवीय जी की सम्मति से हिन्दू विश्व विद्यालय काशी के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष पद को समलंकृत किया। वहीं रहकर आपने भाषाविज्ञान तथा साहित्य का इतिहास आदि महत्वपूर्ण ग्रन्थ लिखा। साहित्यिक सेवाओं के लिए आपको सरकार ने राय बहादुर की उपाधि से सम्मानित किया। हिन्दू विश्वविद्यालय ने आपको डी० लिट्० की उपाधि भी प्रदान की।

रचनायें— आपके अथक परिश्रम ने हिन्दी साहित्य को बहुत अधिक समृद्ध किया। आपने लगभग १०० पुस्तकों का सम्पादन किया। दुर्लभ पुस्तकों की खोज करना, उनको प्रकाशित करना आपका सर्वाधिक प्रिय कार्य था। मुख्य रूप से निम्नलिखित है।

डॉ० श्यामसुन्दर दास जी ने रामचरित मानस, कबीरग्रंथावली, सतसई हिन्दी शब्द सागर, भारतेन्दु नाटकावली, मेघदूत का सम्पादन किया तथा दीनदयाल गिरि ग्रन्थावली, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, परमाल रासो इत्यादि।

मेरी आत्म कहानी, साहित्यलोचन, भाषा विज्ञान, हिन्द भाषा का विकास, गद्य कुसुमावली, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, भाषा रहस्य, हिन्दी गद्य निर्माता आदि आपकी मौलिक रचनाएँ हैं।

संकलित ग्रन्थ— भाषा सार संग्रह, संक्षिप्त रामायण, हिन्दी पत्र लेखन, गद्य रत्नावली तथा हिन्दी गद्य-संग्रह इत्यादि आपके संग्रह ग्रन्थ हैं।

आप की रचना में यत्र-तत्र अरबी, फारसी, अंग्रेजी तथा उर्दू के शब्दों का अविकाल प्रयोग किया गया है, उनके रूप में परिवर्तन नहीं किया गया है। आपकी भाषा पर संस्कृत का पूर्णरूप से प्रभाव है फिर भी वह कहीं भी दुरूह नहीं हो पायी हैं। आपकी भाषा पूर्णरूप से विषयानुकूल है। मुहावरों तथा कहावतों का अधिक प्रयोग नहीं है। विराम चिह्नों के प्रयोग में आपने सतर्कता नहीं बरती है। आपकी भाषा शुद्ध साहित्यिक है। आपकी भाषा का गठन प्रशंसनीय है। गूढ़

विषयों के प्रतिपादन करने में आपकी भाषा गम्भीर प्रौढ़ तथा समर्थ है।

"जहाँ पहले भाव व्यजंना या विचारों के प्रत्यक्षीकरण पर विशेष ध्यान रहता था, वहाँ अब साहित्य शास्त्र से अंग प्रत्यंग पर विशेष ध्यान दिया जाने लगा।"

"जब मानव मन किसी रागमयी कल्पना से उद्वेलित होकर अभिव्यक्त हो उठता है तब वह अभिव्यक्ति प्रायः गति रूप में हो जाता है।

आपकी शैली भी ही सरल तथा प्रभावित करने वाली है। विषयों को समझाने के लिए आपने एक ही बात को कई बार दुहराया है। आपकी शैली में गम्भीरता एवं साहित्यिकता का पुट है।

प्रश्न ३– आचार्य रामचन्द्रशुक्ल का साहित्यिक जीवन परिचय लिखिए।

उत्तर– जीवन परिचय– हिन्दी साहित्य के प्रकाण्ड विद्वान् एवं प्रख्यात साहित्यकार आचार्य रामचन्द्र शुक्ल अनोखी प्रतिभा के धनी हैं। आपका सं० १९४१ बिक्रमी में बस्ती जिले में जन्म हुआ था। आपके पिता श्री चन्द्रवली शुक्ल सुपरवाइजर कानूनगो थे। जब वे हमीरपुर जिले की राठ तहसील में थे, तभी से आपकी शिक्षा का कार्य प्रारम्भ हुआ। अपने प्रारम्भ में संस्कृत भाषा की शिक्षा ग्रहण की। अपने पिताजी की अनुमति से आपने ८ वीं कक्षा तक उर्दू और फारसी भी पढ़ा; किन्तु आपकी अभिरूचि हिन्दी की ओर थी। हिन्दी के ज्ञान की प्रबल अभिलाषा के कारण आप प्रातः उर्दू फारसी की कक्षायें छोड़कर हिन्दी की कक्षा में बैठ जाया करते थे। आपने मिशन स्कूल हमीरपुर से हाईस्कूल तथा इण्टर की परीक्षायें उत्तीर्ण की, तथा कानून की परीक्षा भी दी परन्तु उसमें अनुत्तीर्ण हो गये। श्री शुक्ल जी मिर्जापुर के मिशन स्कूल में कुछ समय के लिए अध्यापक हो गये। यहाँ से ही आपका साहित्यिक जीवन आरम्भ हुआ। आपके लेख तथा रचनायें पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होने लगे। कुछ दिनों बाद आपका साहित्यकार रूप उभरकर सामने आया। इसके पश्चात् आपने नागरी प्रचारिणी सभा हिन्दी के शब्दसागर कोष के सहायक सम्पादक बने और उसको बड़ी निष्ठा के साथ पूरा करवाये। अपनी योग्यता के बल पर आप हिन्दू विश्वविद्यालय में हिन्दी के प्रवक्ता तथा वहीं हिन्दी विभाग के पद पर भी रहे। इस सम्पूर्ण काल में आपने अत्यन्त ही तन्मयता से हिन्दी साहित्य की सराहनीय सेवा की। आपको श्वांस का रोग था। उसी के कारण हृदय की गति रुक जाने से सं० १९९७ में आपका देहावसान हो गया।

रचनायें– समर्थ रचनाओं के रूप में आपने हिन्दी साहित्य को अनुपम भेंट प्रदान की है। आपका 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' एक ठोस और गम्भीर ग्रन्थ

है। तुलसीदास, चिन्तामणि, भ्रमर गीत सार काव्य में रहस्यवाद तथा जायसी ग्रन्थावली आपकी मौलिक एवं रचनायें हैं। निबन्ध आलोचना तथा ऐतिहासिक आधार पर आपने कई महत्वपूर्ण ग्रन्थ प्रस्तुत किया जो अपने आप में अमर हैं सम्पादित ग्रन्थों के सम्पादन कार्य के साथ ही आपने उन पर अपनी टिप्पणियाँ भी की है। आपने ब्रजभाषा में बुद्ध चरित्र लिखा है।

भाषा और शैली— आपने विशुद्ध साहित्यिक हिन्दी में रचनायें की है। यद्यपि आपने ब्रजभाषा में भावपूर्ण कविताएँ लिखी है परन्तु इनसे आपका कवि रूप अधिक नहीं निखर पाया। उनके गद्य साहित्य में सर्वत्र तत्सम शब्दों के ही दर्शन होते हैं। आपकी रचनाओं में एक भी आवश्यक शब्द का मिलना कठिन है। वाक्यों के गठन में एक भी शब्द को इधर-उधर अथवा निकाला बढ़ाया नहीं जा सकता। आपकी भाषा में भावानुकूलता, सरलता तथा सुन्दर प्रवाह युक्तता सर्वत्र विराजमान है। उर्दू तथा अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग आपने नहीं के बराबर किया है। जहाँ कहीं ऐसे शब्द आये भी हैं वहाँ उनका कोई विशेष प्रयोजन ही रहा होगा। आपकी भाषा में व्याकरण एवं चिह्नों की सतर्कता सर्वत्र विद्यमान है।

शुक्लजी की शैली का उनके व्यक्तित्व से पूर्णरूपेण सम्बन्ध है। विषय के अनुसार उनमें परिवर्तनशीलता भी पायी जाती है। उनका सम्पूर्ण साहित्य आलोचनात्मक, भावात्मक तथा गवेषणात्मक है। शुक्लजी हृदय से कवि, मस्तिष्क से आलोचक तथा कर्म से अध्यापक हैं। कुल मिलाकर आपका आलोचक रूप ही सर्वाधिक समर्थ है। अतः उनकी आलोचनात्मक शैली बड़ी ही ठोस, गम्भीर तथा मर्यादित है। उनके आलोचनात्मक निबन्धों में विवेचनात्मक शैली का प्रयोग किया गया है। इनकी भाषा भी व्यावहारिक है। कहीं भी अश्लील साहित्य, हास्य अथवा व्यंग्य की विकृत चेष्टा उनके साहित्य में दिखाई नहीं देती।

प्रश्न ४- मुन्शी प्रेमचन्द जी का साहित्यिक जीवन परिचय लिखिए।

मुन्शी प्रेमचन्द का जन्म सन् १८८० में वाराणसी जिले के लमही ग्राम में हुआ था। आपके बचपन का नाम धनपत राय था। किन्तु वे अपनी कहानियाँ उर्दू में 'नवाबराय' के नाम से लिखते थे और हिन्दी में प्रेमचन्द के नाम से। गरीब परिवार में जन्म लेने और अल्पायु में ही पिता की मृत्यु हो जाने के कारण आपका बचपन बड़े कष्ट में बीता। फिर भी जिस साहस और परिश्रम से आपने अपना अध्ययन जारी रखा, वह साधनहीन तथा कुशाग्रबुद्धि आप छात्रों के लिए प्रेरणाप्रद है। प्रारम्भ में आप कुछ वर्षों तक अध्यापक रहे। बाद में आप शिक्षा विभाग में

सब-डिप्टी इंस्पेक्टर हो गये। असहयोग आन्दोलन में सहानुभूति रखने के कारण इन्होंने सरकारी नौकरी से त्याग-पत्र दे दिया और आजीवन साहित्य सेवा करते रहे। आपने कई पत्रिकाओं का सम्पादन किया, प्रेस खोला, और हंस नामक पत्रिका का प्रकाशन किया। आपकी मृत्यु सन् १९३६ में हुई।

प्रेमचन्द के प्रसिद्ध उपन्यास सेवासदन, निर्मला, रंगभूमि, कर्मभूमि, गबन, तथा गोदान आदि हैं। आपकी कहानियों का विशाल संग्रह आठ भागों में मानसरोवर नाम से प्रकाशित है जिनमें लगभग तीन सौ कहानियाँ संकलित हैं। कर्बला, संग्राम और प्रेम की वेदी आपके नाटक हैं। प्रेमचन्दजी के द्वारा प्रणीत गोदान हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ उपन्यास है।

प्रेमचन्दजी ने हिन्दी कथा-साहित्य के क्षेत्र में एक नये युग को जन्म दिया। इनका साहित्य समाज-सुधार और राष्ट्रीय भावना से अनुप्राणित है। वह अपने समय की सामाजिक और राजनैतिक परिस्थितियों का पूरा प्रतिनिधित्व करता है। इसमें किसानों की दुर्दशा सामाजिक बन्धनों में तड़पती नारियों की वेदना और वर्णव्यवस्था की कठोरता के भीतर संत्रस्त हरिजनों की पीड़ा का मार्मिक चित्रण मिलता है। भारत की दलित जनता, शोषित किसानों, मजदूरों और उपेक्षित नारियों के प्रति सहानुभूति रही है। सामयिकता के साथ ही आपके साहित्य में ऐसे भी तत्त्व विद्यमान हैं जो शाश्वत और स्थायी हैं। प्रेमचन्द जी अपने युग के उन सिद्धहस्त कलाकारों में हैं, जिन्होंने हिन्दी को नवीन युग की आशा एवं आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति का सफल माध्यम बनाया।

प्रेमचन्द की हिन्दी में उर्दू के चुस्त लोकोक्तियों और मुहावरों के प्रयोग की प्रचुरता है। इनकी भाषा सहज, प्रवाहपूर्ण, मुहवरेदार और प्रभावशाली है और उसमें अद्भुत व्यंजना-शक्ति भी विद्यमान है। बड़े भाई साहब, नमक का दरोगा, पूस की रात आदि इनकी प्रसिद्ध कहानियाँ हैं।

मंत्र प्रेमचन्द की एक मर्मस्पर्शी कहानी है इसमें विरोधी घटनाओं, परिस्थितियों और भावनाओं का चित्रण करके इन्होंने कर्त्तव्य-बोध का अभीष्ट प्रभाव उत्पन्न किया है। पाठक मंत्र-मुग्ध होकर पूरी कहानी को पढ़ जाता है। भगत की अन्तर्द्वन्द्वपूर्ण मनोदशा वेदना एवं कर्त्तव्य-निष्ठा पाठकों के मर्म को छू लेती है।

प्रश्न ५- वियोगी हरि के साहित्यिक जीवन का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

उत्तर— वियोगी हरि का पूरा नाम हरिप्रसाद द्विवेदी है। इनका जन्म छतरपुर में कान्यकुब्ज ब्राह्मण परिवार में हुआ था। बचपन में ही पिता की मृत्यु के कारण

इनका लालन-पोषण ननिहाल में हुआ। इनकी प्रारंभिक शिक्षा घर पर ही हुई। ये तत्कालीन छतरपुर की महारानी के विशेष कृपापात्र थे। राजर्षि टंडनजी के अनुरोध पर आपने कुछ समय तक हिन्दी साहित्य सम्मेलन का प्रबन्ध संचालन किया तथा सम्मेलन पत्रिका का भी संपादन किया। आपने दिल्ली में हरिजन उद्योगशाला का संचालन किया।

श्री वियोगीहरि का सम्पूर्ण जीवन त्याग, संयम तथा सेवामय रहा है। इन्हें **वीर सतसई** पर मंगलाप्रसाद पारितोषक प्राप्त हुआ। सन् १६३२ में आप गाँधीजी के सम्पर्क में आये तथा हरिजनों तथा समाज के दलित वर्गों की सेवा का कार्य किए।

६ मई, १६८८ को इनका देहावसान हो गया। इनकी पचास से भी अधिक रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं जिनमें से निम्नलिखित विशेष रूप से प्रसिद्ध है-

काव्यः- **प्रेम शतक, प्रेमांजलि, वीणा, प्रेम-पथिक, मेवाड़-केसरी, वीर सतसई इत्यादि।**

इनकी रचनाएँ उच्च माध्यमिक कक्षाओं के छात्रों के लिए उपयोगी है। आपने अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का सम्पादन, प्राचीन कविताओं का संग्रह तथा संतों एवं योगियों की वाणियों का संकलन किया है।

इनकी सभी रचनाओं में सहृदयता तथा भावुकता के दर्शन होते हैं। इन्होंने व्रजभाषा तथा खड़ी बोली दोनों में साहित्य की रचना की है। इनकी रचना में संस्कृत की तत्सम शब्दावली का बाहुल्य है। व्यावहारिक भाषा में बोलचाल के शब्दों का अधिक प्रयोग है। इन्होंने गद्य काव्यों को भावात्मक शैली में लिखा है। गम्भीर विषयों में आपकी शैली विचारात्मक है। आपके लेखों तथा आपके निबन्धों में इनकी शैली की विशदता स्पष्ट झलकती है। इन्होंने दार्शनिक तथा सामाजिक विषयों पर भी निबन्ध लिखा है। भावना तथा अन्तर्नाद में आपकी भावात्मक शैली के दर्शन होते हैं।

प्रस्तुत संग्रह में **विश्व-मंदिर** नामक निबन्ध इनकी पुस्तक उद्यान से लिया गया है। इस निबन्ध में लेखक ने एक विश्व-मंदिर की कल्पना की है तथा उसके स्वरूप एवं सर्वधर्म समन्वय के संबंध में अपने विचार प्रकट किया गया है। प्रस्तुत निबन्ध **'वसुधैव कुटुम्बकम्'** की उदात्त भावना से प्रेरित होकर लिखा गया है।।

प्रश्न ६— हरिभाऊ उपाध्याय का साहित्यिक जीवन संक्षेप में लिखिये।

उत्तर— हरिभाऊ उपाध्याय का जन्म सन् १८६२ में उज्जैन जिले के भवसारा नामक ग्राम में हुआ था। आपको बचपन से ही साहित्य से प्रेम था। इसीलिए छोटी

ही अवस्था में ही आपने लिखना प्रारम्भ कर दिया था। आपका जीवन अध्यापन कार्य से प्रारम्भ हुआ। अध्ययनशील होने के कारण आपको हिन्दी के अतिरिक्त कई अन्य भाषाओं का अच्छा ज्ञान था। अंग्रेजी, संस्कृत, एवं मराठी और गुजराती भाषाओं पर आपका अच्छा अधिकार था। लगभग आधे दर्जन पत्र-पत्रिकाओं का आपने बड़ी सफलतापूर्वक सम्पादन किया। आपके सम्पादन में प्रकाशित त्याग भूमि पत्रिका ने विशेष ख्याति प्राप्त की। १६१५ ई० में आप आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी के सम्पर्क में आये और उनके साथ ही सरस्वती में सहायक सम्पादक का कार्य किए। गाँधीजी के सम्पर्क में आने पर आपने हिन्दी नवजीवन का कार्य बड़ी कुशलता से किया। आप गाँधीवादी विचारधारा की ओर शुरू से ही आकृष्ट रहे। आपका सम्पूर्ण साहित्य और राजनीतिक जीवन गाँधी-दर्शन से प्रभावित रहा। राजनीति और साहित्य से सम्बन्धित विषयों पर आपकी एक दर्जन पुस्तकें प्रकाशित हैं। गाँधी-साहित्य के प्रणेता प्रकाशक एवं प्रचारक सस्ता साहित्य मंडल के आप सक्रिय सदस्य रहे। आपने जवाहरलाल नेहरू की आत्मकथा मेरी जीवनी और सीतारमैया द्वारा लिखित कांग्रेस का इतिहास का हिन्दी रूपान्तर किया। अनुवाद करने में आपने इस बात का ध्यान रखा कि पुस्तक की भाषा लेखक की भाषा के अनुरूप हो। आपने स्वतन्त्रता आन्दोलन में भी सक्रिय भाग लिया और कई बार जेल-यात्रा की।

उपाध्यायजी की शैली के दो गुण हैं:- सरलता और प्रांजलता। गद्य के विषय में ये साधारण बोलचाल की भाषा के पक्ष में हैं। इनके लेखों को पढ़ते समय लगता है कि हम किसी की बात सुन रहे हैं। इनके स्वभाव की सादगी का प्रतिबिम्ब इनकी रचनाओं में स्पष्ट झलकता है।

उपाध्यायजी की मौलिक पुस्तकें हैं:- बापू के आश्रम में, स्वतंत्रता की ओर, सर्वोदय की बुनियाद, साधना के पथ पर, और युगधर्म इत्यादि।

आचार्य द्विवेदी जी एक संस्मरण है; इसमें उपाध्यायजी ने आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के व्यक्तित्व और स्वभाव का वस्तुनिष्ठ चित्रण किया है। द्विवेदीजी पर लिखा गया यह संस्मरण कई स्थनों पर स्वयं आचार्य द्विवेदी द्वारा लिखित आत्मकथा की विशेषताओं की याद दिलाता है, साथ ही अपने सम्बन्ध में जिन बातों को स्वयं आचार्य द्विवेदी नहीं लिख सके उन्हें बड़ी सहजता से सामने यह संस्मरण रख देता है।

प्रश्न ७— श्री जयशंकर प्रसाद के साहित्यिक जीवन के विषय में संक्षेप में लिखें।

उत्तर— जयशंकर 'प्रसाद' का जन्म वाराणसी के प्रसिद्ध सुँघनी साहू परिवार में सन् १८८९ में हुआ था। घर पर ही आपने संस्कृत, फारसी, तथा अंग्रेजी की शिक्षा प्राप्त की। वेद, पुराण, इतिहास, साहित्य और दर्शनशास्त्र का अपने स्वाध्याय किया। प्रसादजी में काव्य-प्रणयन के संस्कार बचपन से ही थे। इनकी पहली कविता नौ वर्ष की अवस्था में ही प्रकाश में आ गयी थी। प्रसादजी को पारिवारिक सुख नहीं प्राप्त था। माता, पिता, अनुज तथा पत्नी सभी इनकी युवावस्था से पहले ही परलोक चले गये। आपका परिवार जो कभी वैभव के पालने पर झूलता था, वह ऋण के बोझ से दब गया। अतः आपको जीवन भर विषम परिस्थितियों से संघर्ष करना पड़ा, किन्तु आपने संघर्ष से हार नहीं माना। चिन्ताओं ने शरीर को जर्जर बना दिया और अन्ततः आप क्षय-रोग के शिकार हो गये। १५ नवम्बर सन् १९३७ को काशी में आपकी जीवन-लीला समाप्त हो गयी। माँ-भारती का यह अमर गायक जीवन के केवल अड़तालिस वसन्त ही देख सका।

प्रसादजी चतुरस्र प्रतिभा के धनी थे। आप एक महान कवि, सफल नाटककार, श्रेष्ठ उपन्यासकार, कुशल कहानीकार, और गम्भीर निबंधकार थे। आपको भारतीय संस्कृति और सभ्यता से अगाध स्नेह था। भारत के उज्जवल अतीत को आपने अपने साहित्य के माध्यम से सफलतापूर्वक चित्रित किया है। आपके नाटक, चन्द्रगुप्त, स्कन्दगुप्त, और अजातशत्रु राष्ट्र के गौरवमय इतिहास का चित्र प्रस्तुत करते हैं। आपकी कामायनी छायावाद युग को ही नहीं, सम्पूर्ण आधुनिक काल की सर्वश्रेष्ठ रचना मानी जाती है। इन्द्रजाल, आँधी आदि आपके कहानी-संग्रह हैं। आपकी आकाशदीप और पुरस्कार नामकी कहानियों विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं। इनकी कहानियाँ और नाटकों में गम्भीर भावुकता के दर्शन होते हैं। ये हिन्दी में छायावादी काव्यधारा के जनक कवि माने जाते हैं।

प्रसादजी की भाषा संस्कृत-निष्ठ है। आपकी शब्दावली समृद्ध और व्यापक है तथा शैली अलंकृत एवं चित्रात्मक। भावाविष्ट अवस्था में आपके गद्य भी काव्यात्मक हो जाते हैं।

ममता कहानी प्रसादजी की छोटी किन्तु अत्यन्त सशक्त कृति है। प्रमुख नारी पात्र ममता के चरित्र के ताने-बाने से इसका कथानक निर्मित है। प्रसादजी ने ममता के माध्यम से एक बाल विधवा की करुण कथा चित्रित की है, साथ ही

भारतीय नारी की गरिमा भी।

प्रश्न ८— पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी के साहित्यिक जीवन के विषय में लिखें।

उत्तर— पदुमलाल पुन्नलाल बख्शी का जन्म सन् १८६४ ई० में हुआ था। ये विद्यार्थी जीवन से ही कविताएँ लिखते थे। बी० ए० पास करते ही 'सरस्वती' के अतिरिक्त अन्य पत्रिकाओं में भी आपकी रचनाएँ प्रकाशित होने लगी। आपकी कविताएँ स्वच्छन्दतावादी हैं जिन पर अंग्रेजी कवि वर्डस्वर्थ का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है। बख्शीजी की प्रसिद्धि का मुख्य आधार आलोचना और निबंध लेखन है।

बख्शीजी की गणना द्विवेदी-युग के प्रमुख साहित्यकारों में होती है। हिन्दी साहित्य विमर्श और विश्व साहित्य आपकी दो आलोचनात्मक ग्रन्थ हैं। बख्शी जी विशेष रूप से अपने ललित निबन्धों के लिए स्मरण किये जाते हैं। आप एक विशेष शैलीकार के रूप में प्रसिद्ध हैं। आपने जीवन, समाज, धर्म, संस्कृति और साहित्य आदि विषयों पर उच्चकोटि के निबन्ध लिखा है। यत्र-तत्र शिष्ट हास्य-व्यंग्य के कारण आपके निबन्ध अत्यन्त रोचक बन गये हैं। आपकी भाषा और शैली सरल एवं प्रवाहपूर्ण है। आपके निवन्ध संग्रह एवं पंचपात्र, पदम् वन, विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

बख्शीजी ने १६२० से २७ तक बड़ी कुशलता से 'सरस्वती' का सम्पादन किया। कुछ वर्षो तक आपने छाया नामकी मासिक पत्रिका का भी सम्पादन बड़ी कुशलतापूर्वक किया।

क्या लिखूँ ? आपका एक ललित निबन्ध है। इस निबन्ध के विषय-प्रतिपादन, प्रस्तुतीकरण एवं भाषा शैली में बख्शीजी की सभी विशेषताएँ सन्निविष्ट हैं। इस निबन्ध की उत्कृष्टता के दर्शन उस समन्वित रचना-कौशल में होते हैं, जिसके अन्तर्गत लेखक ने दो विषयों पर निबन्ध की विषय सामग्री, प्रस्तुति आदि का संकेत ही नहीं किया है अपितु संक्षेप में उन्हें प्रस्तुत कर दिया है।

प्रश्न ६— श्री गुलाबराय जी के साहित्यिक जीवन का परिचय दीजिए।

उत्तर— बाबू गुलाबराय का जन्म इटावा में सन् १८८८ ई० में हुआ। आपने दर्शनशास्त्र से एम० ए० परीक्षा उत्तीर्ण की। बाद में एल-एल० बी० की परीक्षा भी आपने उत्तीर्ण की। साहित्य और दर्शन दोनों में आपकी समान रूप से गति थी। हिन्दी, संस्कृत, उर्दू, फारसी आदि भाषाओं पर आपका अच्छा अधिकार

था। कई वर्षों तक आप छतरपुर रियासत के महाराजा के सचिव रहे, उसके पश्चात् आप आगरा के सेंट जांस कालेज में अध्यापन कार्य करते रहे। आपके जीवन का अधिकांश समय आगरा में ही बीता। आपने साहित्य संदेश नाम की पत्रिका का सफल संपादन किया। आगरा विश्वविद्यालय से आपने डी० लिट्० की उँपाधि प्राप्त की। १३ अप्रैल, १९६३ को आपका देहावसान हो गया।

आधुनिक हिन्दी गद्य के उन्नायकों में गुलाबरायजी भी प्रमुख हैं। आपका हिन्दी भाषा और साहित्य को समृद्ध करने में महत्वपूर्ण अवदान है। आपकी साहित्यिक कृतियों के कई रूप हैं- काव्यशास्त्रकार, व्यावहारिक आलोचक, ललित और गम्भीर निबंधकार, एवं शास्त्रकार आदि। इसके अतिरिक्त आप हिन्दी के शुभचिन्तक थे और आपने बहुत से हिन्दी-लेखकों को न केवल प्रेरणा और प्रोत्साहन दिया बल्कि सही अर्थों में उन्हें साहित्यकार भी बनाया।

गुलाबरायजी के कतिपय उल्लेखनीय कृतियाँ निम्नलिखित हैं—

नवरस, सिद्धान्त और अध्ययन, काव्य के रूप, हिन्दी नाट्य विमर्श, हिन्दी-काव्य विमर्श, हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास, तथा अध्ययन और आस्वाद, आदि।

काव्यशास्त्र-सम्बन्धी ग्रन्थों में आपका दृष्टिकोण समन्वयात्मक दिखायी देता है। व्यावहारिक समीक्षा-सम्बन्धी रचनाओं में विचार-विश्लेषण पर आपकी अधिक ध्यान की प्रवृत्ति पायी जाती है। काव्यशास्त्रकार और समीक्षक से अधिक आप निबन्धकार के रूप में विख्यात हैं। ललित निवन्धों में कुछ मधुर हास्य की सृष्टि के साथ आप पाठक से आत्मीयता का सम्बन्ध स्थापित करते दिखायी देते हैं।

प्रश्न १०— डॉ० राजेन्द्रप्रसाद का साहित्यिक जीवन लिखिए।

उत्तर— देशरत्न डॉ० राजेन्द्रप्रसाद का जन्म सन् १८८४ में बिहार राज्य के छपरा जिले के जीरादेई ग्राम में हुआ था। कलकत्ता विश्वविद्यालय से आपने एम० ए० और एम० एल० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की। आप बड़े मेधावी छात्र थे और सभी परीक्षाओं में आपने प्रथम स्थान प्राप्त किया।

मुजफ्फरपुर में एक कालेज में कुछ दिन अध्यापन का कार्य करने के पश्चात् राजेन्द्र बाबू ने कलकत्ता तथा पटना हाईकोर्ट में वकालत की। किन्तु गाँधीजी के आदर्शों, सिद्धान्तों तथा अन्दोलनों से प्रभावित होकर सन् १९२० में आपने वकालत छोड़ दी और पूर्णरूपेण देश-सेवा के कार्य में लग गये।

भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस के आप तीन बार सभापति चुने गये और सन्

१६६२ तक भारत गणराज्य के राष्ट्रपति रहे। सत्यनिष्ठा, ईमानदारी, निर्भीकता, देशभक्ति, साधुता, और सादगी आपके रोम-रोम में व्याप्त थी। आप की मृत्यु सन् १६६३ ई० में हुई।

डॉ० राजेन्द्रप्रसाद एक कुशल लेखक थे। सामाजिक, शैक्षिक एवं सांस्कृतिक विषयों पर आपके लेख प्रकाशित होते थे। हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सभापति पद को भी आपने सुशोभित किया। आपकी भाषा सरल तथा शैली रोचक है। **भारतीय शिक्षा, गाँधीजी की देन, साहित्य, शिक्षा और संस्कृति, आत्मकथा** आदि आपकी प्रसिद्ध पुस्तकें हैं। हिन्दी के अतिरिक्त आप अंग्रजी में भी लिखते थे। आपके अनेक भाषण भी प्रकाशित हुए हैं जिनमें विचारों की क्रम-बद्धता और स्पष्टता, भाषा की सरलता और स्वाभाविकता एवं हृदय की संवेदन-शीलता और देशभक्ति के एक साथ दर्शन होते हैं।

प्रस्तुत पाठ **भारतीय संस्कृति** आपके एक भाषण का अंश है। इसमें आपने बतलाया है कि भारत जैसे विशाल देश में व्याप्त जीवन व रहन-सहन की विविधता में भी एकता के दर्शन होते हैं। विभिन्न भाषा, जाति व धर्म की मणियों को एकसूत्र में पिरोकर रखने वाली हमारी भारतीय संस्कृति विशिष्ट है। डॉ० राजेन्द्रप्रसाद के व्यक्तित्व की ही भाँति भाषा भी अत्यन्त सरल है।

प्रश्न ११— श्री विनोवा भावे के साहित्यिक जीवन के विषय में संक्षेप में लिखें।

उत्तर— आचार्य विनोवा भावे का जन्म ११ सितम्बर सन् १८६५ को महाराष्ट्र के कुलाबा जिले के गागोद ग्राम में हुआ था। आपका पूरा नाम विनायक राव भावे है! आप अत्यन्त मेधावी छात्र थे और गणित तथा संस्कृत आपके रूचि के विषय थे। आपने आई० एस-सी० की परीक्षा उत्तीर्ण थी, उसके प्रमाण पत्र को आपने निरर्थक समझकर फाड़ दिया। माता की प्रेरणा प्राप्त कर आपने आजीवन अविवाहित रहकर देशसेवा का व्रत लिया।

विनोवा जी प्राचीन भारत की ऋषि-परम्परा के महापुरुष हैं और आत्म-कल्याण के लिए नहीं बल्कि लोक-कल्याण के लिए साधन-रत रहे। आप शारीरिक श्रम, स्वावलम्बन, सदाचार, राष्ट्रप्रेम, त्याग तथा सेवा आदि की भावनाओं की ओर बचपन से ही आकर्षित रहे हैं। आपने अंग्रेजी शिक्षा को अनुपयुक्त समझकर बी० ए० से ही पढ़ाई छोड़ दी तथा स्वाध्याय तथा मनन में लीन हो गये। विभिन्न विषयों और भाषाओं का अध्ययन-मनन आपका व्यसन रहा।

विनोवाजी बहुत दिनों तक साबरमती आश्रम में गाँधीजी के सम्पर्क में रहे। आपका सम्पूर्ण जीवन त्यागमय रहा है। गाँधी जी के ही तरह आपका जीवन भी सत्य और अहिंसामय रहा। गाँधी जी कहा करते थे कि सत्य और अहिंसा के विनोवा प्रतिरूप हैं। १६४० के व्यक्तिगत सत्याग्रह के लिए गाँधी जी ने विनोवा को पहला सत्याग्रही चुना था। विनोबाजी गाँधी जी के रचनात्मक कार्यक्रमों को अमली रूप देने के लिए सतत प्रयत्नशील रहते थे। आपने सर्वोदय, बुनियादी शिक्षा और भूदान के द्वारा राष्ट्र को सही मार्ग-दर्शन प्रदान करने का प्रयत्न किया। आप प्राचीन संतों की भाँति पैदल यात्रा करके जन-जागृति की।

विनोबाजी मराठी-भाषी थे किन्तु हिन्दी से आपका अगाध स्नेह था तथा गंगा की धारा के समान हिन्दी को आप भारत के लिए उपयोगी मानते थे। आप बराबर हिन्दी को राष्ट्रभाषा मानकर अधिकर हिन्दी ही बोलते तथा लिखते रहे। विनोवाजी का अध्ययन एवं अनुभव विस्तृत तथा साधना-समृद्ध थी। आपके विचार हमेशा मौलिक होते थे। विनोवा जी के भाषणों का लगातार श्रवण करने वालों का कहना है कि इनके भाषणों में पुनरावृत्ति नहीं होती थी।

विनोवाजी प्रवचन शैली में ही लिखते भी थे। प्रवचन शैली में वक्ता की यह चेष्टा होती है कि वह अपने विचार श्रोताओं तक पहुँचा दे। वह भाषा की झड़ी नहीं लगाता बल्कि एक-एक बिन्दु को सरल एवं सहज ढ़ंग से श्रोताओं के हृदय में उतारता चलता है। संस्कृत के गहन अध्ययन करने तथा बहु भाषा भाषी होने के कारण विनोबा जी का शब्द-भण्डार अत्यन्त समृद्ध था। आपकी वाणी में एक उन्मुक्त निस्पहृता थी जो कबीर की वाणी की याद दिलाती है।

विनोबाजी ने अनेक मौलिक ग्रन्थ लिखा है जिनमें गीता प्रवचन, विनोबा के विचार, जीवन और शिक्षण, आत्मज्ञान और विज्ञान, राजघाट की सन्निधि में, गाँव सुखी हम सुखी, भूदान-यज्ञ, स्थित-प्रज्ञ दर्शन आदि विशेष उल्लेखनीय हैं।

चिर तारुण्य की साधना विनोबाजी की पुस्तक जीवन और शिक्षण से संकलित है। स्वतन्त्र भारत के नवयुवकों के लिए चिर तरुण बने रहने के उपदेश की सार्थकता का महत्त्व किसी से छिपा नहीं है। विनोबाजी ने अपनी प्रवचन शैली में सुगम तर्क के माध्यम से कथ्य को अत्यन्त रोचक और प्रभावपूर्ण बनाया है।

प्रश्न १२— हजारीप्रसाद द्विवेदी के साहित्यिक जीवन को संक्षेप में लिखें।

उत्तर— हिन्दी के गद्य लेखकों में आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की गणना शीर्षस्थ रूप से की जाती है। आपका जन्म सन् १६०७ ई० में बलिया जिले के दूबे

का छपरा ग्राम में हुआ था। आपकी शिक्षा का प्रारम्भ संस्कृत भाषा से हुआ। आपने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से ज्योतिषाचार्य की परीक्षा उत्तीर्ण की। सन् १६४० में आप हिन्दी एवं संस्कृत के अध्यापक के रूप से शान्तिनिकेतन गये। वहाँ अनेक वर्षों तक कार्य करते हुए आप कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ के निकट सम्पर्क में आ गये। उसके बाद आप काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में अध्यक्ष नियुक्त हुए। कुछ समय तक आपने पंजाब विश्वविद्यालय में हिन्दी विभागाध्यक्ष के रूप में भी कार्य किया।

गौरवपूर्ण साहित्य-सेवा के फलस्वरूप सन् १६४६ में लखनऊ विश्वविद्यालय ने आपको डी० लिट्० की मानद उपाधि से विभूषित किया और भारत सरकार ने आपको सन् १६५७ ई० में पद्मभूषण का अलंकरण प्रदान किया। आपको मंगला प्रसाद पारितोषक भी मिला था। आपकी साहित्य चेतना निरन्तर जागृत रही और आप आजीवन साहित्य सृजन में लगे रहे। सन् १६८६ में आपका देहावसान हो गया।

द्विवेदीजी उच्चकोटि के निवन्धकार, उपन्यसकार, आलोचक, चिन्तक तथा शोधकर्ता थे। कवीन्द्र रवीन्द्र के विचारों का आपके साहित्य पर गहरा प्रभाव पड़ा है। आपकी भाषा-शैली प्रांजल, मृदुल, एवं प्रवाहपूर्ण है। उसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों और पाण्डित्यपूर्ण वाक्य- खण्डों की प्रचुरता है। भाषा एवं वर्णनों में अलंकारों की अधिकता के कारण आपके सर्जनात्मक साहित्य में कोमलकान्त पदावली का प्राचुर्य है, जिससे उसको पढ़ने में काव्यात्मक आनन्द की उपलब्धि होती है।

द्विवेदीजी जहाँ विद्वत्तापूर्ण एवं शोधपूर्ण निबन्धकार हैं, वहाँ श्रेष्ठ भावात्मक तथा वैयवित्तक निबन्धकार भी हैं। आपके वैयक्तिक निबन्ध हिन्दी निबन्ध-साहित्य की मूल्यवान निधि हैं। आपके व्यक्तित्व में विद्वत्ता और सरसता, पाण्डित्य और विदग्धता, गाम्भीर्य और विनोदमयता, प्राचीनता और नवीनता का समन्वय है, 'नाखून क्यों बढ़ते हैं,' 'आम फिर बौरा गये,' 'अशोक के फूल,' 'एक कुत्ता और एक मैना,' 'कुटज' आदि निबन्धों में आपके गाम्भीर्यपूर्ण मौलिक विचार पाठकों के मन को मुग्ध कर देते हैं। आपके निबन्धों का सम्पूर्ण रसास्वादन करने के लिए जगह-जगह पर बिखरे हुए सांस्कृतिक साहित्य के संदर्भों को जानना बहुत आवश्यक है।

कबीर सूर साहित्य, हिन्दी साहित्य की भूमिका, नाथ सम्प्रदाय, हिन्दी साहित्य का आदिकाल, हिन्दी साहित्य आदि आपके प्रसिद्ध आलोचन ग्रन्थ हैं। अशोक के फूल, विचार प्रवाह, कुटज, कल्पलता आदि आपके निबन्ध संकलन

हैं। बाण भट्ट की आत्मकथा, चारु चन्द्र लेख आदि आपके उपन्यास हैं।

गुरू नानकदेव में मानवतावादी मूल्यों का सहज सन्निवेश पाने के लिए द्विवेदीजी भावाभिभूत हो गये हैं। 'गुरू नानकदेव' श्रद्धेय एवं-स्तुत्य हैं, उनमें निबन्ध की गिनायी गयी सारी विशेषताएँ अनुस्यूत हैं।

प्रश्न १३– सुश्री महादेवी वर्मा का संक्षेप में साहित्यिक जीवन परिचय लिखिए।

उत्तर– महादेवी वर्मा का जन्म फर्रूखाबाद जिले के एक सम्पन्न परिवार में सन् १९०७ में हुआ था। इन्दौर में प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त करके आपने क्रायस्थवेल्ट गर्ल्स कालेज इलाहाबाद में शिक्षा प्राप्त की। तत्पश्चात् प्रयाग विश्वविद्यालय से संस्कृत में एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की। आपने दीर्घ काल तक प्रयाग महिला विद्यापीठ की प्रधानाचार्या के पद पर कार्य किया। इससे पूर्व आपने कुछ वर्ष चाँद पत्रिका का संपादन कुशलतापूर्वक किया था। इन्हें 'सेक्सरिया' एवं 'मंगला प्रसाद पुरस्कार' से सम्मानित किया जा चुका है। भारत सरकार ने इन्हें पद्मभूषण की उपाधि से अलंकृत किया है। आप उत्तर प्रदेश की विधान परिषद् की सम्मानित सदस्या भी रह चुकी हैं। आपका देहावसान ११ सितम्बर, १९८७ को प्रयाग में हुआ।

नीहार, रश्मि, नीरजा, सान्ध्य-गीत और दीप शिखा। स्मृति की रेखाएँ, अतीत के चलचित्र, शृंखला की कड़ियाँ, विवेचानात्मक गद्य, पथ के साथी, क्षणदा, मेरा परिवार आदि महादेवी जी की प्रख्यात साहित्यिक कृतियाँ हैं।

महादेवीजी छयावादी कवियों के बृहत्-चतुष्टयी में से एक हैं। आपकी कविताओं में वेदना का स्वर प्रधान है और भाव, संगीत तथा चित्र का अपूर्व संगम है। यद्यपि आपका प्रमुख क्षेत्र काव्य रहा है तथापि आपने उच्चकोटि की गद्य रचनायें की है। यामा और दीप शिखा की भूमिकाओं में आपने अपनी विशिष्ट साहित्यिक शैली में गंभीर आलोचनाएँ लिखी है। पथ के साथी में आपने कुछ प्रमुख साहित्यकारों के अतीत के चलचित्र एवं स्मृति की रेखाएँ में समाज के उपेक्षित वर्ग तथा दास-दासी आदि के मार्मिक रेखाचित्र प्रस्तुत किया है। मेरा परिवार में कुछ पालतू-पशु-पक्षियों के शब्द-चित्र बड़ी मार्मिक शैली में अंकित हैं।

महादेवीजी के रेखाचित्र में उनके गद्य का सर्वश्रेष्ठ रूप प्राप्त होता है। इनमें पीड़ित मानव तथा स्नेहिल पशुओं के सजीव चित्र प्रस्तुत हैं। इनमें आपकी गहन करुण अनुभूति तथा काव्यात्मक अभिव्यक्ति के दर्शन होते हैं। इन रचनाओं में

आपका गद्य प्रायः काव्यात्मक हो गया है जिसमें चित्रमयता तथा कल्पनाशीलता के प्रचुर दर्शन होते हैं। आपकी शैली में रस, आकर्षण तथा प्रभावोत्पादक तो है ही शब्द का चयन तथा वाक्य-विन्यास कलात्मक है। आपकी भाषा यद्यपि संस्कृत-निष्ठ है, फिर भी उसमें दूर्बोधता नहीं है। ये भावों की अभिव्यक्ति करने में पूर्णतया समर्थ हैं तथा विषय के अनुसार अपनी भाषा का परिवर्तन करती चलती हैं।

प्रश्न १४— श्री रामवृक्ष बेनीपुरी जी का संक्षेप में साहित्यिक जीवन परिचय अपने शब्दों में लिखिए।

उत्तर— रामवृक्ष बेनीपुरी जी का जन्म मुजफ्फरपुर जिले के बेनीपुर गाँव में एक साधारण किसान परिवार में हुआ था। बचपन में ही आपके माता-पिता का देहान्त हो गया। सन् १६२० में गाँधीजी के नेतृत्व में असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ होने पर आप अध्ययन छोड़कर स्वतंत्रता आन्दोलन में गाँधी जी के साथ हो लिए। बाद में आपने साहित्य सम्मेलन की विशारद परीक्षा उत्तीर्ण की और रामचरितमानस के पठन-पाठन से साहित्य की रचना की। साहित्य के क्षेत्र में आप पत्रकारिता के माध्यम से आये। पन्द्रह वर्ष की अवस्था में ही आप विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में लिखने लगे थे। देश-सेवा के पुरस्कार स्वरूप आपको जीवन का एक बड़ा अंश कारागार में बिताना पड़ा। आपने तरूण भारत, किसान मित्र, युवक, आदि कई पत्र-पत्रिकाओं का सफल सम्पादन भी बड़ी कुशलता से किया।

बेनीपुरीजी चतुरस्त्र प्रतिभा के धनी थे। आपने कहानी, उपन्यास, नाटक, संस्मरण, निबंध आदि गद्य की सभी प्रचलित विधाओं में साहित्य की रचना की है। बेनीपुरीजी ने अपने संगठनात्मक एवं प्रचारात्मक कार्यों द्वारा हिन्दी जनता की बड़ी सेवा की है। आपका नाम बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन के संस्थापकों में लिया जाता है। आपका पूरा साहित्य बेनीपुरी ग्रंथावली के रूप में कई खण्डों में प्रकाशित हो चुका है। आपके कुछ प्रसिद्ध ग्रंथ हैं-पतितों के देश में, (उपन्यास) चिता के फूल (कहानी),माटी की मूरतें (रेखाचित्र), अंबपाली (नाटक), गेहूँ और गुलाब (निबंध और रेखाचित्र), पैरों में पंख बाँधकर (यात्रा वृतांत), जंजीरें और दीवारें (संस्मरण) आदि।

बेनीपुरीजी एक कर्मठ देश-भक्त थे। देश-भक्त और साहित्यकार दोनों ही रूपों में आपका विशिष्ट स्थान है।

बेनीपुरीजी की शैली में शब्दों का चमत्कार सभी रचनाओं में देखा जा सकता है, विशेषतः रेखाचित्रों में। भाषा की सरलंता, सरसता और शैली में

प्रवाह की दृष्टि से आप हिन्दी के विशिष्ट शैलीकार हैं। शब्दों के तो आप जादूगर हैं। छोटे-छोटे वाक्यों में शब्दों का उपयुक्त प्रयोग आपकी निजी विशेषता है। इनकी भाषा-शैली रेखाचित्रों, संस्मरणों और गद्य-गीतों के विशेष अनुरूप है। सन् १९६८ में आपका देहान्त हो गया।

नींव की ईंट बेनीपुरीजी का सशक्त भावात्मक निबंध है इसमें आपने स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में अनेक अज्ञात, विस्मृत सेनानियों के बलिदान की सराहना की है, और स्वातंत्र्योत्तर भारत में कुर्सी के लिए होड़ की प्रवृत्ति की भर्त्सना की है।

प्रश्न १५— श्रीराम शर्मा के साहित्यिक जीवन का संक्षेप में परिचय दीजिए।

उत्तर— श्रीराम शर्मा का जन्म उत्तर प्रदेश के मैनपुरी जिले में हुआ। इन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की। ये शिकार साहित्य के सर्वाधिक प्रसिद्ध लेखक हैं। वास्तव में इनका लेखन इस दिशा में किया गया एक सफल प्रयास है।

पत्रकारिता के क्षेत्र में इनका महत्त्वपूर्ण स्थान है। इन्होंने विशाल भारत का कुशलता-पूर्वक सम्पादन किया। साथ ही इन्होंने शिकार साहित्य, संस्मरण और जीवनी लेखन की विधाओं में उल्लेखनीय कार्य किया है।

सन् बयालीस के संस्मरण और सेवाग्राम की डायरी आत्मकथा की शैली में लिखी हुई इनकी प्रसिद्ध कृतियाँ हैं। राष्ट्रीय आन्दोलन में सक्रिय भाग लेते रहने के कारण इन कृतियों में उनकी झलकियाँ अनायास आ गयी हैं। शिकार साहित्य से सम्बन्धित लेखों में घटना-विस्तार के साथ-साथ पशुओं के मनोविज्ञान का सम्यक् परिचय देते हुए इन्होंने उन्हें पर्याप्त रोचक बनाने में सफलता प्राप्त की है। इन्होंने ज्ञानवर्धक एवं विचारोत्तेजक भी निबन्ध लिखे हैं जो विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में समय-समय पर प्रकाशित होते रहे हैं।

शर्माजी की भाषा सहज, प्रवाहपूर्ण, एवं प्रभावशाली है। भाषा की दृष्टि से इन्हें प्रेमचन्द का निकटवर्ती लेखक माना जा सकता है। किन्तु इनकी शैलीगत विशेषता सर्वथा निजी है। इनकी शिकार सम्बन्धी प्रकाशित रचनाओं में शिकार, प्राणों का सौदा, बोलती प्रतिमा, जंगल के जीव विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

शिकार की प्रायः सभी कहानियाँ रोमांचक है। लंबी बीमारी के बाद सन् १९६७ में इनका देहान्त हो गया। प्रस्तुत लेख इनकी शिकार पुस्तक से लिया गया

है। इसमें लेखक ने बचपन के दिनों की एक रोमांचकारी घटना का वर्णन किया है। वर्णन इतना सजीव है कि पाठक का कुतूहल आद्यन्त बना रहता है। बाल-प्रकृति और बाल सुलभ चेष्टाओं का चित्रण स्मृति में विशेष रूप से द्रष्टव्य है।

प्रश्न १६— काका कालेलकर के साहित्यिक जीवन परिचय का संक्षेप में अपने शब्दों में उल्लेख कीजिए।

उत्तर— काका कालेलकर का जन्म सन् १८८५ में महाराष्ट्र के सतारा जिले में हुआ था। मातृभाषा मराठी के अलावा हिन्दी, गुजराती, बँगला, अंग्रेजी आदि भाषाओं पर इनका सम्यक् अधिकार है। जिन राष्ट्रीय नेताओं तथा महापुरुषों की राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार कार्य में विशेष अभिरुचि की, उनकी प्रथम पंक्ति में काका कालेलकर का नाम आता है। इन्होंने राष्ट्रभाषा के प्रचार को राष्ट्रीय कार्यक्रम के अन्तर्गत माना है। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा के सन् १९३८ के अधिवेशन में भाषण करते हुए कालेलकर ने कहा था- "हमारा राष्ट्रभाषा प्रचार एवं राष्ट्रीय कार्यक्रम है।" हिन्दी के अलावा गुजराती में भी आपने प्रशंसनीय कार्य किया है। इन्हें महात्मा गाँधी, रवीन्द्रनाथ टैगोर और टंडनजी के निकट संपर्क में आने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। अगस्त २१, १९८७ को आपका स्वर्गवास हो गया।

काका कालेलकर उच्चो कोटि के विचारक तथा विद्वान् हैं। भाषा के प्रचारक होने के साथ-साथ इन्होंने हिन्दी और गुजराती में मौलिक रचनाएँ भी लिखी। सरल और ओजस्वी भाषा में विचारात्मक निबन्ध के अतिरिक्त पर्याप्त मात्रा में यात्रा-साहित्य लिखा। इनकी भाषा शैली सजीव और ओजस्विनी है। इनकी दृष्टि बड़ी पैनी है, इसीलिए इनकी लेखनी से प्रायः ऐसे सजीव चित्र बन पड़ते हैं। इनकी भाषा-शैली सरल होने के कारण स्वाभाविक एवं प्रवाहपूर्ण है और विचारों का बाहुल्य होने के साथ ही उसमें कल्पना की उड़ान है। इनकी रचनाओं में अधिक काव्यात्मक प्रसंग मिलते हैं। भारतीय संस्कृति के गंभीर अध्येता होने के कारण प्रचीन भारत की झलक इनकी रचनाओं में दिखायी पड़ती है। आप सिद्धहस्त लेखक थे। किसी भी सुन्दर दृश्य का वर्णन अथवा जटिल समस्या का सुगम विश्लेषण आपके लिए आनन्द का विषय था। मराठी-भाषी काका साहब ने अपनी अधिकतर रचनाएँ गुजराती में लिखी है। संस्मरण, यात्रा, सर्वोदय, हिमालय प्रवास, लोकमाता, उस पार के पड़ोसी, जीवन लीला, बापू की झलकियाँ, जीवन का काव्य आदि रचनाएँ विशेषरूप से उल्लेखनीय हैं।

निष्ठामूर्ति कस्तूरबा में राष्ट्रमाता कस्तूरबा के जीवन की ऐसी अनेक झाँकियाँ दी गयी हैं जो भारतीय नारी के गौरवपूर्ण रूप का सुन्दर चित्र प्रस्तुत करती हैं।

प्रश्न १७— विनयमोहन शर्मा के साहित्यिक जीवन के विषय में संक्षेप में लिखें।

उत्तर— विनयमोहनशर्मा हिन्दी साहित्य के मान्य विद्वान् एवं प्रख्यात समालोचक हैं। इनका वास्तविक नाम शुकदेवप्रसाद तिवारी है। इनका जन्म सन् १८०५ में मध्य प्रदेश के काकरबेल नामक कस्बे में हुआ था। बनारस हिन्दू युनिवर्सिटी में इन्होंने शिक्षा ग्रहण की। साहित्य में इनकी रूचि छात्र-जीवन से ही थी। इनकी कविताओं का संग्रह भूले गीत सन् १९४४ में प्रकाशित हुआ था। साहित्य के विविध पक्षों पर ये सदा लिखते रहे हैं। ये शासकीय स्नातक कला-विज्ञान महाविद्यालय, रामगढ तथा महाकोसल महाविद्यालय, जबलपुर में प्राचार्य पद पर कार्य करने के बाद कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में प्रोफेसर और अध्यक्ष नियुक्त हुए।

विनयमोहनशर्मा ने शोध, समीक्षा और रचना तीनों ही क्षेत्रों में समान रूप से कार्य किया। इनकी महत्त्वपूर्ण कृतियाँ निम्नलिखित हैं—

निबन्ध संग्रह-दृष्टिकोण, साहित्यावलोकन, साहित्य शोध समीक्षा, भाषा-साहित्य-समीक्षा। संस्मरण और रेखाचित्र-रेखाएँ और रंग। शोध निबन्ध-हिन्दी को मराठी संतों की देन। शोध विज्ञान-शोधप्रबिधि, व्यावहारिक समीक्षा, कवि प्रसाद का आँसू और अन्य कृतियाँ। अनुवाद और रूपान्तर-हिन्दी गीत गोबिन्द।

शर्माजी के व्यक्तित्व में विवेकशील आलोचक, तथ्यान्वेषी शोधकर्ता तथा संवेदनशील रचनाकार तीनों का मणिकांचन संयोग है। इनके आलोचनात्मक निबन्ध इनके प्रौढ़ और विवेकपूर्ण निर्णय को सूचित करते हैं। ये सच्चे अर्थों में एक सहृदय समीक्षक हैं। इसीलिए इनकी आलोचना में नीरसता नहीं होती। इनके कुछ निबन्ध आत्माभिव्यंजक भी हैं। इनमें इन्होंने मुक्त-हृदय से अपनी भावनाओं को व्यक्त किया है। इनमें वस्तुओं और दृश्यों को अंकित करने की अच्छी क्षमता है। इसीलिए इनके वर्णन सजीव चल-चित्र से प्रतीत होते हैं।

इनकी भाषा सशक्त, प्रौढ़ और परिमार्जित है। सामान्यतः ये तत्सम शब्दों

का ही प्रयोग करते हैं, किन्तु विषय के अनुसार उसका रूप-परिवर्तन भी करते हैं। भाषा के शुद्ध प्रयोग पर ये बराबर ध्यान देते आये हैं। अभी इनके बहुत से निबन्ध अप्रकाशित हैं।

प्रस्तुत पाठ दक्षिण भारत की एक झलक में लेखक ने दक्षिण भारत के सुरम्य स्थलों, रीति-रिवाजों और दृश्यों का रोचक वर्णन करते हुए वहाँ की संस्कृति की सजीव झाँकियाँ प्रस्तुत की है। स्मरण रहे कि वर्णन आज से बहुत पूर्व का है; किन्तु राष्ट्रीय भावात्मक एकता के भाव का पोषण करने वाला यह यात्रा-वर्णन आज भी हमारे लिए सूचनाप्रद और रोचक है।

प्रश्न १८— श्री रामधारी सिंह दिनकर के साहित्यिक जीवन के विषय में संक्षेप से लिखें।

उत्तर— श्री रामधारी सिंह 'दिनकर' का जन्म सन् १९०८ ई० में बिहार राज्य के मुंगेर जिले के सिमरिया ग्राम में एक साधारण किसान परिवार में हुआ था। बी० ए० की परीक्षा पास करने के पश्चात् आपने कुछ दिनों के लिए उच्च माध्यमिक विद्यालय में प्रधानाध्यापक का कार्य सँभाला। उसके बाद आप सरकारी नौकरी में चले आये। आपकी सरकारी सेवा अवर-निबंधक के रूप में प्रारम्भ हुई। बाद में आप उपनिदेशक, प्रचार विभाग के पद पर स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद तक कार्य करते रहे। उसके बाद आपने कुछ समय तक बिहार विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष पद पर कार्य किया। सन् १९५२ में आप भारतीय संसद के सदस्य निर्वाचित हुए। कुछ समय तक आप भागलपुर विश्वविद्यालय के उपकुलपति भी रहे। उसके बाद भारत सरकार के गृह-विभाग में आप हिन्दी सलाहकार के रूप में कुछ दिनों तक हिन्दी के संवर्धन एवं प्रचार प्रसार के लिए कार्यरत रहे। आपको ज्ञानपीठ पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया। सन् १९६२ भारत सरकार ने दिनकरजी 'पद्मभूषण' के सम्मान से सम्मानित किया तथा सन् १९६२ में भागलपुर विश्वविद्यालय ने आपको डी० लिट्० की उपाधि प्रदान की। हिन्दी के प्रतिनिधि कवि व लेखक के रूप में दिनकर जी ने अनेक प्रतिनिधि मंडलों में रहकर विदेश यात्राएँ की। 'दिनकरजी' की असामयिक मृत्यु सन् १९४७ में हुई।

दिनकरजी की प्रसिद्धि का मुख्य आधार उनकी कविता है तथा देश और विदेश में आप मुख्यतः कवि के रूप में प्रसिद्ध हैं। लेकिन गद्य-लेखन में भी आप आगे रहे और अनेक प्रख्यात ग्रंथ लिखकर हिन्दी साहित्य की आपने समृद्धि की। इसका ज्वलंत उदाहरण **संस्कृत के चार अध्याय है** जो साहित्य अकादमी से

पुरस्कृत है।

रेणुका, हुंकार, कुरुक्षेत्र, रश्मिरथी परशुराम की प्रतीक्षा (काव्य) अर्धनारीश्वर, वट-पीपल, संस्कृति के चार अध्याय (निबंध) देश विदेश (यात्रा) आदि आपकी उल्लेखनीय कृतियाँ हैं।

छायावादोत्तर हिन्दी काव्यधारा के प्रमुख कवि, आलोचक, विचारक और निबन्धकार के रूप में 'दिनकरजी' का विशिष्ट स्थान है।

प्रश्न १९— श्री भगवतशरण उपाध्याय के साहित्यिक जीवन के विषय में संक्षेप में लिखें।

उत्तर— डॉ० भगवतशरण उपाध्याय का जन्म सन् १९१० में बलिया जिले के उजियार ग्राम में हुआ था। इन्होंने बनारस विश्वविद्यालय से प्राचीन इतिहास विषय में एम० ए० परीक्षा पास किया। ये संस्कृत साहित्य तथा पुरातत्त्व के समर्थ अध्येता एवं हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध प्रचारक रहे हैं। भारत के प्राचीन इतिहास एवं भारतीय संस्कृति का आपने विशेष रूप से अध्ययन किया है। क्रमशः पुरातत्त्व विभाग, प्रयाग संग्रहालय एवं लखनऊ विश्वविद्यालय के अध्यक्ष रहकर पिलानी में बिड़ला महाविद्यालय में प्राध्यापक पद पर कार्य किया। तत्पश्चात् ये विक्रम विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास विभाग के प्रोफेसर एवं अध्यापक पद पर कार्य कर अवकाश ग्रहण किए।

उपाध्यायजी ने कई बार यूरोप, अमरीका, चीन आदि विदेशों का भी भ्रमण किया। उन देशों में इन्होंने भारतीय संस्कृति एवं साहित्य पर बहुत से महत्त्वपूर्ण व्याख्यान दिये। सौ से भी अधिक पुस्तकें लिखकर आपने हिन्दी साहित्य को समृद्ध बनाने का सार्थक प्रयास किया है। आपकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि प्राचीन भारत के प्रमुख अध्येता एवं व्याख्याकार होते हुए भी आप संवादिता एवं परम्रावादिता से ऊपर हैं। वस्तुतः उपाध्यायजी अपने मौलिक एवं स्वतंत्र लेखन के लिए प्रसिद्ध हैं।

इनकी प्रमुख रचनाएँ हैं-विश्व साहित्य की रूपरेखा, साहित्य और खून के छींटे, इतिहास के पन्नों पर, कलकत्ता से पीकिंग, कुछ फीचर कुछ एक इतिहास साक्षी है, ठूँठा आम, सागर की लहरों पर, विश्व को एशिया की देन एवं इंडिया इन कालिदास आदि। इनकी पुस्तकें विदेशों में बड़ी रूचि के साथ पढ़ी जाती हैं।

संकलित पाठ अजन्ता पुरातत्त्व सम्बन्धी लेख है, जिसमें लेखक ने अजन्ता

ी गुफाओं की चित्रकारी और शिल्प के इतिहास एवं सौंदर्य का ही वर्णन नहीं किया है बल्कि दर्शक के मन पर पड़ने वाले उनके भावों को भी अपनी मनोरम शैली में प्रस्तुत कर दिया है।

प्रश्न २०— लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय के साहित्यिक जीवन के विषय में संक्षेप से लिखें।

उत्तर— लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय का जन्म ११ अगस्त, १६१४ को अलीगढ़ में हुआ। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा अलीगढ़ के धर्म समाज कालेज में हुई। वहाँ से इण्टर की परीक्षा उत्तीर्ण करके १६३३ में इलाहाबाद विश्वविद्यालय में बी० ए० के छात्र होकर आये और यहीं से बी० ए० एम० ए०, डी० फिल० और डी० लिट्० की उपाधियाँ इन्होंने प्राप्त की। सन् १६४४ में इन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अध्यापन-कार्य प्रारम्भ किया।

डा० वार्ष्णेय के अध्ययन और लेखन का विशेष क्षेत्र साहित्य, इतिहास और आलोचना रहा है। ईसा की उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी के हिन्दी साहित्य का इन्होंने विशेष रूप से अध्ययन किया है। इनके लिखे हुए अनेक निबन्ध ग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं। **भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और बीसवीं शताब्दीः हिन्दी साहित्यः** इनके ये दो ग्रंथ उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत हुए हैं। आलोचना के क्षेत्र में वार्ष्णेयजी ऐतिहासिक तथा समाजशास्त्रीय आलोचना के विशेषज्ञ माने जाते हैं। डा० वार्ष्णेय द्वारा प्रणीत लगभग २० ग्रंथ हैं जिसमें से **आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका, आधुनिक हिन्दी साहित्य, हिन्दी साहित्य का इतिहास, फोर्ट विलियम कालेज, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, बीसवीं शताब्दीः हिन्दी साहित्यः नये सन्दर्भ** आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। डॉ० वार्ष्णेय की लेखन-शैली सरल और सुबोध है। ये मुहावरेदार और सरल हिन्दी लिखने में विश्वास करते हैं और तत्सम शब्दों के अत्यधिक मोह में नहीं पड़ते। इनके विचारों में स्पष्टता रहती है। भावों की प्राञ्जलता एवं व्यंग्यात्मकता इनके निबन्धों में पायी जाती है।

प्रस्तुत साहित्य शीर्षक निबन्ध से साहित्य के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है। यह निबन्ध इनकी सरल और सर्वग्राह्य शैली का उत्तम उदाहरण है।

प्रश्न २१— श्री धर्मवीर भारती के साहित्यिक जीवन के विषय में संक्षेप से अपने शब्दों में लिखें।

उत्तर— धर्मवीर भारतीय का जन्म २५ दिसम्बर सन् १६२६ को इलाहाबाद में हुआ। आपने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से हिन्दी विषय लेकर एम० ए० और

पी-एच-डी० की उपाधियाँ प्राप्त की। आपने कुछ वर्षों तक वहीं से प्रकाशित होने वाले साप्ताहिक पत्र 'संगम' का भी संपादन किया। कुछ समय तक आप इलाहाबाद विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में प्राध्यापक भी रहे। सन् १९५९ से ये बम्बई से प्रकाशित होने वाले हिन्दी के प्रसिद्ध साप्ताहिक पत्र 'धर्मयुग' के संपादक रहे।

धर्मवीर भारती एक प्रतिभाशाली कवि, कथाकार एवं नाटककार हैं। आपकी कविताओं में सामाजिक तत्त्व की रमणीयता के साथ बौद्धिक उत्कर्ष की आभा झलकती है। कहानियों और उपन्यासों में आपने सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक समस्याओं को उठाते हुए कुछ बड़े ही जीवन्त चरित्र प्रस्तुत किये हैं। साथ ही समाज की विद्रूपता पर व्यंग्य करने की विलक्षण क्षमता भारतीजी में है।

भारतीजी की उल्लेखनीय कृतियों में **कनुप्रिया, ठंडा लोहा, अंधायुग और सात गीत वर्ष** (काव्य), **गुनाहों का देवता, सूरज का सातवाँ घोड़ा** (उपन्यास), **नदी प्यासी थी** (नाटक) **कहनी-अनकहनी, ठेले पर हिमालय, पश्यंती** (निबन्ध संग्रह) हैं।

इसके अतिरिक्त विश्व की कुछ प्रसिद्ध भाषाओं की कविताओं का आपके द्वारा किया गया हिन्दी अनुवाद भी देशान्तर के नाम से प्रकाशित हुआ है।

सन् १९७२ में भारत सरकार ने भारती को 'पद्मश्री' की उपाधि से अलंकृत किया।

प्रस्तुत निबन्ध **ठेले पर हिमालय** में हिमालय की रमणीय शोभा का वर्णन है। शीर्षक की विचित्रता के साथ नैनीताल से कौसानी की यात्रा का वर्णन बहुत रोचक है और शैली में नवीनता इसका मुख्य कारण है।

प्रश्न २२— श्री जयप्रकाश भारती के साहित्यिक जीवन का संक्षेप में परिचय दीजिए।

उत्तर— जयप्रकाश भारती युवा पत्रकार और उदीयमान लेखक हैं। हिन्दी की साहित्यिक उपलब्धि में विविध वैज्ञानिक लेख प्रस्तुत करने में आपको विशेष सफलता और ख्याति मिली है। भारतीजी का जन्म मेरठ में हुआ। आपके पिता श्री रघुनाथसहाय एडवोकेट मेरठ के पुराने काँग्रेसी और समाजसेवी पुरुष हैं। भारती जी ने मेरठ में ही बी० एस-सी० तक अध्ययन किया। आपने छात्र जीवन में ही अनेक समाजसेवी संगठनों में प्रमुख रूप से भाग लेना आरम्भ कर दिया था। मेरठ में साक्षरता प्रसार के कार्य में आपका उल्लेखनीय योगदान रहा तथा वर्षों तक आपने निःशुल्क प्रौढ़ रात्रि-पाठशाला का संचालन किया।

आपने 'सम्पादन कला विशारद' 'दैनिक प्रभात' (मेरठ) तथा 'नवभारत टाइम्स में पत्रकारिता का व्यावहारिक प्रशिक्षण प्राप्त किया। साक्षरता निकेतन में, नवसाक्षर के लेखन का आपने विशेष प्रशिक्षण प्राप्त किया। हिन्दी के पत्रकारिता-जगत् और किशोरोपयोगी वैज्ञानिक साहित्य के क्षेत्र को आपसे बहुत आशाएँ हैं।

आपकी अनेक पुस्तकें यूनेस्कों एवं भारत सरकार द्वारा पुरस्कृत हैं। जैसे—हिमालय की कार, अनन्त आकाश, अथाह सागर (यूनेस्को द्वारा पुरस्कृत), विज्ञान की विभूतियाँ, देश हमारा देश हमारा, चलो चाँद पर चलें (भारत सरकार द्वारा पुरस्कृत)।

आपकी अन्य भी प्रकाशित पुस्तकें हैं:—

अनेक वर्षों तक आप साप्ताहिक हिन्दुस्तान में सह-सम्पादक रहे। कुछ समय आप प्रसिद्ध बाल-पत्रिका नंदन के सम्पादक रहे। आपके लेख कहानियां; रिपोर्ताज सभी प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे हैं। रेडियो पर भी आपकी वार्ताओं तथा रूपकों का प्रसारण हुआ है।

भारतीजी की भाषा सरल तथा शैंली रोचक है। विज्ञान की जानकारी को साधारण जनता और किशोर मानस तक पहुँचाने के लिए आप वर्णन को रोचक और नाटकीय बनाते हैं। आवश्यकता के अनुसार यद्यपि विज्ञान की पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग भी आप अपने लेखों में करते हैं फिर भी जटिलता नहीं आने पाती है। आपकी शैली में वर्णनात्मकता और चित्रात्मकता का संयोग रहता है। भारतीजी वैज्ञानिक प्रसंगों का यथाशक्य विवरण भी अपने लेखों में प्रस्तुत करते हैं किन्तु गम्भीरता नहीं आने देते। कवित्व का पुट देकर आप अपने निबन्धों को सरल बनाते हैं, साथ ही विज्ञान की यथार्थता की रक्षा भी करते हैं। वैज्ञानिक विषयों को हिन्दी में ढ़ालने के लिए आपने एक मार्ग दिखलाया है।

प्रस्तुत निबन्ध पात्री में चंदा और चाँद पर आदमी में विचार-सामग्री, विवरण और इतिहास के साथ एक रोमांचक कथा का आनन्द प्राप्त होता है। लेखक ने पृथ्वी और चन्द्रमा की दूरी चन्द्रयान और उसको ले जाने वाले अन्तरिक्ष-यान तथा चन्द्र-तल के वातावरण का सजीव परिचय प्रस्तुत किया है तथा अन्तरिक्ष-यात्रा का संक्षिप्त इतिहास भी प्रस्तुत किया है।

❑

पूर्वमध्यमा : प्रथम वर्ष

('ख' वर्ग हिन्दी : पञ्चम पत्र)

द्वितीय भाग

लघु प्रश्न तथा उत्तर

(१) प्रश्न : निम्नलिखित सूक्ति की सप्रसंग व्याख्या कीजिए—

'जब मैं था तब हरि नहीं।'

उत्तर : प्रसंग—प्रस्तुत अवतरण सन्त कवि कबीरदास द्वारा लिखित 'कबीर-ग्रन्थावली' के साखी के दोहों से अवतरित किया गया है। इसके भीतर कवि ने अहंकार को परमात्मा के आने में बाधक कहा है।

व्याख्या—कवि का कथन है कि जब तक मेरे हृदय में अहंकार था, तब तक मेरे हृदय में परमात्मा का निवास नहीं था।

काव्य-सौष्ठव—कवि ने इन पंक्तियों में यह दिखलाने का प्रयत्न किया है कि अहंकारी के हृदय में भगवान् का वास नहीं होता। अतः अहंकार सर्वथा त्याज्य है।

(२) प्रश्न : निम्नलिखित सूक्ति की सप्रसंग व्याख्या कीजिए—

'अविगत गति कछु कहत न आवै।'

उत्तर : प्रसंग—प्रस्तुत अवतरण कृष्णभक्त कवि सूरदास द्वारा रचित 'सूरसागर' के भक्ति के पदों से अवतरित किया गया है। इसके भीतर भक्तकवि सूरदास ने निर्गुण ब्रह्म की अगमता का वर्णन किया है।

व्याख्या—कृष्णभक्तकवि सूरदास का कथन है कि निर्गुण ब्रह्म की गति बड़ी ही विचित्र है, वह कहने में नहीं आती।

काव्य-सौष्ठव—इन पंक्तियों में कवि ने निर्गुण ब्रह्म की अगमता का अच्छा चित्रण किया है, क्योंकि वह सत्, रज तथा तम—तीनों गुणों से परे निराकार होता है। उस निराकार निर्गुण ब्रह्म का कौन वर्णन कर सकता है?

(३) प्रश्न : निम्नलिखित सूक्ति की सप्रसंग व्याख्या कीजिए—

'ऊधो मन न भयो दस बीस।

एक हुतो सो गयो स्याम संग, को अवराधै ईस।'

उत्तर : प्रसंग—प्रस्तुत अवतरण भक्तकवि सूरदास द्वारा रचित 'सूरसागर' के

भ्रमर गीत से अवतरित किया गया है। इसके भीतर उस समय का वर्णन है, जिस समय उद्धवजी मथुरा से भगवान् कृष्ण के ज्ञान-योग तथा निर्गुण का सन्देश लेकर गोकुल में गोपियों के समक्ष उपस्थित होकर उन्हें निर्गुण ब्रह्म की आराधना के लिए उपदेश दे रहे हैं।

व्याख्या—कवि का कथन है कि उद्धव से निर्गुण ब्रह्म की आराधना की बात सुनकर गोपियाँ कहती हैं कि हे उद्धवजी ! मन दस-बीस तो होता नहीं, एक ही होता है। वह मन कृष्ण के मथुरा जाने पर उनके साथ ही चला गया। अब किस मन से आपके निर्गुण ब्रह्म की आराधना करें।

काव्य-सौष्ठव—प्रस्तुत पंक्तियों में कवि ने भगवान् कृष्ण के प्रति गोपियों की अनन्य भक्ति पर सुन्दर प्रकाश डाला है।

(४) प्रश्न : निम्नलिखित सूक्ति की सप्रसंग व्याख्या कीजिए—

'निरगुन कौन देस को बासी ?
मधुकर कहि समुझाइ सौंह दै, बूझति साँच न हाँसी ।।'

उत्तर : प्रसंग—प्रस्तुत अवतरण भक्तकवि सूरदास द्वारा लिखित 'सूरसागर के भ्रमरगीत से अवतरित किया गया है। इसके भीतर उस समय का वर्णन है जिस समय उद्धवजी भगवान् कृष्ण के ज्ञान-योग तथा निर्गुण का सन्देश लेकर गोकुल में गोपियों के समक्ष उपस्थित होकर उन्हें निर्गुण की आराधना के लिए कहते हैं।

व्याख्या—कवि का कथन है कि उद्धवजी से निर्गुण की आराधना की बात सुनकर गोपियाँ कहती हैं कि हे उद्धवजी ! आप जिस निर्गुण की आराधना के लिए कह रहे हैं, वह किस देश का निवासी है ? आप हमें समझा करके बता दें। हम शपथ देकर सच्ची बात पूछ रही हैं, हँसी नहीं कर रही हैं ?

काव्य-सौष्ठव—प्रस्तुत पंक्तियों में कवि ने गोपियों के तर्क का अच्छा वर्णन किया है। वास्तव में निर्गुण का कोई देश नहीं होता और न तो उसकी कोई माता है और न उसके कोई पिता ?

(५) प्रश्न : निम्नलिखित सूक्ति की सप्रसंग व्याख्या कीजिए—

'बुझै न काम-अगिनि तुलसी, कहुँ विषय-भोग बहु घी ते।'

उत्तर : प्रसंग—प्रस्तुत अवतरण रामभक्त कवि गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित 'विनयपत्रिका' से अवतरित किया गया है। इसके भीतर कवि ने मन को समझाया है कि वह मनुष्य-शरीर पाकर यदि भगवान् राम का भजन नहीं किया, तो अवसर बीत जाने पर पछताना पड़ेगा।

व्याख्या—कवि का कथन है कि मनुष्य का शरीर प्राप्त करना बड़ा ही दुर्लभ है। हे मन ! अब तुम विषय-वासनाओं को छोड़ दो। जिस प्रकार अग्नि में घृत डालने से वह बुझती नहीं बल्कि और प्रज्वलित होती है, उसी प्रकार वासनाएँ विषयों के मिलने से समाप्त नहीं होतीं बल्कि और बढ़ती हैं।

काव्य-सौष्ठव—प्रस्तुत पंक्तियो में कवि ने भगवान् राम के चरणारविन्द मे प्रेम पर बल दिया है।

(६) प्रश्न : निम्नलिखित सूक्ति की सप्रसंग व्याख्या कीजिए—

'ऐसो को उदार जग माँहीं।

बिनु सेवा जो दुवै दीन पर, राम सरिस कोउ नाहीं।'

उत्तर : प्रसंग— प्रस्तुत अवतरण रामभक्त कवि गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित 'विनयपत्रिका' से अवतरित किया गया है। इसके भीतर कवि ने भगवान् राम की उदारता का वर्णन किया है।

व्याख्या—कवि का कथन है कि इस संसार में भगवान् राम के समान दूसरा कौन उदार है ? बिना सेवा के जो गरीबों पर प्रसन्न हो जाय, वैसा राम के समान दूसरा कोई नहीं है।

काव्य-सौष्ठव—प्रस्तुत पंक्तियों में कवि ने भगवान् राम की अनन्य दानशीलता पर अच्छा प्रकाश डाला है। अभिप्राय यह है कि सेवा पर तो सभी कुछ-न-कुछ देते हैं, परन्तु भगवान् राम ही ऐसे हैं जो बिना सेवा के सर्वस्व दे देते हैं।

(७) प्रश्न : निम्नलिखित सूक्ति की सप्रसंग व्याख्या कीजिए—

'पानी परात को हाथ छुयौ नहिं, नैनन के जल सौं पग धोए।'

उत्तर : प्रसंग—प्रस्तुत अवतरण कवि नरोत्तमदास द्वारा लिखित 'सुदामा चरित' नामक काव्य से अवतरित किया गया है। इसके भीतर कवि ने उस समय का वर्णन किया है जिस समय भगवान् कृष्ण द्वारपाल से मित्र सुदामा के आगमन का समाचार सुनते ही दौड़कर उनके निकट जाते हैं।

व्याख्या—कवि का कथन है कि मित्र सुदामा की ऐसी दीन दशा देखकर दयालु भगवान् कृष्ण रोने लगे और उनके पैर धोने के लिए परात के पानी में हाथ भी नहीं लगाये, बल्कि अपनी आँखों के जल से ही उन पैरों को धो दिये।

काव्य-सौष्ठव—प्रस्तुत पंक्तियों में कवि ने भगवान् कृष्ण की दयालुता तथा मैत्री पर सुन्दर प्रकाश डाला है।

(८) प्रश्न : निम्नलिखित सूक्ति की सप्रसंग व्याख्या कीजिए—

'या मुरली मुरलीधर की, अधरान धरीं अधरा न धरौंगी।'

उत्तर : प्रसंग—प्रस्तुत अवतरण कृष्णभक्त कवि रसखान द्वारा लिखित सवैया से अवतरित किया गया है। इसके भीतर कवि ने भगवान् कृष्ण के वियोग में व्याकुल विरहिणी गोपियों का वर्णन किया है, जिसमें एक गोपी कृष्ण का रूप बनाकर उनका अभिनय करना चाहती है।

व्याख्या—कवि का कथन है कि एक गोपी अपनी सखियों से कह रही है कि हे सखि ! मैं तुम्हारे कथनानुसार कृष्ण के सभी रूप बनाऊँगी, परन्तु उनकी मुरली को, जिसे वे अपने ओष्ठ पर लगाते थे, अपने ओष्ठ पर नहीं लगाऊँगी।

काव्य-सौष्ठव—कवि ने प्रस्तुत पंक्तियों में कृष्ण के वियोग में दु:खित गोपियों का अच्छा चित्र अंकित किया है। गोपियाँ मुरली को सौत समझ रही हैं, क्योंकि यह कृष्ण के अधरामृत का पान करती है। अतः एक गोपी कृष्ण के सभी स्वांग करने को प्रस्तुत है, परन्तु मुरली को अपने ओठों पर लगाने को प्रस्तुत नहीं है।

(९) प्रश्न : निम्नलिखित सूक्ति की सप्रसंग व्याख्या कीजिए—

'बिना प्रान प्यारे भये दरस तुम्हारे हाय,
मरेहू पै आँखें ये खुली ही रह जायेंगी।'

उत्तर : प्रसंग—प्रस्तुत अवतरण भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा लिखित 'प्रेममाधुरी' से अवतरित किया गया है। इसके भीतर कवि ने विरहिणी गोपियों के विरह का वर्णन किया है।

व्याख्या—कवि का कथन है कि विरहिणी गोपियाँ भगवान् कृष्ण के विरह में उनके आगमन की प्रतीक्षा करती हुई व्याकुल होकर कह रही हैं कि हाय प्राणप्यारे ! तुम्हारे विरह में प्राण निकलने पर भी तुम्हारे दर्शन हेतु मेरी आँखें खुली ही रहेंगी।

काव्य-सौष्ठव—प्रस्तुत पंक्तियों के भीतर कवि ने विरहिणी गोपियों के वियोग का अच्छा चित्रण किया है। यह प्रत्यक्ष दृष्टिगत होता है कि मृत्यु होने पर आँखें खुली ही रहती हैं, मानो वे अपनी प्रिय वस्तु को देखना चाहती हैं।

(१०) प्रश्न : निम्नलिखित सूक्ति की सप्रसंग व्याख्या कीजिए—

'बढ़ जाता है मान बीर का, रण में बलि होने से।
मूल्यवती होती सोने की, भस्म पथा सोने की।।'

उत्तर : प्रसंग—प्रस्तुत अवतरण सुभद्राकुमारी चौहान द्वारा लिखित 'त्रिधारा' नामक काव्य के झाँसी की 'रानी की समाधि पर' नामक कविता से अवतरित किया गया है।

व्याख्या—कवयित्री का कथन है कि युद्धभूमि में बलिदान से वीरों का मान बढ़ जाता है, क्योंकि सोना की अपेक्षा उसके भस्म का मूल्य बहुत अधिक होता है। इसी प्रकार झाँसी की रानी (लक्ष्मीबाई) की अपेक्षा उनकी समाधि का ही मान अधिक है, क्योंकि इस समाधि में स्वतन्त्रता की चिनगारी निहित है।

काव्य-सौष्ठव—इन पंक्तियों के भीतर कवयित्री ने झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई की समाधि का सुन्दर चित्रण किया है।

(११) प्रश्न : काव्य किसे कहते हैं ? इसके कितने भेद हैं ?

उत्तर : रमणीय शब्द के प्रतिपादक शब्द को काव्य कहते हैं—

'रमणीयार्थप्रतिपादक: शब्द: काव्यम्।'

काव्य के दो भेद हैं—१. श्रव्य काव्य, २. दृश्य काव्य।

(१) श्रव्य काव्य के मुख्यत: दो भेद हैं—१. महाकाव्य, २. खण्डकाव्य।

महाकाव्य—महाकाव्य में जीवन की सवा ग झाँकी होती है और उसमें विविध पक्षों का एक संश्लिष्ट चित्र होता है। उसका विषय महान् होता है। उसमें पुरुष तथा स्त्री—दोनों प्रकार के पात्र होते हैं। उन पात्रों में एक नायक होता है। महाकाव्य का अन्त सुखान्त होता है। इसका कथानक किसी प्रसिद्ध ऐतिहासिक या पौराणिक कथा के आधार पर होता है। इसका नायक धीरोदात्त के गुणों से समन्वित होता है। इसमें शृंगार, वीर, करुण अथवा शान्त रस की प्रधानता होती है। इसके अतिरिक्त अन्य रस भी रहते हैं। इसमें प्रसिद्ध अलंकार तथा प्रकृति का वर्णन भी रहता है।

महाकाव्य प्राय: सर्गों या सोपानों (काण्डों) में विभाजित रहते हैं। उदाहरण के लिए रामचरितमानस, साकेत, कामायनी तथा उर्वशी—हिन्दी काव्य के प्रसिद्ध महाकाव्य हैं।

खण्डकाव्य—महाकाव्य में जहाँ सम्पूर्ण जीवन की झाँकी रहती है, वहाँ खण्डकाव्य में जीवन के किसी एक पक्ष का चित्रण होता है।

उसमें किसी एक घटना या व्यापार का चित्रण होता है। आकार में वह महाकाव्य से बहुत छोटा होता है।

उदाहरण के लिए सुदामाचरित्र, जयद्रथवध, रश्मिरथी तथा पथिक हिन्दी काव्य के प्रसिद्ध खण्डकाव्य हैं।

मुक्तक काव्य—मुक्तक काव्यों में कथाओं की सूत्रबद्धता या कथा की प्रवाहिकता नहीं रहती। यह काव्य स्वतन्त्र होता है, परन्तु इसके प्रत्येक पद आनन्ददायक होते हैं।

इसके २ भेद हैं—(१) गेय पद, (२) सुपाठ्य पद।

उदाहरण के लिए गेय पद के अन्तर्गत 'मीराबाई पदावली' तथा सुपाठ्य पदों में 'बिहारी सतसई' प्रसिद्ध मुक्तक काव्य हैं।

(१२) प्रश्न : हिन्दी साहित्य (काव्य) का काल-विभाजन कीजिए।

उत्तर : दशवीं शताब्दी से लेकर आज तक के समय को जिसे हिन्दी साहित्य ने विभिन्न परिस्थितियों में पार किया है, उसे हम चार कालों में विभक्त कर सकते हैं।

काल-विभाजन

१. आदिकाल—सं. १०५० वि. से सं. १३७५ वि. तक।
२. भक्तिकाल—सं. १३७५ वि. से सं. १७०० वि. तक।
३. रीतिकाल—सं. १७०० वि. से सं. १९०० वि. तक।
४. आधुनिक काल—सं. १९०० वि. से अब तक।

(१३) प्रश्न : आदिकाल की प्रमुख विशेषताएँ तथा दो कवियों के नाम लिखिए।

उत्तर : आदिकाल की प्रमुख विशेषताएँ—आदिकाल की प्रमुख विशेषताएँ यह है कि यह काल लड़ाई-झगड़ों से परिपूर्ण रहा। इस काल के अन्तर्गत आने वाले सभी कवि राजाश्रित रहे। वे कविता करने के साथ-साथ तलवार चलाना भी जानते थे। यह ऐसा युग था कि इस काल की स्त्रियाँ भी वीरांगनाएँ होती थीं। यह आदि काल वीरगाथा काल के नाम से भी प्रसिद्ध है।

आदिकाल के प्रमुख दो कवि—१. चन्दबरदायी, २. जगनिक।

(१४) प्रश्न : भक्तिकाल की प्रमुख विशेषताएँ तथा दो कवियों के नाम लिखिए।

उत्तर : भक्तिकाल की प्रमुख विशेषताएँ—आदिकाल के अवसान के पश्चात् भक्तिकाल का श्रीगणेश हुआ। आदिकाल में लड़ाई-झगड़े होने से धन-जन दोनों की क्षति हुई। फलतः जनता कल्याण का दूसरा मार्ग न देखकर ईश्वर के शरणापन्न हुई, ईश्वर की भक्ति में लीन हुई। भक्तिकाल दो भागों में विभक्त हो गया—१. निर्गुण, २. सगुण।

निर्गुण काल—निर्गुण काल के भीतर ज्ञान और प्रेम दो प्रकार के गीत गाये गये। फलतः पहली शाखा का नाम ज्ञानाश्रयी तथा दूसरी शाखा का नाम प्रेमाश्रयी पड़ा। इन शाखाओं का लक्ष्य क्रमशः ज्ञान और प्रेम के द्वारा निर्गुण ब्रह्म को प्राप्त करना था।

ज्ञानमार्गी शाखा के प्रधान कवि—सन्त कबीरदास।

प्रेममार्गी शाखा के प्रधान कवि—सूफी कवि मलिक मुहम्मद जायसी।

इन दोनों कवियों का मार्ग साधारण जनता के लिए दुरूह था।

सगुण काल—निर्गुण काल के भीतर अनेक प्रकार की अगमता देखकर कुछ कविवरों ने जनता के हृदय का आश्रय लिया, उन्हें ऐसे ब्रह्म की आवश्यकता थी जिसे हाथ, पाँव, मुख आदि सभी अंग होते और वे मनुष्य के रूप में आकर अपने सबल हाथों से उनकी रक्षा करता तथा अपने कानों से उनकी पुकार सुनता। इस प्रकार के ब्रह्म केवल राम और कृष्ण ही हो सकते थे। परिस्थिति ने जनता के हृदय की पुकार सुन ली। फलतः तुलसी और सूर ऐसे भक्तकवियों का उदय हुआ। ये भक्तकवि इन्हीं राम और कृष्ण का आश्रय लेकर हिन्दी साहित्य (काव्य) में सगुण धारा के अन्तर्गत रामाश्रयी तथा कृष्णाश्रयी धारा प्रवाहित कर जनता के मुरझाये हुए हृदय-पुष्प को सरस बनाने लगे। इस काल में सगुण ब्रह्म के गीत गाये गये।

रामाश्रयी शाखा के प्रधान कवि—गोस्वामी तुलसीदास।

कृष्णाश्रयी शाखा के प्रधान कवि—कृष्णभक्त कवि सूरदास।

(१५) प्रश्न : रीतिकाल की प्रमुख विशेषताएँ तथा दो कवियों के नाम लिखिए।

उत्तर : रीतिकाल की प्रमुख विशेषताएँ—भक्तिकाल के समाप्त हो जाने के अनन्तर रीतिकाल का प्रादुर्भाव हुआ। यह ऐसा युग था कि सभी राजा तथा प्रजा विलासिता में मग्न थे। इस समय जितने भी कवि हुए, प्रायः राजाश्रित थे। इन कवियों का वर्णनीय विषय वही हुआ जो राजाओं का प्रिय था। वे शृंगार रस के दोहे या पद बनाकर राजाओं को प्रसन्न करते थे। इन कवियों का प्रधान ध्येय नायिकाओं का हाव-भाव तथा कटाक्ष वर्णन करना था, परन्तु इस युग में ऐसे भी कवि हुए जिन्होंने शृंगार की बहती हुई धारा को, जो विलासिता से आप्लावित होकर बह रही थी, मोड़कर अपनी ओजस्विनी वाणी के द्वारा वीर रस में परिणत कर दिया। जहाँ पायलों की झनकार सुनाई देती थी, वहाँ तलवारों की झनकार सुनाई देने लगी। इस युग में लक्ष्य तथा लक्षण दोनों प्रकार के काव्य लिखे गये। लक्ष्य (कविता) लिखने वाले कवि तथा लक्षण (छन्द, रस, अलंकार, शब्दशक्ति) लिखने वाले आचार्य के नाम से प्रसिद्ध हुए।

रीतिकाल के प्रसिद्ध कवियों के नाम—

१. कविवर बिहारीलाल (शृंगार रस के कवि)।

२. कवि भूषण (वीर रस के कवि)।

३. कवि चिन्तामणि त्रिपाठी (कवि तथा आचार्य)।

(१६) प्रश्न : आधुनिक काल की प्रमुख विशेषताएँ तथा दो कवियों के नाम लिखिए।

उत्तर : आधुनिक काल की प्रमुख विशेषताएँ—रीतिकाल के अवसान हो जाने के बाद आधुनिक काल का प्रारम्भ हुआ। इस काल में गद्य-पद्य दोनों की रचनाएँ हुईं और वर्तमान समय में भी हो रही हैं। यहाँ हम साहित्य (काव्य) सम्बन्धी रचनाओं का विवेचन कर रहे हैं। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के समय से आधुनिक पद्य (काव्य) की रचनाएँ प्रारम्भ हुईं। उनके समय व्रजभाषा की प्रधानता थी, परन्तु आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के समय से खड़ी बोली ने अपना अस्तित्व जमा लिया।

इस काल के कवियों में ऐसे प्रौढ़ कवि हुए जिनके नाम भुलाये नहीं जा सकते—जगन्नाथदास 'रत्नाकर', अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', मैथिलीशरण गुप्त, जयशंकर प्रसाद, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', सुमित्रानन्दन पन्त, श्यामनारायण पाण्डेय, सुभद्राकुमारी चौहान, महादेवी वर्मा तथा रामधारीसिंह 'दिनकर'।

इधर कुछ वर्षों से हिन्दी साहित्य (काव्य) के भीतर रहस्यवाद, छायावाद, प्रगतिवाद तथा प्रयोगवाद के नाम से अनेक वाद प्रचलित हैं, परन्तु उनमें अन्तिम प्रयोगवाद की प्रगति जोरों पर है।

आधुनिक काल के प्रमुख दो कवि—

१. मैथिलीशरण गुप्त।

२. जयशंकर प्रसाद।

(१७) प्रश्न : काव्य में रहस्यवाद की सोदाहरण विशेषताएँ लिखिए।

उत्तर : काव्य में रहस्यवाद की विशेषताएँ—आधुनिक हिन्दी काव्य (साहित्य) के प्रचलित वादों में रहस्यवाद का महत्त्वपूर्ण स्थान है। जब कवि अपनी कविताओं में उस चिरन्तन शक्ति का रहस्यमय विवेचन करता है अथवा प्रकृति के रहस्य का उद्‌घाटन करता है, तब उस समय की कविताएँ रहस्यवाद के नाम से अभिहित होती हैं। यथा उदाहरणस्वरूप कवि मैथिलीशरण गुप्त की कविता—

अच्छी आँख मिचौनी खेली।
बार-बार तुम छिपो और मैं खोजूँ तुम्हें अकेली॥

(१८) प्रश्न : काव्य में छायावाद की सोदाहरण विशेषताएँ लिखिए।

उत्तर : काव्य में छायावाद की विशेषताएँ—आधुनिक हिन्दी साहित्य के प्रचलित वादों में छायावाद महत्त्वपूर्ण स्थान है। जब कवि अपनी कविताओं के प्रकृति-चित्रण में मानवीकरण करता है तब उस समय की कविताएँ छायावाद के नाम से अभिहित होती हैं। यथा उदाहरणस्वरूप जयशंकर प्रसाद की कविता—

नीरव निशीथ लतिका-सी,

तुम कौन आ रही हो बढ़ती।
कोमल बाहें फैलाये-सी,
आलिंगन का जादू पढ़ती ॥

(१९) प्रश्न : काव्य में प्रगतिवाद की सोदाहरण विशेषताएँ लिखिए।

उत्तर : काव्य में प्रगतिवाद की विशेषताएँ—आधुनिक हिन्दी साहित्य के प्रचलित वादों में प्रगतिवाद का महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह वाद छायावाद के पश्चात् प्रारम्भ हुआ। अतः यह स्पष्ट है कि छायावाद की नींव पर प्रगतिवाद की अट्टालिका निर्मित हुई। इसे दूसरे शब्दों में यह कह सकते हैं कि जब छायावाद का स्वप्निल लोक कवि को आत्मतुष्टि न कर सका, तब जीवन की विषमताओं एवं समाज के उपेक्षित मनुष्यों को अपना विषय बनाकर वह प्रगति के गीत गाने लगा। यथा उदाहरणस्वरूप रामधारीसिंह 'दिनकर' की कविता—

श्वानों को मिलता दूध वस्त्र,
भूखे बालक अकुलाते हैं।
माँ की हड्डी से चिपक ठिठुर,
जाड़े की रात बिताते हैं॥
युवती की लज्जा बसन बेंच,
जब व्याज चुकाये जाते हैं।
मिल मालिक तेल फूलेलों पर,
पानी-सा द्रव्य बहाते हैं॥

(२०) प्रश्न : काव्य (साहित्य) में प्रयोगवाद की सोदाहरण विशेषताएँ लिखिए।

उत्तर : काव्य (साहित्य) में प्रयोगवाद की विशेषताएँ—आधुनिक काव्य (वर्तमान काव्य) के प्रचलित वादों में प्रयोगवाद का महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्रगतिवाद के साथ-साथ जब कवि के मन में यथार्थ की अभिव्यक्ति करने की इच्छा जागृत हुई, तब प्रयोगवाद का अभ्युदय हुआ। इस वाद का श्रेय सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' को है। यथा उदाहरणस्वरूप—

यह दीप अकेला स्नेह भरा।
है गर्व भरा मतमाता, पर—
इसको भी पंक्ति-दे दो॥

❖

तृतीय भाग

अतिलघु प्रश्न तथा उत्तर

(१) प्रश्न : कवि कबीरदास की प्रसिद्ध कृति का नाम लिखिए ।

उत्तर : कवि कबीरदास की प्रसिद्ध कृति का नाम 'कबीर ग्रन्थावली' है ।

(२) प्रश्न : कवि सूरदास की प्रसिद्ध कृति का नाम लिखिए ।

उत्तर : कवि सूरदास की प्रसिद्ध कृति का नाम 'सूरसागर' है ।

(३) प्रश्न : 'विनयपत्रिका' के रचयिता का नाम लिखिए ।

उत्तर : 'विनयपत्रिका' काव्य की रचना गोस्वामी तुलसीदास ने की है ।

(४) प्रश्न : गोस्वामी तुलसीदास की सर्व प्रसिद्ध कृति का नाम लिखिए ।

उत्तर : गोस्वामी तुलसीदास की सर्व प्रसिद्ध कृति का नाम 'रामचरितमानस' है ।

(५) प्रश्न : कवयित्री मीराबाई की प्रसिद्ध रचना का नाम लिखिए ।

उत्तर : कवयित्री मीराबाई की प्रसिद्ध रचना 'मीराबाई पदावली' है ।

(६) प्रश्न : कवि नरोत्तमदास की प्रसिद्ध कृति का नाम लिखिए ।

उत्तर : कवि नरोत्तमदास की प्रसिद्ध कृति 'सुदामाचरित' है ।

(७) प्रश्न : कवि रहीम की प्रसिद्ध रचना का नाम लिखिए ।

उत्तर : कवि रहीम की प्रसिद्ध रचना 'रहीम सतसई' है ।

(८) प्रश्न : कवि रसखान की प्रसिद्ध कृति का नाम लिखिए ।

उत्तर : कवि रसखान की प्रसिद्ध कृति 'सुजान रसखान' है ।

(९) प्रश्न : कवि बिहारीलाल की प्रसिद्ध कृति का नाम लिखिए ।

उत्तर : कवि बिहारीलाल की प्रसिद्ध कृति का नाम 'बिहारी सतसई' है ।

(१०) प्रश्न : कवि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की प्रसिद्ध कृति का नाम लिखिए ।

उत्तर : कवि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की प्रसिद्ध कृति का नाम 'प्रेममाधुरी' है ।

(११) प्रश्न : कवि अयोध्यासिंह उपाध्याय की प्रसिद्ध कृति का नाम लिखिए ।

उत्तर : कवि अयोध्यासिंह उपाध्याय की प्रसिद्ध कृति का नाम 'प्रिय प्रवास' है ।

(१२) प्रश्न : 'यशोधरा' काव्य के रचयिता कवि का नाम लिखिए ।

उत्तर : 'यशोधरा' काव्य के रचयिता कवि का नाम मैथिलीशरण गुप्त है ।

(१३) प्रश्न : कवि मैथिलीशरण गुप्त की प्रसिद्ध कृति का नाम लिखिए ।

उत्तर : कवि मैथिलीशरण गुप्त की प्रसिद्ध कृति का नाम 'साकेत' है ।

(१४) प्रश्न : कवि जयशंकर प्रसाद की प्रसिद्ध कृति का नाम लिखिए ।

उत्तर : कवि जयशंकर प्रसाद की प्रसिद्ध कृति का नाम 'कामायनी' है ।

(१५) प्रश्न : 'झरना' काव्य के रचयिता कवि का नाम लिखिए ।

उत्तर : 'झरना' काव्य के रचयिता कवि का नाम जयशंकर प्रसाद है ।

(१६) प्रश्न : 'कामायनी' काव्य में कितने सर्ग हैं ?

उत्तर : 'कामायनी' काव्य में १८ सर्ग हैं ।

(१७) प्रश्न : कवि सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' की प्रसिद्ध कृति का नाम लिखिए ।

उत्तर : कवि सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' की प्रसिद्ध कृति का नाम 'अपरा' है ।

(१८) प्रश्न : 'गीतिका' काव्य के रचयिता का नाम लिखिए ।

उत्तर : 'गीतिका' काव्य के रचयिता का नाम कवि सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' हैं ।

(१९) प्रश्न : कवि सुमित्रानन्दन पन्त की प्रसिद्ध कृति का नाम लिखिए ।

उत्तर : कवि सुमित्रानन्दन पन्त की प्रसिद्ध कृति का नाम 'युगवाणी' है ।

(२०) प्रश्न : श्रीमती महादेवी वर्मा की प्रसिद्ध कृति का नाम लिखिए ।

उत्तर : कवयित्री श्रीमती महादेवी वर्मा की प्रसिद्ध कृति का नाम 'नीहार' है ।

(२१) प्रश्न : 'दीपशिखा' के रचयिता का नाम लिखिए ।

उत्तर : 'दीपशिखा' की रचयिता कवयित्री श्रीमती महादेवी वर्मा हैं ।

(२२) प्रश्न : कवि रामकुमार वर्मा की प्रसिद्ध कृति का नाम लिखिए ।

उत्तर : कवि रामकुमार वर्मा की प्रसिद्ध कृति का नाम 'चन्द्रकिरन' है ।

(२३) प्रश्न : कवि रामनरेश त्रिपाठी की प्रसिद्ध कृति का नाम लिखिए ।

उत्तर : कवि रामनरेश त्रिपाठी की प्रसिद्ध कृति का नाम 'पथिक' है ।

(२४) प्रश्न : कवि माखनलाल चतुर्वेदी की प्रसिद्ध कृति का नाम लिखिए ।

उत्तर : कवि माखनलाल चतुर्वेदी की प्रसिद्ध कृति का नाम 'हिमतरंगिनी' है ।

(२५) प्रश्न : कवि बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' की प्रसिद्ध कृति का नाम लिखिए ।

उत्तर : कवि बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' की प्रसिद्ध कृति का नाम 'उर्मिला' है ।

(२६) प्रश्न : कवि रामधारी सिंह 'दिनकर' की प्रसिद्ध कृति का नाम लिखिए ।

उत्तर : कवि रामधारी सिंह 'दिनकर' की प्रसिद्ध कृति का नाम 'रश्मिरथी' है।

(२७) प्रश्न : कवयित्री सुभद्राकुमारी चौहान की प्रसिद्ध कृति का नाम लिखिए।

उत्तर : कवयित्री सुभद्राकुमारी चौहान की प्रसिद्ध कृति का नाम 'मुकुल' है।

(२८) प्रश्न : कवि सोहनलाल द्विवेदी की प्रसिद्ध कृति का नाम लिखिए।

उत्तर : कवि सोहनलाल द्विवेदी की प्रसिद्ध कृति का नाम 'जय भारत जय' है।

(२९) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'बीजक' किस कवि की रचना है—

कबीरदास, जायसी, रहीम।

उत्तर : 'बीजक' के रचयिता सन्त कवि कबीरदास हैं।

(३०) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'साहित्य लहरी' किस कवि की रचना है—

तुलसीदास, सूरदास, केशवदास।

उत्तर : 'साहित्य लहरी' के रचयिता कवि सूरदास हैं।

(३१) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'गीतावली' किस कवि की रचना है—

सूरदास, रहीम, तुलसीदास।

उत्तर : 'गीतावली' के रचयिता कवि तुलसीदास हैं।

(३२) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'बरवै रामायण' किस कवि की रचना है—

रहीम, तुलसीदास, केशवदास।

उत्तर : 'बरवै रामायण' के रचयिता कवि तुलसीदास हैं।

(३३) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'पार्वतीमङ्गल' किस कवि की रचना है—

तुलसीदास, रहीम, केशवदास।

उत्तर : 'पार्वतीमङ्गल' के रचयिता कवि 'तुलसीदास' हैं।

(३४) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'सुदामाचरित' किस कवि की रचना है—

सूरदास, रहीम, नरोत्तमदास।

उत्तर : 'सुदामाचरित' के रचयिता कवि नरोत्तमदास हैं।

(३५) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'बरवै नायिका भेद' किस कवि की रचना है—

सूरदास, तुलसीदास, रहीम ।

उत्तर : 'बरवै नायिका भेद' के रचयिता कवि रहीम हैं।

(३६) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'शृंगार सतसई' किस कवि की रचना है—

सूरदास, रहीम, बिहारीलाल ।

उत्तर : 'शृंगार सतसई' के रचयिता कवि रहीम हैं।

(३७) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'प्रिय प्रवास' किस कवि की रचना है—

अयोध्या सिंह उपाध्याय, मैथिली शरण गुप्त, जयशंकर प्रसाद ।

उत्तर : 'प्रिय प्रवास' के रचयिता कवि अयोध्यासिंह उपाध्याय हैं।

(३८) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'वैदेही वनवास' किस कवि की रचना है—

मैथिलीशरण गुप्त, अयोध्यासिंह उपाध्याय, तुलसीदास ।

उत्तर : 'वैदेही वनवास' के रचयिता कवि अयोध्यासिंह उपाध्याय हैं।

(३९) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'साकेत' किस कवि की रचना है—

तुलसीदास, मैथिलीशरण गुप्त, अयोध्यासिंह उपाध्याय ।

उत्तर : 'साकेत' के रचयिता कवि मैथिलीशरण गुप्त हैं।

(४०) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'यशोधरा' किस कवि की रचना है—

तुलसीदास, जयशंकर प्रसाद, मैथिलीशरण गुप्त ।

उत्तर : 'यशोधरा' के रचयिता कवि मैथिलीशरण गुप्त हैं।

(४१) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'पंचवटी' किस कवि की रचना है—

तुलसीदास, जयशंकर प्रसाद, मैथिलीशरण गुप्त ।

उत्तर : 'पंचवटी' के रचयिता कवि मैथिलीशरण गुप्त हैं।

(४२) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'कामायनी' किस कवि की रचना है—

अयोध्यासिंह उपाध्याय, मैथिलीशरण गुप्त, जयशंकर प्रसाद ।
उत्तर : 'कामायनी' के रचयिता कवि जयशंकर प्रसाद हैं।
(४३) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'आँसू' किस कवि की रचना है–
मैथिलीशरण गुप्त, जयशंकर प्रसाद, अयोध्यासिंह ।
उत्तर : 'आँसू' के रचयिता कवि का नाम जयशंकर प्रसाद है।
(४४) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'लहर' किस कवि की रचना है—
मैथिलीशरण गुप्त, अयोध्यासिंह, जयशंकर प्रसाद ।
उत्तर : 'लहर' के रचयिता कवि जयशंकर प्रसाद हैं।
(४५) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'झरना' किस कवि की रचना है—
जयशंकर प्रसाद, अयोध्यासिंह, मैथिलीशरण गुप्त ।
उत्तर : 'झरना' के रचयिता कवि जयशंकर प्रसाद हैं।
(४६) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'गीतिका' किस कवि की रचना है—
तुलसीदास, जयशंकर प्रसाद, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' ।
उत्तर : 'गीतिका' के रचयिता कवि सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' हैं।
(४७) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'परिमल' किस कवि की रचना है—
जयशंकर प्रसाद, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', सुमित्रानन्दन पन्त ।
उत्तर : 'परिमल' के रचयिता कवि सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' हैं।
(४८) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'अपरा' किस कवि की रचना है—
जयशंकर प्रसाद, मैथिलीशरण गुप्त, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' ।
उत्तर : 'अपरा' के रचयिता कवि सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' हैं।
(४९) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'वीणा' किस कवि की रचना है—
जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पन्त, महादेवी वर्मा ।
उत्तर : 'वीणा' के रचयिता कवि सुमित्रानन्दन पन्त हैं।

(५०) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'ग्रन्थि' किस कवि की रचना है—

जयशंकर प्रसाद, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', सुमित्रानन्दन पन्त।

उत्तर : 'ग्रन्थि' के रचयिता कवि का नाम सुमित्रानन्दन पन्त हैं।

(५१) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'युगवाणी' किस कवि की रचना है—

जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पन्त, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'।

उत्तर : 'युगवाणी' के रचयिता कवि सुमित्रानन्दन पन्त हैं।

(५२) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'ग्राम्या' किस कवि की रचना है—

जयशंकर प्रसाद, महादेवी वर्मा, सुमित्रानन्दन पन्त।

उत्तर : 'ग्राम्या' के रचयिता कवि सुमित्रानन्दन पन्त हैं।

(५३) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'नीहार' किस कवि की रचना है—

जयशंकर प्रसाद, महादेवी वर्मा, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'।

उत्तर : 'नीहार' के रचयिता कवयित्री का नाम महादेवी वर्मा है।

(५४) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'रश्मि' किस कवि की रचना है—

महादेवी वर्मा, जयशंकर प्रसाद, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'।

उत्तर : 'रश्मि' के रचयिता कवयित्री महादेवी वर्मा हैं।

(५५) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'नीरजा' किस कवि की रचना है—

जयशंकर प्रसाद, महादेवी वर्मा, रामकुमार वर्मा।

उत्तर : 'नीरजा' के रचयिता कवयित्री महादेवी वर्मा हैं।

(५६) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'हिमकिरीटिनी' किस कवि की रचना है—

महादेवी वर्मा, जयशंकर प्रसाद, माखनलाल चतुर्वेदी।

उत्तर : 'हिम किरीटिनी' के रचयिता कवि माखनलाल चतुर्वेदी हैं।

(५७) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'उर्वशी' किस कवि की रचना है—

जयशंकर प्रसाद, महादेवी वर्मा, रामधारीसिंह 'दिनकर'।

उत्तर : 'उर्वशी' के रचयिता कवि रामधारीसिंह 'दिनकर' हैं।

(५८) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'रश्मिरथी' किस कवि की रचना है—

जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पन्त, रामधारीसिंह 'दिनकर'।

उत्तर : 'रश्मिरथी' के रचयिता कवि रामधारीसिंह 'दिनकर' हैं।

(५९) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'मुकुल' किस कवि की रचना है—

महादेवी वर्मा, सुमित्रानन्दन पन्त, सुभद्राकुमारी चौहान।

उत्तर : 'मुकुल' के रचयिता कवयित्री सुभद्राकुमारी चौहान हैं।

(६०) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'जय भारत जय' किस कवि की रचना है—

सुमित्रानन्दन पन्त, महादेवी वर्मा, सोहनलाल द्विवेदी।

उत्तर : 'जय भारत जय' के रचयिता कवि सोहनलाल द्विवेदी हैं।

(६१) प्रश्न : निम्नलिखित कवियों में 'मधुशाला' किस कवि की रचना है—

हरिवंशराय 'बच्चन', रामकुमार वर्मा, जयशंकर प्रसाद।

उत्तर : 'मधुशाला' के रचयिता कवि हरिवंशराय 'बच्चन' हैं।

❖